“અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્” ગ્રંથ જીર્ણોધ્ધાર ૧૪૦

જૈન સાહિત્ય સંશોધક

વર્ષ-૦૨ – અંક-૩, ૪

: દ્રવ્ય સહાયક :

કચ્છવાગડ દેશોદ્ધારક અધ્યાત્મયોગી
પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી વિજય કલાપૂર્ણસૂરીશ્વરજી મ.સા.ના શિષ્યરત્ન
ગચ્છનાયક પ.પૂ. આચાર્ય શ્રીમદ્વિજય કલાપ્રભસૂરિશ્વરજી મ.સા.ના
આજ્ઞાવર્તિની પૂજ્ય સાધ્વીજી શ્રી વિક્રમેન્દાશ્રીજી ની પ્રેરણાથી
શ્રી માણીભદ્ર એપાર્ટમેન્ટ, સાબરમતી, અમદાવાદના
આરાધક શ્રાવિકાઓની જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી

: સંયોજક :

શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળા
શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-380005
(મો.) 9426585904 (ઓ.) 22132543

સંવત ૨૦૬૮ ઈ.સ. ૨૦૧૨

श्री આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૫ (ઈ. ૨૦૦૯) – સેટ નં-૧

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમાંક	પુસ્તકનું નામ	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
001	श्री नंदीसूत्र अवचूरी	पू. विक्रमसूरिजी म.सा.	238
002	श्री उत्तराध्ययन सूत्र चूर्णी	पू. जिनदासगणि चूर्णीकार	286
003	श्री अर्हद्गीता-भगवद्गीता	पू. मेघविजयजी गणि म.सा.	84
004	श्री अर्हच्चूडामणि सारसटीकः	पू. भद्रबाहुस्वामी म.सा.	18
005	श्री यूक्ति प्रकाशसूत्रं	पू. पद्मसागरजी गणि म.सा.	48
006	श्री मानतुङ्गशास्त्रम्	पू. मानतुंगविजयजी म.सा.	54
007	अपराजितपृच्छा	श्री बी. भट्टाचार्य	810
008	शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्	श्री नंदलाल चुनिलाल सोमपुरा	850
009	शिल्परत्नम् भाग-१	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	322
010	शिल्परत्नम् भाग-२	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	280
011	प्रासादतिलक	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	162
012	काश्यशिल्पम्	श्री विनायक गणेश आपटे	302
013	प्रासादमञ्जरी	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	156
014	राजवल्लभ याने शिल्पशास्त्र	श्री नारायण भारती गोंसाई	352
015	शिल्पदीपक	श्री गंगाधरजी प्रणीत	120
016	वास्तुसार	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	88
017	दीपार्णव उत्तरार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	110
018	જિનપ્રાસાદ માર્તણ્ડ	શ્રી નંદલાલ ચુનીલાલ સોમપુરા	498
019	जैन ग्रंथावली	श्री जैन श्वेताम्बर कोन्फ्रन्स	502
020	હીરકલશ જૈન જ્યોતિષ	શ્રી હિમ્મતરામ મહાશંકર જાની	454
021	न्यायप्रवेशः भाग-१	श्री आनंदशंकर बी. ध्रुव	226
022	दीपार्णव पूर्वार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	640
023	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-१	पू. मुनिचंद्रसूरिजी म.सा.	452
024	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-२	श्री एच. आर. कापडीआ	500
025	प्राकृत व्याकरण भाषांतर सह	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	454

026	**तत्त्पोपप्लवसिंहः**	**श्री जयराशी भट्ट, बी. भट्टाचार्य**	**188**
027	**शक्तिवादादर्शः**	**श्री सुदर्शनाचार्य शास्त्री**	**214**
028	**क्षीरार्णव**	**श्री प्रभाशंकर ओघडभाई**	**414**
029	**वेधवास्तु प्रभाकर**	**श्री प्रभाशंकर ओघडभाई**	**192**
030	**शिल्परत्नाकर**	**श्री नर्मदाशंकर शास्त्री**	**824**
031	**प्रासाद मंडन**	**पं. भगवानदास जैन**	**288**
032	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-१**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**520**
033	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-२**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**578**
034	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-३ (१)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**278**
035	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-3 (२) (३)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**252**
036	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-५**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**324**
037	વાસ્તુનિઘંટુ	પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા	302
038	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૧	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	196
039	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૨	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	190
040	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૩	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	202
041	સપ્તસન્ધાન મહાકાવ્યમ્	પૂ. વિજયઅમૃતસૂરિશ્વરજી	480
042	સપ્તભઙ્ગીમિમાંસા	પૂ. પં. શિવાનન્દવિજયજી	228
043	ન્યાયાવતાર	સતિષચંદ્ર વિદ્યાભૂષણ	60
044	વ્યુત્પત્તિવાદ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	218
045	સામાન્યનિર્યુક્તિ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	190
046	સપ્તભઙ્ગીનયપ્રદીપ બાલબોધિનીવિવૃત્તિઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	138
047	વ્યુત્પત્તિવાદ શાસ્ત્રાર્થકલા ટીકા	શ્રીવેણીમાધવ શાસ્ત્રી	296
048	નયોપદેશ ભાગ-૧ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	210
049	નયોપદેશ ભાગ-૨ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	274
050	ન્યાયસમુચ્ચય	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	286
051	સ્યાદ્યાર્થપ્રકાશઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	216
052	દિન શુદ્ધિ પ્રકરણ	પૂ. દર્શનવિજયજી	532
053	બૃહદ્ ધારણા યંત્ર	પૂ. દર્શનવિજયજી	113
054	જ્યોતિર્મહોદય	સં. પૂ. અક્ષયવિજયજી	112

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૬ (ઈ. ૨૦૧૦) – સેટ નં-૨

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમ	પુસ્તકનું નામ	ભાષા	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
055	श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहद्न्यास अध्याय-६	सं	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	296
056	विविध तीर्थ कल्प	सं	पू. जिनविजयजी म.सा.	160
057	ભારતીય જૈન શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	ગુજ.	पू. पूण्यविजयजी म.सा.	164
058	सिद्धान्तलक्षणगूढार्थ तत्त्वलोकः	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	202
059	व्याप्ति पञ्चक विवृत्ति टीका	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	48
060	જૈન સંગીત રાગમાળા	ગુ.	श्री मांगरोळ जैन संगीत मंडळी	306
061	चतुर्विंशतीप्रबन्ध (प्रबंध कोश)	सं	श्री रसिकलाल एच. कापडीआ	322
062	व्युत्पत्तिवाद आदर्श व्याख्यया संपूर्ण ६ अध्याय	सं	श्री सुदर्शनाचार्य	668
063	चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी	सं	पू. मेघविजयजी गणि	516
064	विवेक विलास	सं/ગુ.	श्री दामोदर गोविंदाचार्य	268
065	पञ्चशती प्रबोध प्रबंध	सं	पू. मृगेन्द्रविजयजी म.सा.	456
066	सन्मतितत्त्वसोपानम्	सं	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	420
067	ઉપદેશમાલા દોઘટ્ટી ટીકા ગુર્જરાનુવાદ	ગુજ.	पू. हेमसागरसूरिजी म.सा.	638
068	मोहराजापराजयम्	सं	पू. चतुरविजयजी म.सा.	192
069	क्रियाकोश	सं/हिं	श्री मोहनलाल बांठिया	428
070	कालिकाचार्यकथासंग्रह	सं/ગુ.	श्री अंबालाल प्रेमचंद	406
071	सामान्यनिरुक्ति चंद्रकला कलाविलास टीका	सं.	श्री वामाचरण भट्टाचार्य	308
072	जन्मसमुद्रजातक	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	128
073	मेघमहोदय वर्षप्रबोध	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	532
074	જૈન સામુદ્રિકનાં પાંચ ગ્રંથો	ગુજ.	श्री हिम्मतराम महाशंकर जानी	376

075	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૧	ગુજ.	**श्री साराभाई नवाब**	**374**
076	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૨	ગુજ.	**श्री साराभाई नवाब**	**238**
077	સંગીત નાટ્ય રૂપાવલી	ગુજ.	**श्री विद्या साराभाई नवाब**	**194**
078	ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેનું શિલ્પસ્થાપત્ય	ગુજ.	**श्री साराभाई नवाब**	**192**
079	શિલ્પ ચિન્તામણિ ભાગ-૧	ગુજ.	**श्री मनसुखलाल भुदरमल**	**254**
080	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૧	ગુજ.	**श्री जगन्नाथ अंबाराम**	**260**
081	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૨	ગુજ.	**श्री जगन्नाथ अंबाराम**	**238**
082	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૩	ગુજ.	**श्री जगन्नाथ अंबाराम**	**260**
083	આયુર્વેદના અનુભૂત પ્રયોગો ભાગ-૧	ગુજ.	**पू. कान्तिसागरजी**	**114**
084	કલ્યાણ કારક	ગુજ.	**श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री**	**910**
085	**विश्वलोचन कोश**	**सं./हिं**	**श्री नंदलाल शर्मा**	**436**
086	કથા રત્ન કોશ ભાગ-1	ગુજ.	**श्री बेचरदास जीवराज दोशी**	**336**
087	કથા રત્ન કોશ ભાગ-2	ગુજ.	**श्री बेचरदास जीवराज दोशी**	**230**
088	હસ્તસઞ્જીવનમ્	સં.	**पू. मेघविजयजीगणि**	**322**
089	એન્દ્રચતુર્વિંશતિકા	સં.	**पू.यशोविजयजी, पू. पुण्यविजयजी**	**114**
090	સમ્મતિ તર્ક મહાર્ણવાવતારિકા	સં.	**आचार्य श्री विजयदर्शनसूरिजी**	**560**

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६७ (ई. 2011) सेट नं.-३

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची। *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / टीकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
91	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-१	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	272
92	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-२	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	240
93	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-३	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	254
94	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-४	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	282
95	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-५	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	118
96	पवित्र कल्पसूत्र	पुण्यविजयजी	सं./अं	साराभाई नवाब	466
97	समराङ्गण सूत्रधार भाग-१	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	342
98	समराङ्गण सूत्रधार भाग-२	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	362
99	भुवनदीपक	पद्मप्रभसूरिजी	सं.	वेंकटेश प्रेस	134
100	गाथासहस्त्री	समयसुंदरजी	सं.	सुखलालजी	70
101	भारतीय प्राचीन लिपीमाला	गौरीशंकर ओझा	हिन्दी	मुन्शीराम मनोहरराम	316
102	शब्दरत्नाकर	साधुसुन्दरजी	सं.	हरगोविन्ददास बेचरदास	224
103	सुबोधवाणी प्रकाश	न्यायविजयजी	सं./गु	हेमचंद्राचार्य जैन सभा	612
104	लघु प्रबंध संग्रह	जयंत पी. ठाकर	सं.	ओरीएन्ट इन्स्टीट्युट बरोडा	307
105	जैन स्तोत्र संचय-१-२-३	माणिक्यसागरसूरिजी	सं,	आगमोद्धारक सभा	250
106	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-१,२,३	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	514
107	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-४,५	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	454
108	न्यायसार – न्यायतात्पर्यदीपिका	सतिषचंद्र विद्याभूषण	सं.	एसियाटीक सोसायटी	354
109	जैन लेख संग्रह भाग-१	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	337
110	जैन लेख संग्रह भाग-२	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	354
111	जैन लेख संग्रह भाग-३	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	372
112	जैन धातु प्रतिमा लेख भाग-१	कांतिविजयजी	सं./हि	जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार	142
113	जैन प्रतिमा लेख संग्रह	दौलतसिंह लोढा	सं./हि	अरविन्द धामणिया	336
114	राधनपुर प्रतिमा लेख संदोह	विशालविजयजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	364
115	प्राचिन लेख संग्रह-१	विजयधर्मसूरिजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	218
116	बीकानेर जैन लेख संग्रह	अगरचंद नाहटा	सं./हि	नाहटा ब्रधर्स	656
117	प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग-१	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	122
118	प्राचिन जैन लेख संग्रह भाग-२	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	764
119	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-१	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
120	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-२	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
121	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-३	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	540
122	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-१	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	274
123	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-४	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	414
124	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-५	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	400
125	कलेक्शन ऑफ प्राकृत एन्ड संस्कृत इन्स्क्रीप्शन्स	पी. पीटरसन	अं.	भावनगर आर्चीऑलॉजीकल डिपा.	320
126	विजयदेव माहात्म्यम्	जिनविजयजी	सं.	जैन सत्य संशोधक	148

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६८ (ई. 2012) सेट नं.-४

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची । *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं ।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	भाषा	प्रकाशक	पृष्ठ
127	महाप्रभाविक नवस्मरण	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	754
128	जैन चित्र कल्पलता	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	84
129	जैन धर्मनो प्राचीन इतिहास भाग-२	हीरालाल हंसराज	गुज.	हीरालाल हंसराज	194
130	ओपरेशन इन सर्च ओफ सं. मेन्यु. भाग-६	पी. पीटरसन	अंग्रेजी	एशियाटीक सोसायटी	171
131	जैन गणित विचार	कुंवरजी आणंदजी	गुज.	जैन धर्म प्रसारक सभा	90
132	दैवज्ञ कामधेनु (प्राचिन ज्योतिष ग्रंथ)	शील खंड	सं.	ब्रज. बी. दास बनारस	310
133	करण प्रकाश	ब्रह्मदेव	सं./अं.	सुधाकर द्विवेदि	276
134	न्यायविशारद महो. यशोविजयजी स्वहस्तलिखित कृति संग्रह	यशोदेवसूरिजी	गुज.	यशोभारती प्रकाशन	69
135	भौगोलिक कोश-१	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	100
136	भौगोलिक कोश-२	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	136
137	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	266
138	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	244
139	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	274
140	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	168
141	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	282
142	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	182
143	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-१	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	384
144	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-२	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	376
145	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-३	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	387
146	भास्वति	शतानंद मारछता	सं./हि	एच.बी. गुप्ता एन्ड सन्स बनारस	174
147	जैन सिद्धांत कौमुदी (अर्धमागधी व्याकरण)	रत्नचंद्र स्वामी	प्रा./सं.	भैरोदान सेठीया	320
148	मंत्रराज गुणकल्प महोदधि	जयदयाल शर्मा	हिन्दी	जयदयाल शर्मा	286
149	फक्कीका रत्नमंजूषा-१, २	कनकलाल ठाकूर	सं.	हरिकृष्ण निबंध	272
150	अनुभूत सिद्ध विशायंत्र (छ कल्प संग्रह)	मेघविजयजी	सं./गुज	महावीर ग्रंथमाळा	142
151	सारावलि	कल्याण वर्धन	सं.	पांडुरंग जीवाजी	260
152	ज्योतिष सिद्धांत संग्रह	विश्वेश्वरप्रसाद द्विवेदी	सं.	ब्रीजभूषणदास बनारस	232
153	ज्ञान प्रदीपिका तथा सामुद्रिक शास्त्रम्	रामव्यास पान्डेय	सं.	जैन सिद्धांत भवन	160
	नूतन संकलन				
१	आ. चंद्रसागरसूरिजी ज्ञानभंडार – उज्जैन	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	
२	श्री गुजराती श्वे.मू. जैन संघ-हस्तप्रत भंडार – कलकत्ता	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	

संरक्षक—श्रीयुत सेठ हरगोविंददास रामजी शाह-मुंबई.

खंड २] [अंक ३-४

जैन साहित्य संशोधक

(जैन इतिहास, साहित्य, तत्त्वज्ञान आदि विषयक सचित्र पत्र)

संपादक—

श्रीजिनविजय (एम्. आर्. ए. एस्.)

विषयानुक्रमणिका

१ महाकवि पुष्पदन्तके समयपर विचार;
लें० श्रीयुत बाबू हीरालालजी जैन एम्. ए. एल् एल् बी.
२ कविवर समयसुन्दर; लें० श्रीयुत मोहनलाल दलीचंद देसाई बी. ए. एल्एल्. बी.
३ पुरातत्त्व संशोधननो पूर्व इतिहास-संपादकीय
४ वैशालिना गणसत्ताक राज्यनो नायक राजा चेटक-संपादकीय.

परिशिष्ट.

१ मेरुतुंगाचार्य विरचित विचारश्रेणिः (संस्कृत)
२ केवलिभुक्ति स्त्रीमुक्ति प्रकरणम् श्रीमत्-शाकटायनाचार्यविरचितम्
(अतिदुर्लभ्य संस्कृत प्रकरण)
३ जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण विरचित-जीतकल्पसूत्र मूलमात्र (प्राकृत)

प्रकाशक—

जैन साहित्य संशोधक कार्यालय.

ठि. भारत जैन विद्यालय-पूना शहर.

ज्येष्ठ. विक्रम सं. १९८१] महावीर नि. सं. २४५१ [मे, सन् १९२५

जैन साहित्य संशोधक

ना

संरक्षक

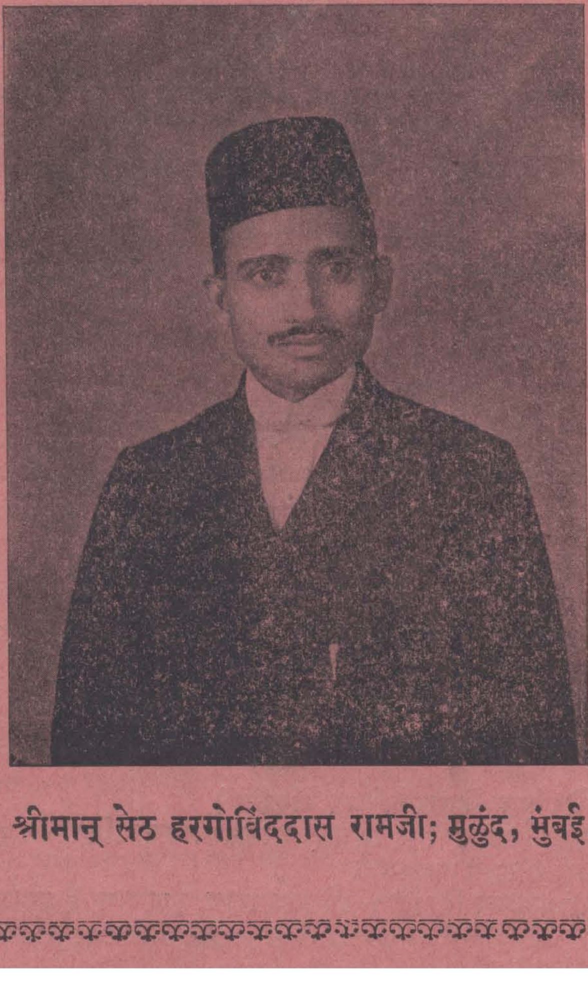

श्रीमान् सेठ हरगोविंददास रामजी; मुलुंद, मुंबई.

प्रकाशकः—शा. चिमनलाल लखमीचंद; जैन साहित्य संशोधक कार्यालय—
भारत जैन विद्यालय, पूना सीटी।

मुद्रकः—टाईटल अने निवेदन विगेरे छापनार—लक्ष्मण भाऊराव कोकाटे,
हनुमान छापखाना, पुणें; तथा गूजराती लखाण छापनार, प्राणजीवन विश्वनाथ पाठक,
आदित्यमुद्रणालय, रायखड, अमदाबाद।

Aho ! Shrutgyanam

आवश्यक सूचना.

जैन साहित्य संशोधकनी आन्तरिक अने बाह्य व्यवस्थामां खास केटलाक सुधारा वधारा करवामां आवनार छे अने हवे पछी आ पत्र वधारे नियमित अने व्यवस्थित रूपे प्रकट थाय तेवी स्थायी योजना करवामां आवनार छे. तेथी ए बधी व्यवस्थानो सुप्रबन्ध थई रह्या पछी ज हवे त्रीजा खंडनो प्रारंभ करवामां आवशे अने तेनी विशेष सूचना जाहेर पत्रक द्वारा सर्वने विदित करवामां आवशे. माटे त्रीजा खंडना नवीन ग्राहक थवानी अगर चालु रहेवानी जे सज्जनोनी इच्छा होय तेमणे ए सूचना मळ्या पछी ज कार्यालय साथे पत्रव्यवहार करवा निवेदन छे.

—जिन विजय।

आ पछीना पानावाळुं मजकूर सौथी प्रथम अने अवश्य वांचशो.

Aho ! Shrutgyanam

संपादकीय निवेदन

बीजा खंडनो बीजो अंक ज्यारे गया वर्षना ज्येष्ठ मासमां प्रकट थयो हतो त्यारे त्रीजा अंकनुं पण केटलुंक मुद्रण थई चुक्युं हतुं अने ते पछी थोडा ज समयमां ते प्रकट करी शकाशे एवी आशा रहेती हती तेथी तेवी सूचना पण ए बीजा अंकना मुखपृष्ठ उपर आपी देवामां आवी हती। पण धार्या प्रमाणे तेमांनुं कशुं थयुं नहि। अनेक आन्तर-बाह्य अगवडोना सबबे लगभग आखा वर्ष जेटलो लांबो समय व्यतीत थई गयो–पण ए अंक ग्राहकोने पहोंचाडी शकायो नहि। छेवटे आजे त्रीजो अने चोथो–एम बंने अंको एक साथे ज रवाना करवानो प्रसंग प्राप्त थयो छे। नियतरीते काम करी शकवानी अगवडनो विचार करतां मारी जातने तो एथी पण कांईक आश्वासन मळे छे अने आम विलंबे-पण आजे बीजा खंडना ग्राहकोना ऋणमांथी मुक्त थवानो जे अवसर मने मळे छे ते जाणी मारा दिलनो भार कांईक हलको थाय छे।

जैन साहित्य संशोधकना ग्राहकोनी संख्या आजे घणी ओछी छे। एटली बधी ओछी छे के तेनी पासेथी आवता वार्षिक-मूल्यवडे मात्र एक अंकनो प्रेसचार्ज पण पूरो थई शकतो नथी। एटली ओछी संख्याना आधारे सामान्य प्रकारनुं मासिक पत्र पण चलाववानो कोई उद्योग न करे तो पछी आ प्रकारना प्रौढ, दलदार, अने खूब खर्चाळ पत्रना प्रकाशननो तो मनोरथ पण कोण करी शके। वस्तुस्थिति आवी होवा छतां पण आजे आ पत्र जे बीजा खण्डनी समाप्तिनी सीमाए पहुंचे छे तेनुं कारण फक्त एना पोषक, पालक, के संरक्षक,–जे कहूं ते–भाई **श्रीहरगोविंददास रामजीनी** निष्काम दानशीलता अने बहुजन-दुर्लभ सात्त्विक सज्जनता छे। ए समानशील बन्धुनी सौहार्द-पूर्ण प्रेरणा अने विकल्प-वगरनी द्रव्यसहायताना प्रतापे ज आ पत्रे जन्म धारण कर्युं छे अने मात्र एक अनियमितताना रोगने छोडीने बाकी बधी सुंदर रीते बे वर्षनुं कीर्तिवन्त अने आकर्षक जीवन पसार कर्युं छे.

* * * * * *

सामान्यरीते आ प्रकारना उच्चकोटिना पत्रोना वाचको अने ग्राहको सर्वत्र ओछा ज होय छे; तेमां वळी आ पत्र तो एक अल्प संख्यक समाजवाळा धर्मना तात्त्विक विषयोने अनुलक्षीने ज खास पोतानुं कार्यक्षेत्र खेडतुं होवाथी, एना ग्राहकोनी संख्या-बहुलतानी आशा राखवानुं तो कशुं ज प्रलोभन न होई शके। छतां आ पत्रने पोताना निर्वाह-पुरता प्रबन्धनी तो समाज पासे आशा राखवानो हक्क होय ज–अने ते आशा पूरी करवी ए समाजनुं पण कर्तव्य होय ज। परंतु अद्यापि ए आशा पूरी थई नथी। एमां कांईक दोष आ कार्यालयनो पण खास छे; ए मारे प्रथम ज कबूल करवुं जोईए। कारण के एक तो पत्र नियमित रीते समय ऊपर प्रकट थतुं नथी अने बीजुं, ग्राहको तरफथी आवता पत्रो विगेरेनो यथा समय संतोष कारक उत्तर विगेरे आपी शकातो नथी। आवा प्रबन्ध-शैथिल्यना लीधे घणा खरा जिज्ञासु ग्राहकोने निराशा थाय अने तेथी तेओ कंटाळी ग्राहक–श्रेणिमांथी पोतानुं नाम बातल करावे एमां तेमनो जराए दोष काढी न शकाय।

* * * * * *

कार्यालय उपर आवता पत्रो अने प्रत्यक्ष थती मुलाखातो उपरथी मने ए तो चोकस खात्री थई छे के अत्यारे जे अल्पस्वल्प ग्राहक वर्ग आ पत्रनो रहेलो छे तेनो पत्र उपर खूब प्रेम छे अने पत्रने नियमित समये मेळववा अने वांचवा ते अति उत्सुक रहे छे। ए उत्सुकताना परिणामे घणा बन्धुओ तो अनेक प्रकारना उपालंभ भरेला पत्रो पण मारी उपर मोकली पोतानो पत्र उपरनो विशिष्ट अनुराग व्यक्त करे छे। हुं आ स्थळे ए

Aho ! Shrutgyanam

बधा बन्धुओना अनुरागनो उपकार मानुं अने तेनी साथे तेमनी जे प्रशंसनीय जिज्ञासाने संतोषी शकतो नथी ते माटे क्षमा पण मांगु; ए ज अत्यारे तो मारा माटे उचित कर्तव्य छे ।

कार्यालयना प्रबन्धमां आ जातनी जे शिथिलता छे तेनुं कारण पण मारे ग्राहको आगळ प्रकट करी देवानी फरज रहे छे । ए शिथिलता होवानुं कारण कोई जातनो प्रमाद नहि पण सहायकनो जे अभाव छे, ते ज छे । घणा खरा बन्धुओ तो जाणता ज हशे के छेल्ला ३–४ वर्षथी मारुं कार्यक्षेत्र पूना अने अमदाबाद एम बे दूरवर्ती स्थळोमां समान भागे व्हेंचाई गएलुं छे । पूनानुं **भारत-जैन-विद्यालय** जेम मारी समग्र सेवानी अपेक्षा राखे छे तेम अमदाबादनुं **गूजरात-पुरातत्त्व-मंदिर** पण समग्र सेवा मांगे छे । तेमांथी ए बंने स्थळे वर्षनो लगभग अडधो अडधो भाग रही हुं मारी अल्पशक्ति प्रमाणे ए बंने संस्थाओनी अडधी सेवा बजावी रह्यो छुं। आम आ संस्थाओना प्रबन्धमां ज हाल मारो समय मुख्यरीते व्यतीत थतो होवाथी जैन-साहित्य-संशोधकना प्रबन्धमाटे हुं वधारे समय काढी शकतो नथी अने तेथी ज उपर जणाव्या प्रमाणे एना कार्यमां अनियमितता अने अव्यवस्था थई रही छे ।

पत्रनुं दळ घणुं मोटुं-आखुं जाणे एक पुस्तक होय तेटलुं मोटुं-होवाथी छपावतां ज घणो वखत वह्यो जाय छे। जो कोई छापखानुं नियमितरीते काम आपे अने तेवी ज रीते तेने पाछुं तपासीने तरत मोकलवामां आवे तो ज मांड मांड त्रण महिने एक अंक पूरो छपाय । पण मारी तो स्थिति पूना अने अमदाबाद वच्चे घडियाळना लोलकनी जेम महिने बब्बे महिने फरती रहे छे; तेथी महिनामां थई शके तेटलुं काम त्रण महिने पण थई शकतुं नथी अने तेमां प्रेसवाळाओनी अनियमितता जे हेरान करे छे ते तो वळी बाकी ज रहे छे । उदाहरण तरीके–आ अंकनो केटलोक भाग पूनामां छपाया बाद बाकीनो भाग अमदाबाद छपाववो शुरु कर्यो त्यारे, प्रेसवाळाना कथन उपर आधार राखी, गई होळी पहेलां ज ग्राहकोना हाथमां आ अंको पहोंचता करी देवानी इच्छाए पूनामां छपाएलो बधो भाग रेल्वे पार्सलथी अमदाबाद मंगाववामां आव्यो । पण ते प्रेस, कह्या प्रमाणे होळी सुधी काम पूरुं करी शक्यो नहि अने समय थए अमदाबाद छोडी मारे पूना आववुं थयुं। एटले फरी ते बधुं काम पाछुं पूना आव्युं अने फाल्गुणना बदले आम ठेठ वैशाखमां आ अंक बहार पाडी शकायो । आवी एकंदर परिस्थिति छे ।

* * * * * *

सने १९२० ना जान्युआरी मासमां पहेला खंडनो प्रथम अंक छपाववो शुरु थयो हतो अने ते वर्षना एप्रील मासमां ए अंक प्रकट थयो हतो । आजे १९२५ ना एप्रीलमां आ बीजा खंडनो ४ थो अंक प्रकट थाय छे–एटले लगभग पांच वर्षमां बे खंडो बहार पडया एम कही शकाय ।

* * * * * *

आ जातना साहित्य विषयक पत्रो सामान्यरीते बधा ज अनियमित के अर्ध-नियमित होय छे। इन्डियन् एंटीक्वेरी जेवा बहु-साधन-संपन्न मासिक पत्रो पण घणी वखते ६–८ महिना जेटली 'लेइट' थई जाय छे तो पछी बीजाओ थाय तेमां तो नवाई ज शी । वळी आवा पत्रोना लेखो केटला बधा परिश्रमे तैयार थाय छे तेनी पण साधारण वाचकने तो कल्पना सुधां आववी कठिन । एक एक लेख वर्षोना अभ्यासना परिणामे तैयार थई शके छे । दश पन्धर पंक्तिओना लखाण माटे घणी वखते आखी लाईब्रेरियो खोळी काढवी पडे छे । एक एक पंक्तिना टांचण माटे काम पडे तो सो–पचास रुपियानां पुस्तको खरीदवां पडे छे । केटलीक वखते महिनाओनी महेनते तैयार करेला लेखो एक आध दुष्प्राप्य पुस्तकना प्रमाण माटे वर्षो सुधी आमना आम फाईलोमां बांधी राखवा पडे छे । एटले आटली बधी महेनते तैयार थतां पत्रो के पुस्तको समयनी मर्यादाने ताबे जो न रही शके तो तेमां कांई मोटो

Aho ! Shrutgyanam

दोष न गणाय । तेम ज एवा पत्रोनो कोई खास वर्तमान समाचारनी साथे संबंध होतो नथी जेथी महिना—बे—महिना आगळ—पाछळ थतां तेमांनुं लखाण उतरी गएलुं के वासी थई गएलुं मनाय । मतलब के आवा पत्रो ग्राहकोनी साथे समयनी दृष्टिए बंधाएला होता नथी; ए वात पण लक्ष्य-बहार न रहेवी जोईए । तेम छतां जैन-साहित्य संशोधकनी चालू अनियमितततानो हुं आथी बचाव करवा नथी मांगतो, कारण के आनी अनियमितता, ते, अनियमितततानी व्याख्या करतां घणी वधारे पडती थई गई छे, ए मारे स्पष्ट कबूल करवुं ज जोईए ।

* * * * * *

अस्तु । आम अनियमितताना चीलामां जेम तेम गबडतुं आ पत्रनुं रगसियुं गाडुं आजे बीजा खण्डना छेल्ले नाके आवी पहोंच्युं छे अने तेम थवाथी ग्राहकोनी साथे थएला करारमांथी कार्यालय मुक्त थाय छे । हवे प्रश्न मात्र भविष्यना विचारनो छे । जेम वाचकोने पत्रनी अनियमितता खटके छे तेम मने अने मारा साहित्यप्रिय स्नेहिओने पण ते खूब खटके छे । आवी रीते वर्षे दोढ वर्षे जेम तेम एक अंक प्रकट थाय तेना करतां तो एने सर्वथा बन्ध करी देवुं सारुं; एवी पण केटलाक मित्रोनी सलाह मळ्या करे छे । पण ए सलाह मने जरा कडवी लाग्यां करे छे । कारण के मारी मनोवृत्तिनुं मुख्य वळण प्रारंभथी ज जैन साहित्यनी सेवा तरफ वळेलुं होवाथी, ए सेवाना एक मुख्य साधन रूप आ पत्रने सर्वथा बन्ध करी देवानी कल्पना मने आघात कारक लागे ए स्वाभाविक छे । तेथी पत्रने चालू राखवुं ए तो मारी प्रबल इच्छा छे ज । परंतु त्रीजा खंडनो प्रारंभ हवे त्यारे ज कराशे ज्यारे अत्यार सुधी अनुभवाती अव्यवस्था अने अगवडतानो कोईक संतोष कारक निकाल आवशे । आशा तो रहे छे के ए समय पण जल्दी ज प्राप्त थशे ।

वैशाख—सं. १९८१.
भारत जैन विद्यालय, पूना सीटी.

—संपादक

———

Aho ! Shrutgyanam

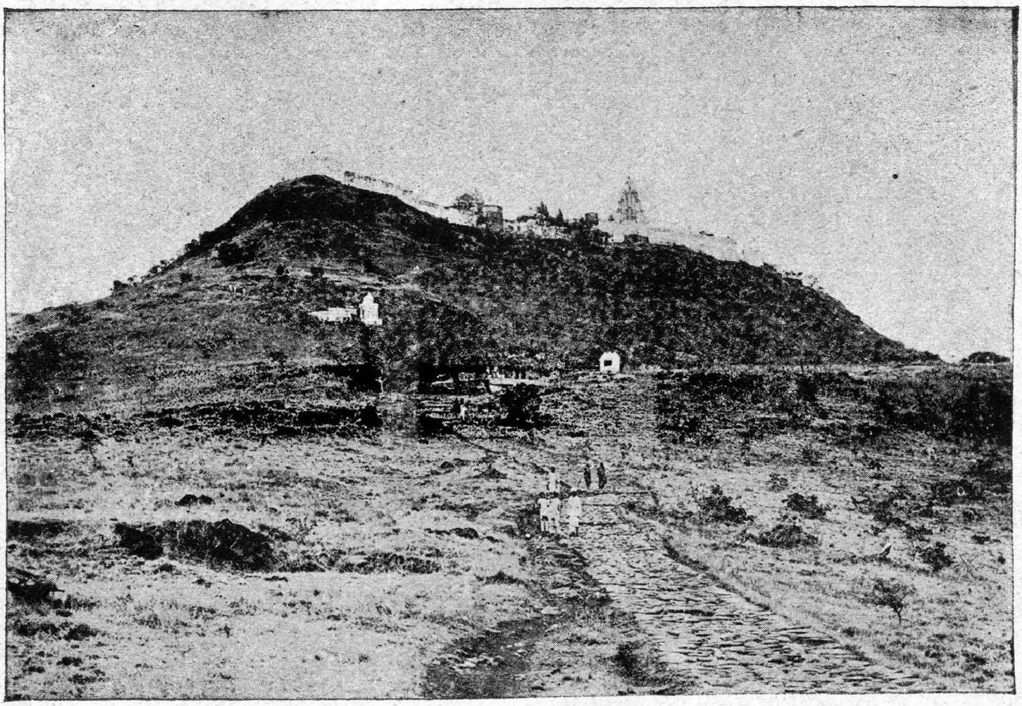

सिद्धक्षेत्र शत्रुञ्जय गिरि

Aho ! Shrutgyanam

॥ अर्हम् ॥
॥ नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ॥

जैन साहित्य संशोधक

'पुरिसा ! सच्चमेव समभिजाणाहि । सच्चस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ । '
' जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ; जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ । '
' दिट्ठं, सुयं, मयं, विण्णायं जं एत्थ परिकहिज्जइ । '
—निर्ग्रन्थप्रवचन-आचारांगसूत्र ।

खंड २] [अंक ३

महाकवि पुष्पदन्त के समय पर विचार ।

[लेखक—बाबू हिरालालजी जैन एम्० ए०, एल्एल्० बी० ।]

अपभ्रंश भाषा के इन जैन महाकवि का परिचय पाठक श्रीयुक्त नाथूरामजी प्रेमी के एक लेख से पाचुके हैं।[1] कवि के बनाये हुए 'महापुराण' और 'यशोधर चरित' से कर्त्ता के सम्बन्ध में जो कुछ विदित होसका है वह प्रेमीजी ने उक्त लेख में दे दिया है। कवि के बनाये हुए 'नागकुमार चरित' नामक एक और काव्य का उल्लेख उक्त लेख में आया है, पर लेख लिखते समय तक प्रेमीजी को उसकी कोई प्रति देखने नहीं मिल सकी थी। हाल में मुझे कारंजा (बरार) के शास्त्रभंडारों को देखन का अवसर मिला। वहां के बलात्कार गण मन्दिर में पुष्पदन्त कवि के 'महापुराण' और 'यशोधर चरित' के अतिरिक्त 'नागकुमार चरित' की दो प्रतियां विद्यमान हैं। एक संवत् १५५६, चैत्र शुक्ल १, शनिवार की लिखी हुई १३६ पत्रों की है, व दूसरी ८८ पत्रों की है, जिसमें लिखने का संवत् नही पाया गया, पर देखने से यह प्रथम प्रति से कुछ पीछे की जान पडती है। ग्रंथ ९ संधि अर्थात् परिच्छेदों में समाप्त हुआ है। इसके भी आदि और अंत में कविने अपना कुछ परिचय दिया है। अपने पिता 'केशवभट्ट' व माता 'मुग्धादेवी'

१ 'जैन साहित्य संशोधक,' खण्ड २, अंक १, पृष्ठ ५७–८०.

Aho ! Shrutgyanam

अपने आश्रयदाता भरत के पुत्र 'नन्न' व उनके 'कौण्डिन्य' गोत्र और अपने 'ब्राह्मणकुल' व 'काश्यप गोत्र'; का कविने यहां भी उल्लेख किया है। एक पद्य से कुछ ऐसा भाव निकलता है कि कवि पहले शिवभक्त थे, पर पीछे 'गुरु' के वचनामृत-पान से जिनभक्त हो गये थे[2]। उक्त दोनों प्रतियों में 'गुरु' पर 'दिगम्बर' ऐसा टिप्पण दिया हुआ है, जिससे विदित होता है कि किसी दिगम्बर मुनि के उपदेश से वे शैव धर्म को छोड जिन धर्मावलम्बी हुए थे। अपने आश्रयदाता 'नन्न' की माता भरतमंत्री[3] की भार्या का नाम कविने 'कुंदव्वा'[4] दिया है। जिस प्रकार भरत के अनुरोध से उन्होंने महापुराण की रचना की थी, उसी प्रकार 'नागकुमार चरित' उन्होंने 'नन्न' की प्रार्थना से रचा। उनके दो शिष्य 'गुणंध(व)र्म' और 'शोभन'[5] व अन्य दो सज्जन 'नाइल्ल' और 'शीलभट्ट'ने भी इस रचना के लिये कवि को प्रेरणा की। ग्रंथ के आदि और अंत में कविने नन्न की खूब प्रशंसा की है।

साहित्य-क्षेत्र में पुष्पदन्त की खूब ख्याति रही है। उनका उल्लेख बहुतसे कवियोंने किया है। 'कनकामर' कविने अपने करकण्डु चरित में उन्हें 'वाएसरि घरु' (वागेश्वरी गृह) कहा है, यथाः-

'जयएव सयंभु विसाल चित्तु। वाएसरिघरु सिरि पुप्फयंतु॥'

सोमकीर्ति अपने 'यशोधर चरित' (संपूर्ण हुआ वि० सं० १५३६) में कहते हैं:—

यत्प्रोक्तं हरिषेणाद्यैः पुष्पदन्त पुरःसरैः।
श्रीमद्वासवसेनाद्यैः शास्त्रस्यार्णवपारगैः॥
तच्चरित्रं मया नूनं बालेन शक्यते कथम्।
बाहुभ्यां सागरं घोरं केनापि तरितुं यथा॥

सोलहवीं शताब्दि के एक और अपभ्रंश भाषा के कवि 'सिंहसेन' अपने आदिपुराण में पुष्पदन्त को स्मरण करते हैं:—

पुणु वि सयंभु महाकइ जायउ। चउमुह पुप्फयंतु विक्खायउ॥

यहां हम पुष्पदन्त कवि के समय पर विचार करेंगे। महापुराण में पुष्पदन्त ने जिन आचार्यों व कवियों का उल्लेख किया है उन में 'अकलंक' 'वीरसेन' और 'जिनसेन' सबसे पीछे के विदित होते हैं। 'राज वार्त्तिक' आदि ग्रंथों के कर्त्ता प्रसिद्ध तार्किक अकलंक राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज के समय में हुए हैं जिन्हों ने शक संवत् ६७५ से ६९७ तक राज्य किया[6]। जयधवल सिद्धान्त को वीरसेनीया टीका के पूर्व भाग को वीरसेन स्वामी ने जयतुंग देव के समय में रचा था और उसी के उत्तर भाग को उन के शिष्य जिनसेन ने शक सं० ७५९ में अमोघवर्ष नृप के

---

२ 'सिवभत्ताइमि जिण सण्णासे। वेविमयाइ दुरियणिण्णासे।
बंभणाइ कासवरिसि गोत्तइं। 'गुरु' वयणामय पूरिय सोत्तइं। (अवतरण देखिये)

३ शक सं. १०६० में 'होयसाला नरेश' 'विष्णुवर्धन' के एक मंत्री का नाम भी 'भरत' था। वह जैन धर्मावलम्बी व माघनन्दि आचार्य का शिष्य था। (Repertoire D'Epigraphic Jaina by Guerinot p. 13, Ins. No. 307-308).

४ 'कुंदव्वागब्भसमुब्भवस्स'। राष्ट्रकूटवंशी प्रसिद्ध नरेश महाराज अमोघवर्ष की रानी का नाम 'कन्दक देवी' था। ये 'कन्दक देवी' चेदि नृप 'युवराज' की राज कन्या थी।

(Studies in South Indian Jainism)

५ सम्भवतः ये दोनों भरत के सात पुत्रों में से थे। (देखो प्रेमीजी का लेख)

६ देखो 'जैनहितैषी' भाग ११, अंक ७-८ पृ. ४२७-४२९

Aho ! Shrutgyanam

समय में समाप्त किया था[7]। जयधवल सिद्धान्त का भी उल्लेख पुष्पदन्त ने अपने काव्य में किया है। अतः अकलंक, वीरसेन, जिनसेन व जयधवल सिद्धान्त का उल्लेख करनेवाले कवि को शक सं० ७५९ से पीछे होना चाहिये।

अब हमें देखना चाहिये कि क्या कोई अन्य बातें भी पुष्पदन्त के काव्यों में ऐसी हैं जो उन के समय-निर्णय में सहायक हो सकती हों। आदिपुराण की उत्थानिका से विदित होता है कि कवि ने उस की रचना मान्यखेटपुर में आकर की थी और उस समय वहां 'तुडिगु' नाम के राजा राज्य करते थे जिन्होंने चोड़ राजा का मस्तक काटा था[8]। 'मान्यखेट' निजाम हैदराबाद के राज्यान्तर्गत आधुनिक 'मलखेड़' का ही प्राचीन नाम है। अनुमान होता है कि कवि के समय में वह चोड़ मंडल को जीतनेवाले किसी प्रतापी नरेश की राजधानी थी। पर जब हम इतिहास के सफे उलटते हैं तो शक सं० ७३७ से पूर्व मान्यखेट का कोई पता नहीं चलता। जान पड़ता है कि उक्त समय तक वह कोई प्रसिद्ध नगर नहीं था। उस के आसपास का प्रदेश चालुक्य राज्य के अंतर्गत था, जिस की राजधानी नासिक के निकट 'वातापि' या 'वादामि' नगरी थी। चालुक्य वंश की इतिश्री शक सं० ६७५ में राष्ट्रकूट वंश के राजा 'दन्तिदुर्ग' द्वारा हुई; और उन-के वंशज महाराज अमोघवर्ष ने शक सं० ७३७ (सन् ८१५) में अपनी राजधानी 'मान्यखेट' में प्रतिष्ठित की। इसी समय से यह नगर इतिहास में प्रसिद्ध हुआ है[9]।

अब हमें यह खोज करना चाहिये कि क्या 'तुडिगु' नाम के यहां कोई राजा हुए हैं? महापुराण में अन्य कई स्थानों पर पुष्पदन्त ने इसी राजा का उल्लेख 'शुभतुंगदेव' और 'भैरव-नरेन्द्र' के नाम से किया है और 'यशोधरचरित' व 'नागकुमारचरित' में राजा का नाम 'वल्लभराय' पाया जाता है। जहां २ इन नामों में से किसी का भी उल्लेख आया है वहां टिप्पणकार ने उस पर 'कृष्णराज' ऐसा टिप्पण दिया है। इस पर से यही अनुमान किया जा सकता है, जैसा कि प्रेमीजी ने कहा है, कि 'तुड़िगु' 'शुभतुंगदेव' 'भैरवनरेन्द्र,' 'वल्लभराय' और 'कृष्णराज' ये पांचों किसी एक ही राजा के नाम हैं और इन्हीं के समय में पुष्पदन्त ने अपने काव्यों की रचना की है। 'वल्लभराय' राष्ट्रकूट नरेशों की आम उपाधि थी। अरब के कई लेखकोंने इन नरेशों का उल्लेख 'वल्हारा' शब्द से किया है, जो वल्लभराय का ही अपभ्रंश है[10]। जिनसेनाचार्यने हरिवंशपुराण की प्रशस्ति में 'इन्द्रायुध' को 'श्रीवल्लभ' विशेषण दिया है[11]।

'कृष्णराज' नाम के तीन राजा राष्ट्रकूट वंश में हुए हैं। इन में से प्रथम तो वे हैं जिनके समय में अकलंक स्वामी हुए हैं, व जिनके पुत्र और उत्तराधिकारी 'इन्द्रायुध' के समय (शक

---

७ देखो 'विद्वद्रत्नमाला' भाग १ पृ० २९.

८ 'उव्वद्धजूड़ भूभंग भीसु। तोडेप्पिणु चोडहो तणउ सीसु।
भुवणेक्करास रायाहिराउ। जहि अच्छइ तुडिगु महाणुभाउ।
ते दीण दिण्ण घन कणयपयरु। महिपरि भमंत मेवा(ल्पा)डिनयरु॥

9 V. Smith: Early History of India. Ed. III. p. 424-430.

10. "They (Arabs) called the 'Râshtrakûta kings 'Balhârâ' because those princes were in the habit of assuming the title 'Vallabha' (Beloved Bier, aime) which, in combination with the word 'Rai' (prince) was easily corrupted in to the form 'Balhârâ'.
[V. Smith, E. H. I. p. 424-430.]

११ 'पातीन्द्रायुधि नाम्नि कृष्णनृपजे श्रीवल्लभे दक्षिणाम्' ।

Aho ! Shrutgyanam

सं० ७०५) में जिनसेनने हरिवंश पुराण की रचना समाप्त की थी। इन के समय तक मान्यखेट राजधानी नहीं हुई थी। पर दूसरे और तीसरे कृष्णराज मान्यखेट के सिंहासन पर हुए हैं। कृष्णराज द्वि० अमोघ वर्ष के उत्तराधिकारी थे, जिन्होंने लगभग शक सं० ८०० से ८३७ तक राज्य किया। इन के समय में मान्यखेट पुरी चालुक्य वंशी राजा विजयादित्य तृतीय द्वारा लूटी और जलाई गई थी[१२]। कृष्णराज तृतीय के लिये शिलालेखों से शक सं० ८६२, ८६७, ८७३ और ८७८ के उल्लेख मिले हैं। उन का सब से अन्तिम उल्लेख शक सं० ८८१ का सोमदेव ने अपने 'यशस्तिलकचम्पू' में किया है। इन सबसे पहले की एक तिथि कृष्णराज के लिये मुझे कारंजा भंडार के 'ज्वाला मालिनि कल्प' नामक ग्रंथ में देखने को मिली, इस ग्रंथ के अन्तिम पद्य ये हैं—

अष्टाशत सैकषष्ठिप्रमाण शक वत्सरेष्वतीतेषु।
श्री-मान्यखेटकटके पर्वण्यक्षयतृतीयायाम् ॥ १ ॥
शतदलसहित-चतुःशत-परिमाण-ग्रंथ-रचनया युक्तम्।
श्रीकृष्णराज-राज्ये समाप्तमेतन्मतं देव्याः ॥ २ ॥

इससे विदित होता है कि उक्त ग्रंथ की रचना शक संवत् ८६१ की अक्षय तृतीया को समाप्त हुई थी और उस समय मान्यखेट नगर में 'कृष्णराज' राज्य करते थे। ये राजा कृष्णराज तृतीय के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकते। इस प्रकार कृष्णराज तृतीय का राज्य काल कम से कम शक सं० ८६१ से लगा कर ८८१ तक सिद्ध होता है।

हम ऊपर कह आये हैं कि पुष्पदन्त ने अपने समय के 'तुड़िगु' अपर नाम कृष्णराज द्वारा चोड़ नृप के मारे जाने का उल्लेख किया है। राष्ट्रकूट वंशी राजा जैन धर्मानुयायी थे और इस समय के चोड़ नरेश कट्टर 'शैव'। दोनों खूब बलवान् भी थे। अतः दोनों बीच अक्सर हो युद्ध छिड़ा रहता था। कभी राष्ट्रकूटों की जीत हो जाती थी तो कभी चोड़ों की। मैसूर प्रान्त के 'अतकूर' नामक स्थान से एक शिलालेख मिला है जिस में ऐसे ही एक युद्ध का उल्लेख है। उससे विदित होता है कि शक सं० ८७१ (सन् ९४९) में जब राष्ट्रकूट नरेश कृष्णराज और चोड़ नृप 'राजादित्य' के बीच युद्ध चल रहा था तब कृष्णराज के सहायक व उन के बहिनोई गंगनरेश 'बुतुग' (भूतराय द्वि०) द्वारा राजादित्य की मृत्यु हुई[१३]। इसी शिलालेख के आधार पर सर विन्सेन्ट स्मिथने अपने 'भारत के प्राचीन इतिहास' में लिखा है कि 'कृष्ण तृतीय' के समय की राष्ट्रकूटों और चोड़ों की लड़ाई विशेष उल्लेखनीय है—क्यों कि सन् ९४९ में चोड़ राजा 'राजादित्य' की समरभूमि में ही मृत्यु हुई[१४]। क्या आश्चर्य यदि पुष्पदन्त ने अपने पुराण में इसी घटना का उल्लेख किया हो।

प्रेमीजीने उत्तर पुराण के ५० वें परिच्छेद के प्रारम्भ का एक श्लोक उद्धृत किया है जिससे विदित होता है कि उस पुराण के समाप्त होने से कुछ पूर्व मान्यखेट पर किसी 'धारा नरेश' ने चढाई की थी और उस सुन्दर नगर को नष्ट भ्रष्ट कर डाला था[१५]। हम ऊपर कह आये हैं कि

---

12. 'The Eastern Chalukya Vijayâditya III (A. D. 844-888) boasts that he captured the Ráshtrakúta capital and burnt it; and the assertion seems to be borne out by other inscriptions. Imp. Gaz. Vol II, p. 33.

13. Epigraphia Indica Vol. III, p. 50.

14. V. Smith. E. H. I. pp. 424-430.

१५ दीनानाथधनं सदा बहुधनं प्रोत्फुल्ल-वल्ली-वनम् मान्याखेटपुरं पुरंदरपुरीलीलाहरं सुन्दरम्।
धारानाथनरेन्द्रकोपशिखिना दग्धं विदग्धप्रियम्। क्वेदानीं वसतिं करिष्यति पुनः श्रीपुष्पदन्तः कविः।

Aho ! Shrutgyanam

कृष्णराज द्वितीय के समय में मान्यखेट पुरी लूटी और जलाई गई थी, पर किसी 'धारानाथ' के द्वारा नहीं, वेंगी के चालुक्यवंशी राजा ने उसे लूटा था। देखना चाहिये कि क्या कभी किसी धारा के राजा द्वारा भी मान्यखेट लूटा गया है। धनपाल कवि अपने 'पाइयलच्छी नाम माला' नामक कोष के अंत में, श्लोक २७६ आदि में लिखता है कि 'विक्रम संवत् १०२९ में जब मालवा वालों के द्वारा मान्यखेट लूटा गया था तब धारा नगरी निवासी धनपाल कविने अपनी बहिन सुन्दरा के लिये यह पुस्तक बनाई[१६]'। इस उल्लेख से हमें मान्यखेट पर आक्रमण करनेवाले राजा का नाम तो विदित नहीं हुआ, पर इतना पता चल गया कि वि० सं० १०२९ (शक सं. ८९४) के लगभग धारा वालों ने मान्यखेट को लूटा था। खोज करना चाहिये। शायद इस विषय पर कहीं से कुछ और प्रकाश पड़े। ग्वालियर के 'उदयपूर' नामक स्थान से एक शिलालेख मिला है, जिस में मालवा के परमारवंशी राजाओं की प्रशस्ति दी हुई है[१७]। इस प्रशस्ति का बारहवाँ पद्य यह है:—

तस्माद् (वैरिसिंहात्) अभूदरिनरेश्वर-संघ-सेवा-
गर्जद्गजेन्द्र-रव-सुन्दर-तूर्य-नादः।
श्रीहर्षदेव इति खोट्टिगदेव-लक्ष्मीं
जग्राह यो युधि नगाद-सम-प्रतापः॥

'खोट्टिगदेव' कृष्णराज तृतीय के चचेरे भाई थे जो उन के पीछे मान्यखेट के सिंहासन पर आरूढ हुए। उक्त पद्य से हमें दो बातें नई विदित हुईं। एक तो वही कि जिस की हम खोज में थे। अर्थात् मान्यखेट की लूटमार करानेवाले 'धारानाथ' का नाम। और दूसरी यह कि उस लूटमार के समय मान्यखेट के स्वामी खोट्टिगदेव थे। वैरिसिंह के पुत्र श्रीहर्षदेव का नाम 'नव साहसांकचरित' में 'श्रीहर्ष' या 'सीयक,' तिलकमंजरी में हर्ष और सीयक व प्रबन्धचिन्तामणि में श्रीहर्ष, सिंहभट और 'सिंहदन्त' पाया जाता है[१८]। इस प्रकार 'पाइयलच्छी नाममाला' और उदयपूर प्रशस्ति से यह सिद्ध हुआ कि वि० सं० १०२९ लगभग जब सीयक 'श्रीहर्ष' द्वारा मान्यखेट लूटा गया था उस समय कृष्णराज तृतीय की मृत्यु हो चूकी थी और उन का उत्तराधिकारी खोट्टिगदेव वहां के सिंहासन पर था।

अब इससे आगे बढने से पूर्व हमें यहां तक की छानबीन को पुनः दृष्टि गोचर कर लेना चाहियेः—

१. पुष्पदन्तने अकलंक, वीरसेन और जिनसेन का उल्लेख किया है। इससे उनका काव्य-रचना-काल शक सं० ७५९ से पीछे होना चाहिये।

२. पुष्पदन्तने अपने समकालीन मान्यखेट नरेश का 'वल्लभराय' नाम से उल्लेख किया है, जिसपर 'कृष्णराज' टिप्पण पाया जाता है। मान्यखेट के सभी राष्ट्रकूट वंशी राजाओं की 'वल्लभराय' उपाधि थी, उनमें कृष्णराज नाम के दो राजा हुए हैं।

३. पुष्पदन्तने अपने समय के मान्यखेट नरेश द्वारा 'चोड' राजा के मारे जाने का उल्लेख किया है। कृष्णराज तृतीयने शक सं. ८७१ में चोड़ राजा से युद्ध किया था और वहां के राजा की समरभूमि में ही मृत्यु हुई थी।

---

१६ विक्कमकालस्सगए अउणत्तीसुत्तरे सहस्सम्मि। मालवनरिन्द धाडिए लूडीए मन्नखेडम्मि॥ इत्यादि

17. Epigraphia Indica Vol I. p. 226.

१८ 'भारत के प्राचीन राजवंश' भाग १, पृ. ९२

Aho ! Shrutgyanam

४. पुष्पदन्तने धारा नरेश द्वारा मान्यखेट के लूटे जाने का उल्लेख किया है। शक सं० ८९४ के लगभग धारा के परमार राजा श्रीहर्ष द्वारा मान्यखेट के लूटे जाने का पता चलता है।

इस प्रकार इन ऐतिहासिक तथ्यों के मिलान से इसमें बहुत कम सन्देह रह जाता है कि पुष्पदन्तने अपने काव्यों की रचना मान्यखेट के राष्ट्रकूट वंशी राजा कृष्णराज तृतीय के समय में की थी, जिन के अभी तक, जैसा कि हम ऊपर बता आये हैं, शक सं० ८६१ से लगाकर ८८१ तक के उल्लेख मिले हैं। यह राजा जैनियों का बड़ा भक्त था व बड़ा प्रतापी और बलवान् भी था। सोमदेवने उसे पांड्य, सिंहल, चोल, चेरम, आदि प्रदेशों का विजेता कहा है। शिलालेखों से भी सिद्ध है कि उसने चोड़ मण्डल के प्रबल राजा को परास्त कर वहां राष्ट्रकूटाधिपत्य स्थापित किया था। उसने गंगराजा 'राचमल' को पराजित कर वहां की गद्दीपर 'भूतराय' को बैठाया था[१९]। ये ही 'भूतराय' चौड़युद्ध में उनके सहायक हुए थे और इन्हीं द्वारा चोड़ राजा का मस्तक काटा गया था। सम्भव है कि इसी प्रताप के कारण उन्होंने 'भैरव नरेन्द्र' की उपाधि भी प्राप्त कर ली हो, जिसका कि उल्लेख पुष्पदन्तने अपने काव्य में किया है। या स्वयं पुष्पदन्तने ही उनके लिये उक्त 'विरुद' निर्धारित करालिया हो। कविराजों को ऐसी स्वतंत्रता रहती है। 'शुभतुंग' कृष्णराज प्रथम का उपनाम अनुमान किया जाता है। ब्रह्मनेमिदत्तने इस राजा का इसी पद से उल्लेख किया है[२०]। उसी का 'मल्लिषेण प्रशस्ति' में 'साहसतुंग' नाम पाया जाता है[२१]। पर सम्भव है कि ये भी वल्लभराय के समान राष्ट्रकूट नरेशों के सामान्य 'विरुद' थे। देवली के ताम्रपत्रों से यही बात सिद्ध होती है[२२]। यह भी हो सकता है कि शुभतुंग व साहसतुंग इस वंश के खास २ प्रतापी नरेशों की उपाधि रही हो। हम देख चुके हैं कि मान्यखेट की लूटमार से कुछ पूर्व ही कृष्णराज की मृत्यु हो चुकी थी क्योंकि उस लूटमार के समय उनके उत्तराधिकारी 'खोट्टिगदेव' सिंहासन पर थे। यदि इसी लूटमार का उल्लेख पुष्पदन्तने किया है तो स्वयंसिद्ध है कि उन्होंने उत्तरपुराण का अन्तिम भाग, 'यशोधर चरित' और 'नागकुमार चरित' कृष्णराज के उत्तराधिकारियों के समय में लिखे थे। ये राजा 'कृष्णराज' के समान प्रतापशाली नहीं हुए। इनके समय में राष्ट्रकूट राज्य की अवनति प्रारम्भ हो गई थी। शायद इसी से हम उत्तरपुराण के अन्तिम भाग, यशोधर चरित और नागकुमार चरित में शुभतुंगराय व भैरवनरेन्द्र का उल्लेख नहीं पाते। यहां राजा का उल्लेख केवल 'वल्लभराय' से किया गया है जो राष्ट्रकूट नरेशों की साधारण

---

१९ Duff's Chronology p. 89.

२० 'अत्रैव भारते मान्यखेटाख्य नगरे वरे। राजाभूत् शुभतुंगाख्यस्तन्मंत्री पुरुषोत्तमः'॥

यहां शुभतुंग (कृष्ण प्रथम) को मान्यखेट का राजा कहा है, पर इतिहास कहता है कि इनके समय तक राष्ट्रकूट राजधानी वातापि में थी। मान्यखेट पुरी को अमोघवर्ष प्रथम ने सन् ८१८ ईस्वी में बसाया था।

(Deoli plates).

२१ 'राजन् साहसतुंग सन्ति बहवः श्वेतातपत्रा नृपाः
किंतु त्वत्सदृशा रणे विजयिनस्त्यागोन्नता दुर्लभाः। इत्यादि।

२२ 'The Rashtra-Kutas are stated in it (Deoli plates) to have sprung from the *Satyaki* branch of Yadava race and to be known as '*Tunga*'
(Ins. in C. P. & Berar, p. 10)

Aho ! Shrutgyanam

उपाधि थी। 'तुडिगु' तामिल व कनड़ी आदि किसी दक्षिणी भाषा का शब्द है। सम्भवतः वह भी कोई प्रतापसूचक उपाधि होगी।

अब हमें प्रेमीजी के उस पाठ पर विचार करना चाहिये, जिससे महापुराण की समाप्ति सं० ६०६ में पाई जाती है। समयसूचक पद्य 'जैन साहित्य संशोधक' में उद्धृत अंश के अनुसार ये हैं:—

पुप्फयंत कयणा धुयपंके। जइ अहिमाण मेरुणामंके॥
कयउं कव्वु भत्तिए परमत्थें। छसय छडोत्तर कय सामत्थें।
कोहण संवच्छरे आसाढए। दहमए दियहे चंद रुइ रूढए।

निस्सन्देह इन पदों से संवत् ६०६, क्रोधन, आषाढ शुक्ल १० वीं को महापुराण समाप्त होने का बोध होता है। अब इनके स्थान पर कारंजा की प्रति का पाठ देखिये[२३]:—

पुप्फयंत कइणा धुयपंके। जइ अहिमाण मेरुणामंके।
कयउ कव्वु भत्तिए परमत्थें। जिणपयपंकय मउलियहत्थें।
कोहण संवच्छरे आसाढए। दहमइ दियहे चंदरुइ रूढए।

यह पाठ और तो सब बातों में ऊपर के पाठ के ही समान है पर इसमें सं० ६०६ के सूचक पद का पता नहीं है। उसके स्थान पर जो पद है उससे संवत् का कोई बोध नहीं होता। इन पाठों में से कौनसा शुद्ध और कौनसा अशुद्ध माना जाय। प्रेमीजी मुझे सूचित करते हैं कि ऊपर वाला पाठा अनेक प्राचीन प्रतियों में पाया जाता है। इससे उसे सहसा अशुद्ध और जाली कहने का भी साहस नहीं होता। न तो सं० ६०६ शक गणना के अनुसार क्रोधन था और न विक्रम गणना के अनुसार। पर सम्भव है कि यह इन से भिन्न कोई और संवत् का वर्ष हो[२४]।

अब हमें महापुराण की समाप्ति का समय अन्य प्रकार से शोधना पड़ेगा। इस पुराण के प्रारम्भ के एक पद्य से विदित होता है कि पुष्पदन्तने उस पुराण की रचना किसी सिद्धार्थ संवत्सर में प्रारम्भ की थी। सोमदेवकृत यशस्तिलक चम्पू के उपसंहार वाक्य को देखियेः—

"शक-नृप-कालातीत-संवत्सर-शतेष्वष्टस्वेकाशीत्याधिकेषु गतेषु अंकतः (८८१) सिद्धार्थ-संवत्सरान्तर्गत चैत्रमासमदन-त्रयोदश्यां पांड्य-सिंहल-चोल-चेरम-प्रभृतीन्महीपतीन्प्रसाध्य मेलपाटी-प्रवर्धमान-राज्य-प्रभावे श्रीकृष्णराजदेवे सति तत्पादपद्मोपजीविनः समधिगत-पञ्च-महा-शब्द-महासामन्ताधिपतेश्चालुक्यकुल-जन्मनः सामन्तचूड़ामणेः श्रीमदरिकेसरिणः प्रथम पुत्रस्य श्री-मद्वद्दिगराजस्य लक्ष्मीप्रवर्द्धमान-वसुंधरायां गंगाधारायां विनिर्मापितमिदं काव्यमिति।"

इससे प्रसंगोपयोगी हमें केवल इतनी बात विदित होती है कि शक सं० ८८१ सिद्धार्थ संवत्सर था और उस समय मान्यखेट में चोल आदि नरेशों को जीतने वाले राजा कृष्णराज (तृतीय) का राज्य था। महापुराण का प्रारम्भ भी इसी सिद्धार्थ संवत्सर में होना चाहिये। पुराण की समाप्ति का समय प्रेमीजी के पाठ के समान ही 'कारंजा' की प्रति में भी क्रोधन संवत्सर आषाढ शुक्ल १० वीं दिया हुआ है। क्रोधन संवत्सर साठ-साला-संवत्-चक्र में सिद्धार्थ संवत्सर से ६ वर्ष बाद आता है। अतः महापुराण की समाप्ति का ठीक समय शक

---

२३ यह प्रति संवत् १६०५ मार्गशीर्ष वदि ८, भृगुवार की है।

२४ गुप्त और कलचुरि संवत् से भी यह समय ठीक नहीं बैठता। गुप्त संवत् का प्रारम्भ सन् ३१९ ईसवी व कलचुरि संवत् का सन् २४९ ईसवी से माना जाता है।

Aho ! Shrutgyanam

सं० ८८७ आषाढ शुक्ल १० वीं सिद्ध होता है। श्रीयुत राय बहादुर बाबू हीरालालजीने मेरे लिये इस तिथि का मि. स्वामी कन्नूपिलाइ के 'इंडियन एफेमेसिस' नामक सारिणी से मिलान किया तो इसकी अंग्रेजी सम-तिथि ११ जून सन् ९६५ इस्वी (रविवार) आती है। प्रेमीजीने 'चंदरुइ-रूढए' का अर्थ 'सोमवार' किया है। पर मेरी समझ में उसका ठीक अर्थ चंद्रवार नहीं शुक्ल-पक्ष है। चंद्ररुचि रूढे—अर्थात् जब चंद्रमा वृद्धिशील होता है। मुझे भी सन्देह था कि सम्भव है उक्त पद में 'सोमवार' का भी भाव हो और शायद आषाढ शुक्ल १० वीं रविवार को प्रारम्भ होकर सोमवार तक गई हो। पर राय बहादुर हीरालालजी उसका ठीक मिलान कर लिखते हैं कि उक्त तिथि रविवार को ही सूर्योदय से १३ घंटे १५ मिनट पश्चात् अर्थात् सायंकाल को समाप्त हो चुकी थी।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि जब पुष्पदन्तने अपने पुराण समाप्त होने के माह और तिथि दिये हैं तब क्या उन्होंने संवत् का उल्लेख नहीं किया होगा? यह तो सिद्ध है कि 'छसय छडोत्तर कय सामत्थे' वाला पाठ ठीक नहीं है या कम से कम उपर्युक्त चार संवतों के अनुसार वह ठीक नहीं बैठता। पर उसके स्थान पर कारंजा की प्रति का जो पाठ है उसमें संवत् आदि का कोई भाव नहीं है। जब मैंने कारंजा की प्रति का अवलोकन किया था, उस समय तक प्रेमीजी के अवतरण मेरे देखने में नहीं आये थे। तब मुझे ऊपर उद्धृत पद्यों में 'जइ अहिमाण मेरुणामंके' में किसी संवत् की सूचना छुपी होने का सन्देह हुआ था, पर प्रेमीजी के संवत् का स्पष्ट बोध करानेवाले पाठ को देखकर मेरा वह सन्देह दूर हो गया था। पर अब पुनः मेरी दृष्टि उसी पद पर जाती है। मैंने अपने इस सन्देह का संकेत बाबू जुगलकिशोरजी मुख्तार से भी किया था। पर उन्होंने लिखा कि 'अभिमानमेरु' कवि का उपनाम है, उसमें अंकों आदि का कोई भाव नहीं। पर मुझे इससे सन्तोष नहीं हुआ 'अभिमानमेरु' कवि का उपनाम अवश्य है; कई स्थानोंपर उन्होंने अपने इस 'विरुद' का उल्लेख किया है; पर हो सकता है कि यहां पर कवि का वह भाव रहा हो और अंकों का भी। खासकर 'अंक' शब्द से यह सन्देह और भी दृढ़ होता है। अंक का लांछन भी अर्थ होता है और गणना भी। अतः संभव है कि प्रयत्न करने से उसमें संवत् का भाव निकले। उक्त पद के एक २ अक्षर को लीजिये। 'जइ' संस्कृत के 'यति' का अपभ्रंश-रूप विदित होता है। उससे सप्त ऋषियों का भी बोध हो सकता है अतः उसकी अंक संख्या ७ मानी जा सकती है। 'अहिमाण' अभिमान के बराबर है जिससे अष्ट मद का बोध होता है और उसकी अंक संख्या ८ ली जा सकती है। 'मेरु' से आठ का भाव लेने के लिये मैं कोई प्रमाण नही पा सका[२५]। पर यदि उससे ८ का भाव लिया जा सकता हो और 'अंकानां वामतो गतिः' के नियमानुसार हम इन अंकों को 'दाये से बांई ओर को रक्खें' तो संवत् ८८७ निकल सकता है। बहुत सम्भव है कि इस पद में ऐसा अर्थ हो, पर जब तक अष्ट मेरु के लिये कोई प्रमाण न मिल जावे तब तक इस कल्पना पर अधिक जोर नहीं दिया जा सकता।

जब हम यह सिद्ध करते हैं कि महापुराण शक संवत् ८८७-(वि० सं० १०२२) में समाप्त हुआ था तब हमें मानना पड़ेगा कि मान्यखेट की जिस लूटमार का कविने उक्त पुराण के ५० वें

---

२५. जैन शास्त्रों में 'मेरु' पांच माने गये हैं। शक संवत् ५८७ भी क्रोधन था पर अन्यप्रमाणों से वह समय पुष्पदन्त के लिये ठीक नहीं माना जा सकता।

Aho ! Shrutgyanam

परिच्छेद में उल्लेख किया है वह वि० सं० १०२२ से पश्चात् नहीं हो सकती। पर धनपाल की 'पायलच्छी नाम माला' में उस घटना के उल्लेख से ऐसा मालूम पड़ता है कि वह उस ग्रंथ के समाप्त होने के वर्ष वि० सं० १०२९ में ही हुई थी। इस विरोध का परिहार कैसे हो? उदयपुर प्रशस्ति से सिद्ध है कि उक्त घटना के समय मान्यखेट के सिंहासन पर 'खोट्टिगदेव' आरूढ थे। 'खोट्टिग' के उत्तराधिकारी कक्कराज का एक दानपत्र शक सं० ९९४ (वि० सं० १०२९) आश्विन शुक्ल १५ का मिला है।[26] उस से सिद्ध होता है कि 'खोट्टिग' की मृत्यु आश्विन शुक्ल १५ सं० १०२९ से पूर्व ही हो चुकी थी और उस समय तक हर्षदेव के भीषण आक्रमण के पश्चात् इतना समय बीत चुका था कि राजधानी में फिर से शान्ति और सुप्रबंध स्थापित हो जाय। यदि ऐसा न होता तो उक्त समय में मान्यखेट के राजा को दान पत्र निकालते बैठने का अवकाश न मिलता। इस से अनुमान किया जा सकता है कि वि०सं० १०२९ में उक्त घटना कम से कम पांच सात वर्ष पुरानी हो चुकी थी। हर्षदेव का आक्रमण मलयखेट पर कब हुआ इस का कुछ अनुमान इस प्रकार लगाया जा सकता है। 'महापुराण' 'सिद्धार्थ' संवत्सर में प्रारम्भ हो कर क्रोधन संवत्सर में समाप्त हुआ था। अतः उस के १०२ परिच्छेदों की रचना में कवि को छह वर्ष लगे, जिस की औसत एक वर्ष में १७ परिच्छेदों की आती है। कविने मान्यखेट की लूटमार का उल्लेख आदिपुराण के ३७ व उत्तर पुराण के ४९ परिच्छेद पूर्ण हो जाने पर किया है। उत्तर पुराण के शेष १६ परिच्छेदों की रचना में कवि को अधिक से अधिक एक वर्ष लगा होगा। अतः वि० सं० १०२२-१ = १०२१ के लगभग मान्यखेट की लूटमार होना सिद्ध होता है। लगभग आठ वर्ष पुरानी घटना का वि० सं० १०२९ में हुई जैसी उल्लेख करने का यह कारण हो सकता है कि हर्षदेव मान्यखेट पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् और कई प्रदेशों को जीतते हुए वि० सं० १०२९ में धारा राजधानी में पहुंचे होंगे। इस विजय यात्रा में मान्यखेट की विजय ही सबसे अधिक कीर्त्तिकारी हुई होगी। इसी से धनपाल ने उस का उल्लेख विशेषरूप से किया। ऐसी यात्रा में सात आठ वर्ष व्यतीत हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है।

महापुराण की उत्थानिका से विदित होता है कि पुष्पदन्त किसी राजा द्वारा सताये हुए मान्यखेट पुर को आये थे। आंध्र-कर्नाटकदेश में विक्रम की १० वीं शताब्दि तक तो जैन-धर्म का खूब जोर रहा और वहां के राजा जैन आचार्यों की अच्छी भक्ति करते रहे, पर दशवीं शताब्दि के अन्तिम भाग में वहां शैवधर्म का प्राबल्य बढा और जैनियों को आपत्ति पहुंचाने जाने लगी। 'वारंगाल कैफियत' से जाना जाता है 'राजराज नरेन्द्र' के समय में वहां के एक बड़े जैन आचार्य 'वृषभनाथ तीर्थ' को राजधानी 'राजमहेन्द्री' छोड़ कर वारंगाल भाग आना पड़ा था, जिस का कारण उन का राजराजनरेन्द्र द्वारा सताया जाना ही विदित होता है। यह राजा कट्टर शैव था, जो सन् १०२२ (शाक ९४४) में राजमहेन्द्री के तख्त पर बैठा[27]। क्या आश्चर्य यदि महाकवि पुष्पदन्त भी यहीं के किसी ऐसे ही राजा द्वारा सताये हुए मान्यखेट आये हों। मान्यखेट के राष्ट्रकूट नरेश जैनधर्म में श्रद्धा और जैन कवियों को आश्रयदान के लिये खूब विख्यात थे। यही नहीं, उन में से कई स्वयं अच्छे कवि हुए हैं। 'प्रश्नोत्तर रत्नमाला' के कर्त्ता अमोघवर्ष प्रसिद्ध ही है। इन्हीं की छत्र-छाया में जिनसेन, गुणभद्र, सोमदेव, महावीराचार्य आदि धुरंधर जैनाचार्यों ने वह जैनधर्म की ध्वजा फहराई थी। मान्यखेट में जैन कवियों का

२६ Ind. Ant. Vol XII p. 263.

२७ Studies in South Indian Jainism. p. 18.

Aho ! Shrutgyanam

अच्छा जमाव रहता था। कवि ने स्वयं उसे 'दीनानाथ-धनं सदा बहुधनं' कहा है। इसी कीर्ति से आकर्षित हो कर पुष्पदन्त मान्यखेट आये होंगे। पर वे 'अभिमान मेरु' थे, इस से सीधे राजदरबार में नहीं गये। नगर के बाहर ही एक उपवन में टिक रहे। पर मान्यखेट में उन के जैसे कवि रत्न देर तक छिपे नहीं रह सकते थे। वे मंत्री भरत से मिला दिये गये। वहां उन का खूब आदर सत्कार हुआ, स्वयं भरत के प्रासाद में उन्हें रहने को स्थान दिया गया और वे कविता करने को प्रोत्साहित किये गये।

यह निर्णय किये जाने के अभी कोई साधन उपलब्ध नहीं हैं कि महापुराण से कितने समय पश्चात् 'यशोधर चरित' और 'नागकुमार चरित' की रचना हुई। पर इतना निश्चित है कि वे दोनों महापुराण से पीछे लिखे गये हैं। महापुराण पूर्ण होने तक भरत मान्यखेट के मंत्रित्व पद पर थे। पर अन्य दो काव्यों की रचना के समय उन के पुत्र 'नन्न' उक्त पद को विभूषित कर रहे थे। उन्हीं की प्रेरणा से उन्हीं के शुभतुंग प्रासाद में रहते हुए कवि ने उक्त दो काव्यों की रचना की। इन काव्यों में यथावसर 'नन्न' की ही कीर्ति वर्णित है। इस समय या तो भरत की मृत्यु हो चुकी थी या उस समय की प्रथा के अनुसार वे अपने चौथे पन में संसार से विरक्त हो, गृहभार अपने सुयोग्य पुत्र को सौंप, मुनि-धर्म का पालन करने लगे थे। आश्चर्य है कि कवि ने अपने काव्यों में इस विषय का कोई उल्लेख नहीं किया। 'नागकुमार चरित' की रचना के समय कवि के माता पिता भी स्वर्गवासी हो चुके थे[२८]।

हम ऊपर सिद्ध कर चुके हैं कि कृष्णराज की मृत्यु महापुराण पूर्ण होने से पूर्व ही हो चुकी थी। पर 'यशोधर चरित' और 'नागकुमार चरित' में जो वल्लभराय का उल्लेख आया है उस पर भी महापुराण के समान 'कृष्णराज' ऐसा टिप्पण पाया जाता है। टिप्पणकर्ता की यह अवश्य भूल है। वहां 'वल्लभराय' से कृष्णराज के उत्तराधिकारियों का तात्पर्य लेना चाहिये। यह हम देख ही चुके हैं कि राष्ट्रकूट वंशी सभी राजा 'वल्लभराय' कहलाते थे।

महापुराण, यशोधर चरित और नागकुमार चरित के अतिरिक्त भी महाकवि पुष्पदन्त ने कोई ग्रंथ रचे या नहीं, इस के जानने के लिये कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।

[नागकुमार चरित की उत्थानि का का कुछ भाग]
पणवेप्पिणु भावें पंच गुरु, कलिमल वज्जिउ गुणभरिउ।
आहासमि सिय पंचमिहे फलु, णायकुमार चारु चरिउ॥
दुविहालंकारें विप्फुरंति। लीला कोमलइं पयाइं दिंति।
महकव्व णिहेलणे संचरंति। बहु हाव भाव विब्भम धरंति॥
घत्ता। सिरिकन्हराय करयलनिहिय असिजलवाहिणि दुग्गयरि।
धवलहर सिहरिहय मेहउलि पविउल मण्णखेडनयरि॥ १॥
मुद्धाई केसव भट्ट पुत्तु। कासव रिसि गोत्ते विसाल चित्तु।
णण्ण हो मंदिरे णिवसंतु संतु। अहिमाण मेरु गुण गण महंतु॥
पत्थिउ महि पणवियसीसएण। विणएण महोदहि सीसएण[१]॥१॥
दुरुज्झिय-दुक्किय-मोहणेण। गुणधम्में अवराव सोहणेण॥
भो पुप्फयंत पडिवण्णपणय। मुद्धापवि केसइय तणय।

---

२८ 'महु पियराइं होन्तु सुहधामइ'। १ महोदेर्धनाम्नः शिष्येण,

तुहुं वाईसरि देवी निकेउ । तुहुं अम्हहं पुण्ण निबंध हेउ ॥
तुहुं भव्वजीव पंकरुह भाणु । पइं धणु मणे मण्णिउ तिण समाणु ।
गुणवंत भत्तु तुहुं विणय गम्मु । उज्झाय पयासहि परम धम्मु ॥
घत्ता । आलग्गिउ भावें दिणि जिदिणें । णिय मण पंकयप्पिरु थविउ ।
कइ कव्व पिसल्लउ जस धवलु । सिसजुयलेण पविण्णवउ ॥
भणु भणु सिरि पंचमि फलु गहीरु । आयण्णहि णायकुमारु वीरु ।
ता वल्लहराय महत्तएण । कलिविलसिय-दुरिय-कयंतएण ॥
कोण्डिण्णगोत्त-णह-ससहरेण । दालिद्दकंद-कंदल-हरेण ।
वर कव्व रयण रयणायरेण । लच्छी पोमिणि माणस सरेण ॥
पसरंत किंत्ति बहु-कुलहरेण । विच्छिण्ण सरासइबंधवेण ।
बहु दीणलोयपूरिय धणेण । मइ-पसर-परज्जिय-परबलेण ॥
णियवइवि दिण्ण चिंतियफलेण । छण इंद बिंब सण्णिह मुहेण ।
कुंदव्व[२]-भरह दिय तणुरुहेण ।
णण्णेण पवुत्तु महाणुभाव । भो कुसुमदसण हय वसण ताव ।
करि कव्वु मणोहरु सुयहि तंदु । जिणधम्म कज्ज मा होहि मंदु ॥
आयण्णमि भणु हउं णिम्मलाइं । सियपंचमि उववासहो फलाइं ।
णण्णेण पवोल्लिउ एम जाम । णाइल्लइं सीलइं एण ताम[३]॥
घत्ता । कइ भणिउं समंजसु जस विमलु, णण्णु जि अण्णु न घरसिरिहे ।
तहो केरउ णाउ महग्घयरु, देविहिं गायउ सुरगिरिहे ॥
तं तुहुंपि चडावहु णियकव्वे । दिहि होउ णण्णे आसण्ण भव्वें ।
बुद्धीए णण्णु सुरगुरु णमंति । पर णण्णहो णउ वइरिय जिणंति ॥
पहुभत्तिए हणु व समाणु दिट्ठु । परणण्णु ण वाणरु णरु विसिट्ठु ।
गांगेउ सउच्चे जाणिय तुट्ठि । पर णण्णु ण वइरिहुं देइ पुट्ठि ॥
धम्मेण जुहिट्ठिलु धम्मरत्तु । पर णण्णु पवासदुहेण चत्तु ।
चाएण कण्णु जण दिण्ण चाउ । पर णण्णु ण बंधुहुं देइ घाउ ॥
कंतीए मणोहरु छण ससंकु । पर णण्णहो णउ दीसइ कलंकु ।
गरुयत्तें महि सुविसुद्ध चरिउ । पर णण्णु ण किडि दाढाइ धरिउ ॥
सुथिरत्तें मेरु भणंति जोइ । पर णण्णु पुरिसु पसरु ण होइ ।
सायरु व गहीरु कयायरेहिं । पर णण्णु ण मंथिउ सुरवरेहिं ॥
घत्ता । जो एहउ वण्णिउ वर कइहिं । भाविं णियमणे भावहि ।
तहो णण्णहो केरउ णाउ तुहुं । सुललिय कव्वे चडावहि ॥
णाइल्ल सील भट्टारु वयणु । तं आयण्णेवि नवकमल वयणु ।
पडिजंपइ वियसिरि पुप्फयंतु । पडिवज्जमि णण्णु जि गुणमहंतु ॥
धणु पुणु महुं तणु व तणाउ कट्ठु । धम्मेण णिवद्धु सुपावि सट्ठु । (शास्त्रं)
हउं कहउं कव्वु णिंदंतु पिसणु । वण्णंतु सुयण विप्फुरिय वयणु ॥
दुज्जण सज्जणहो सहाउ एहु । सिहि उण्हउ सीयलु होइ मेहु ।

२ कुंदाम्बा मातुर्नाम ।

Aho ! Shrutgyanam

भो णिसुणि णण्ण कुलकमल सूर । सुरसिहरि धीर पडिवण्ण सूर ॥
जिण भणिउं अणंताणंत गयणु । तहो मज्झे परिठिउ तिविहु भुअणु ।
पहिलउ मलय संकासु दिट्ठु । वीयउ कुलिसोवमु रिसिहि सिट्ठु ॥
तइयउ मुइंद साण्णिहु कहंति । अरहंत अरुह भणु किं रहंति ।
घत्ता । तइ लोकु कमलरुह हरि हरिहिं ण धरिउ ण किउ ण णिट्ठियउ ।
तहिं वहु दीवोवहि मंडियउ । मज्झिउ भुअणु परिट्ठियउ ॥
इय णाय कुमार चारु चरिए नन्ननामंकिए महाकइ पुप्फयंत विरइए महाकव्वे जयंधर-विवाहकल्याण वण्णणो नाम पढमो परिच्छेओ सम्म तो ॥ छ ॥

(नागकुमार चरित का अंतिम भाग ।)

गोत्तम गणहर एवं सिट्ठउ । सूरिपरंपराए उवइट्ठउ ।
णायकुमारचारित्तु पयासिउ । इयसिरिपंचमि फल मइं भासिउ ॥ १ ॥
सो णंदउ जो पढइ पढावइ । सो णंदउ जो लिहइ लिहावइ ।
सो णंदउ जो विवरि विदावइ । सो णंदउ जो भावें भावइ ॥ २ ॥
णंदउ सम्मइ सासणु सम्मइ । णंदउ पयसुह णंदउ नरवइ ।
चिंतिउ चिंतिउ वरिसउ पाउसु । णंदउ णण्णु होउ दीहाउसु ॥ ३ ॥
णण्ण हो संभवंतु सुपवित्तइं । णिम्मल दंसण णाण चरित्तइं ।
णण्णहो होउ पंच कल्लाणइं । रोय-सोय-खयकरण विहाणइं ॥ ४ ॥
णण्णहो जसु भुअणत्तए विलसउ । णण्णहो घरे वसुहार पवरिसउ ।
सिवभत्ताइमि जिणसण्णासें । बे वि मयाइं दुरिय णिण्णासें ॥ ५ ॥
बंभणाइं कासवरिसि गोत्तइं । गुरुवयणामय पूरिय सोत्तइं ॥
मुद्धाएवी केसव णामइं । मंहु पियराइं होंतु सुहधामइं ॥ ६ ॥
संप्पज्जउ जिण भावें लइयहो । रयणत्तय विसुद्धि दंगइयहो ।
मज्झु समाहि वोहि संपज्जउ । मज्झु विमलु केवलु उप्पज्जउ ॥ ७ ॥
घत्ता । णण्णहो मज्झु वि दय करउ । पुप्फयंत जिणणाहपियारी ।
खमउ असेसु वि दुव्वयणु । वसउ वयणे सुयदेवि भडारी ॥ ८ ॥
सुहतुंग भवण वावार भार णिव्वहण वीर धवलस्स ।
कोंडिल्ल गोत्त नहससहरस्स पयइए सोमस्स ॥ ९ ॥
कुंदव्वागब्भसमुब्भवस्स सिरि भरहभट्ट तणयस्स ।
जस पसर भरिय भुअणोयरस्स जिणचरण कमल भसलस्स ॥ १० ॥
अणवरय रइय वरजिणहरस्स जिण भवण पूयणिरयस्स ॥
जिण सासणायमुद्धारणस्स मुणिदिण्णदाणस्स ॥११॥
कलिमलकलंक परिवज्जियस्स जियदुविहवइरिणियरस्स ।
कारुण्णकंद णव जलहरस्स दीणयण सरणस्स ॥ १२ ॥
णिवलच्छी कीला सरवरस्स वाएसरि णिवासस्स ।
णिस्सेस विउस विज्जाविणोय णिरयस्स सुद्ध हिययस्स ॥१३॥
णण्णस्स पत्थणाए कव्व पिसल्लेण पहसिय मुहेण ।
णाय कुमार चरित्तं रइयं सिरिपुप्फयंतेण ॥ १४ ॥

———*———

जैन साहित्य संशोधक

खंड २,] [अंक ३.

કવિવર સમયસુન્દર

(ભાવનગર મુકામે ભરાએલી ૭ મી ગુજરાતી સાહિત્ય પરિષદ્ માટે લખાએલો નિબંધ.)

[लेखकः श्रीयुत मोहनलाल दलीचंद देशाई, बीए. एल्‌एल्‌. बी.; मुंबइ.]

જૈન સાધુઓ ભારતની એક ધાર્મિક સંસ્થા છે અને પોતાના આચાર–નિયમ પ્રમાણે ભ્રમણશીલ–પરિવ્રાજક છે. એક વર્ષમાં એકી સાથે ચાતુર્માસ એક સ્થળે ગાળવું તેમને અપરિહાર્ય છે, જ્યારે બાકીના આઠ માસમાં એક ગામથી બીજા ગામ અપ્રતિહત વિહાર કરી દરેક સ્થલે ઉપદેશ આપતા રહી વિહાર કર્યે જાય છે. લગભગ પચીસસો વર્ષ પહેલાં થયેલા ધર્મ સંસ્થાપક શ્રી મહાવીરના અનુયાયી જૈન શ્રમણોની સંસ્કૃતિ સમય ધર્મ પ્રમાણે અનેક ઉદય અને અસ્તના હિંડોલે હીંચીને હજુ સુધી પણ અખંડ પણે ચાલી આવી છે. તે શ્રમણ–પંથે સ્થાપેલા દયા ધર્મની અસરથી ભારતમાં હિંસક યજ્ઞયાગ બંધ પડયા એટલું જ નહિ પણ જાતિભેદના જુલમને ઘણા સૈકાઓ સુધી વિશેષ અવકાશ મળ્યો નહિ. વિશેષમાં કાવ્ય, નાટક, કથા–ભાષા વગેરે સાહિત્ય પ્રદેશમાં પણ તે શ્રમણોએ દરેક શતકમાં–દરેક યુગમાં અન્ય પંથોની સાથે સાથે પ્રબળ ફાળો આપ્યો છે, અને એ સત્યની પ્રતીતિ તેના સાહિત્યનો ઇતિહાસ લખાશે ત્યારે અતિ સ્પષ્ટ રીતે અને જરૂર થશે.

સંસારની ઉપાધિઓના બંધનથી મુક્ત એવા નિર્બંધ પંખીઓ પેઠે વિચરતા માત્ર ધર્મ પરાયણ જીવન ગાળવા નિર્માયેલા સાધુઓના સૂર વિશ્વબંધુ ભાવનાં, પ્રભુ ભક્તિનાં, અને નીતિના ઉપદેશનાં ગીતો ગાવામાં જ નીકળી શકે. પોતપોતાના જમાનાની ભાવનાઓને વ્યક્ત કરવી; પોતાના સમયના જૂદા જૂદા આદર્શોને અને નોખા નોખા વહેતા લાગણી–પ્રવાહોને એકત્ર કરી પયગમ્બરી વાણીમાં તેનું ઉદ્‌બોધન કરવું એ કવિઓનું કર્તવ્ય છે. સામાન્ય લોકોના દિલમાં જે સુન્દર ભાવો જાગે–પણ જે સમજવાની કે સમજાવવાની તેમનામાં તાકાત નથી–તેમને ભાષા આપવી, તેમને અમર વાણીમાં વ્યકત કરવા એ કવિઓનું કાર્ય છે. નિર્બંધ પંખીઓમાં કોકિલા જેવું ભ્રમણશાલી

Aho ! Shrutgyanam

પંખી ભાગ્યે જ જોવામાં આવશે. આવા કવિપરભૃતો જૈન સાધુઓએ પ્રાન્ત પ્રાન્ત અને દેશોદેશ વિહાર કરી પોતાના કાવ્યનો ટહૂકો લોકોને સંભળાવ્યો છે. આ પૈકી એક કવિ પરભૃતનો પરિચય કરાવવાની આ નિબંધની ઉમેદ છે.

તેમનું નામ કવિવર સમય સુન્દર. તેમનો કાલ વિક્રમનો સત્તરમો શતાબ્દિ છે. તેમને સંવત્ ૧૬૪૯ માં વાચનાચાર્ય–ઉપાધ્યાય પદ લાહોરમાં મળ્યું હતું અને પ્રથમનો ગ્રંથ 'ભાવશતક' સં૦ ૧૬૪૧ માં રચેલો મળી આવે છે, તેથી તે વખતે તેમની ઉમર ૨૧ વર્ષની ગણીએ તો તેમનો જન્મ સં૦ ૧૬૨૦ માં મૂકી શકાય કે જે વખતે તેમના દીક્ષાગુરૂ સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાયના દીક્ષા ગુરૂ જિનચંદ્ર સૂરિને સૂરિપદ (૧૭ વર્ષની વયે, મળ્યા સંવત્ ૧૬૧૨) મળ્યાને આઠ વર્ષ થઈ ગયાં હતાં. તેમનો છેલ્લો ગ્રંથ સં૦ ૧૬૯૭ લગભગનો મળી આવે છે તેથી તેઓ સં૦ ૧૬૨૦ થી ૧૭૦૦ સુધી–૮૦ વર્ષ જેટલું જીવન ગાળી શકયા હતા એ પ્રાયઃ નિશ્ચિત થાય છે.

તત્કાલીન સ્થિતિ.

ખરતર ગચ્છ અને તપાગચ્છ વચ્ચે લાંબા વખતથી સ્પર્ધા અને વિખવાદ ચાલ્યા આવતા. એ વિખવાદ સત્તરમા શતકના પૂર્વાર્દ્ધમાં વધી પડયો હતો. શ્વેતામ્બરો અને દિગંબરો વચ્ચેનો વિરોધ તો બહુ જૂનો હતો પણ સં. ૧૧૭૬ માં સિદ્ધરાજના દરબારમાં વાદિદેવ નામના શ્વેતામ્બર સૂરિએ કુમુદચંદ્ર નામના દિગમ્બરાચાર્યને શાસ્ત્રાર્થમાં હરાવી દિગમ્બરોને ગૂજરાતના રાજ્યની હદપાર કરાવ્યા–તે પછી એ બંનેનાં કાર્ય કરવાનાં ક્ષેત્રો બહુધા જૂદાં પડી ગયાં હતાં ને તેથી એમના વચ્ચેનો વિરોધ પણ મોળો પડી ગયો હતો. પણ બીજી બાજુએ શ્વેતામ્બર મૂર્તિ પૂજકમાંથી જુદા પડી લુંકામત અને બીજામત નીકળ્યા પછી તેમની સાથેનો વિરોધ પ્રબળ થઇ પડયો હતો. શ્વેતામ્બર મતના ખરતર અને તપગચ્છ વચ્ચેની મતામતી પણ પ્રબળ થઇ પડી હતી અને તેમાં ધર્મસાગર ઉપાધ્યાયજી નામના તપગચ્છીય વિદ્વાન્–પણ–ઉગ્રસ્વભાવી સાધુએ કુમતિકંદકુદ્દાલ (યાને પ્રવચન પરીક્ષા) નામનો ગ્રંથ બનાવી તપગચ્છ સિવાયના અન્ય સર્વ ગચ્છ અને મત સામે અનેક આક્ષેપો મૂકયા. આથી તે સર્વ મતો ખળભળી ઉઠયા; અને તેનું જો સમાધાન ન થાય તો આખા જૈન સમાજમાં દાવાનળ અગ્નિ પ્રકટે. આ માટે જોખમદાર આચાર્યોને વચ્ચે પડયા વગર રહી શકાય નહિ તેથી તપગચ્છાચાર્ય વિજયદાન સૂરિએ ઉપરોકત ગ્રંથ પાણીમાં બોળાવી દીધો અને તેને અપ્રમાણ ઠેરવ્યો. તેમણે જાહેરનામું કાઢી 'સાત બોલ'ની આજ્ઞા કાઢી એક બીજા મતવાળાને વાદ–વિવાદની અથડામણ કરતા અટકાવ્યા હતા. પણ આટલાથી વિરોધ જોઈએ તેવો ન શમ્યો ત્યારે વિજયદાન સૂરિ પછી આચાર્ય હીરવિજય સૂરિએ ઉકત 'સાત બોલ' પર વિવરણ કરી 'બાર બોલ' એ નામની બાર આજ્ઞાઓ જાહેર કરી હતી. સં૦ ૧૬૪૬. આથી જૈન સમાજમાં ઘણી શાન્તિ આવી, અને

ખરતર ગચ્છના અને તપગચ્છના આચાર્યો એક બીજાની નિન્દામાં ન ઉતરતાં જૈન ધર્મનો પ્રભાવ અન્ય સમાજમાં અને રાજદ્વારમાં પાડવા માટે પ્રયત્નશીલ થયા.

વિક્રમનો સત્તરમો સૈકો જૈનો માટે ઘણો પ્રતાપી હતો. તે સદીમાં મહાન મોગલ સમ્રાટ અકબર, જહાંગીર અને શાહજહાં (સં૦ ૧૬૧૨ થી સં૦ ૧૭૧૪) એ ત્રણ શાહેનશાહોએ સમગ્ર ભારત વર્ષમાં રાજ્ય સત્તા જમાવી રાખી લોકોમાં આબાદી અને શાન્તિની સ્થિરતા કરી. અકબરે સં૦ ૧૬૨૪ માં ચિતોડ, ૧૬૨૫ માં રણથંભોર અને કલંજરના કિલ્લા જીતી લીધા અને સં૦ ૧૬૨૯ માં અમદાવાદમાં પોતાનો વાવટો ફરકાવ્યો. પછી વડોદરા, ચાંપાનેર, સુરત એ સઘળો મિર્ઝાઓએ કબજે કરેલો મુલક તેઓને હાંકી મેલી, પોતાના રાજ્ય તળે મૂકી અકબર આગ્રે આવ્યો. ત્યાર પછીના ત્રણ વર્ષમાં બહાર અને બંગાલા હાથ કર્યા. સામાન્યે સર્વ સ્થળે શાંતિ પ્રસારી. આ સૈકામાં શ્વેતામ્બર જૈન સાધુઓ સંસ્કૃત પ્રાકૃત અને સ્વભાષા–લોક ભાષામાં સાહિત્ય વિશેષ વિશેષ ઉત્પન્ન કરવા લાગ્યા. તપગચ્છીય પ્રભાવક મહાપુરૂષ હીરવિજય સૂરિએ તથા તેમના શિષ્ય ઉપાધ્યાય શાંતિચંદ્ર આદિએ; ખરતર ગચ્છીય જિનચંદ્ર સૂરિએ; અને નાગપુર તપગચ્છીય પદ્મસુંદર ઉપાધ્યાયે અકબર બાદશાહને જૈન ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવી તેની તેના પ્રત્યે સદ્ભાવના ખેંચી અનેક જૈન તીર્થ સંબંધી ફરમાનો, જીવ–વધ–બંધની આજ્ઞાઓ અને પુસ્તકો, સ્થાન વગેરેનાં ઇનામો પ્રાપ્ત કર્યાં. જહાંગીરે ત૦ વિજયસેન સૂરિ અને ખ૦ જિનસિંહ સૂરિને મોટાં ધાર્મિક બિરૂદો આપ્યાં, અને શાહજહાંએ પણ સહાનુભૂતિ દાખવી. આ સામાન્ય રીતે શાંતિની શતવર્ષીમાં અન્ય ધર્મોમાં પણ ઘણી જાગ્રતિ આવી અને સાહિત્ય વૃદ્ધિ થઇ.

સં૦ ૧૬૦૦ માં તળ અમદાવાદમાં જન્મનાર દાદુજીએ ત્યાગી ફકીર બની જયપુરમાંના રાજ્યમાં ઘણો જીવન–કાળ કાઢી ૧૬૪૨ માં અકબર સાથે ધર્માલાપ કર્યો. વેદાન્ત જ્ઞાન સામાન્ય મનુષ્યોને ગળે ઉતારવા સરલ રીતિથી લોક–ગમ્ય ભાષામાં ઉપદેશ કર્યો: મુખ્ય વાત એ હતી કે

આપા મટૈ, હરિ ભજૈ, તન મન તજૈ વિકાર,
નિર્વૈરી સબ જીવસો, દાદૂ યહુ મત સાર.

એક પરમેશ્વર જગતનો સાર છે. તે પરબ્રહ્મ ઇષ્ટદેવ તે 'રામ' છે. તેની ઉપાસનાથી સુખની પ્રાપ્તિ; જગતનાં સુખો તેની પાસે નિઃસાર છે. તે પરમમય આનંદમય સુખ પ્રાપ્ત કરવા દાદૂ દયાલે બીજાં સાધન માર્ગોમાં જણાતા બાહ્ય આડંબરી પ્રપંચ (જેવા કે રામાનુજ, વલ્લભાદિ સગુણ પૂજાઓમાં), કોરી બંદગી આદિને તુચ્છ બતાવ્યા. સર્વ સાથે દ્વેષ તજી હળી મળી રહેવું અને સર્વ જીવ પર દયા દૃષ્ટિ રાખવાની તેણે આજ્ઞા કરી. આ પ્રમાણે એવાં સાધનો તેણે બતાવ્યાં કે ભિન્ન મતવાળા હિન્દુ મુસલમાન આદિ અવિરોધે આચરી શકે. તે સં૦ ૧૬૬૦ માં નારાયણ ગામમાં (નારાણે) સ્વર્ગસ્થ થયા. તેના

Aho ! Shrutgyanam

શિષ્ય સુન્દરદાસે (જન્મ સં૦ ૧૬૫૩, દાદૂજી પાસે દીક્ષા સં૦ ૧૬૫૯, મરણ ૧૭૪૬) વેદાન્ત જ્ઞાનને સુમધુર સરલ અને ઉચ્ચ હિન્દી કાવ્યમાં વિવિધ પ્રકારની રચના કરી. તેમણે અદ્વૈત બ્રહ્મવિદ્યાનો પ્રચાર કરવાથી અને તેઓ અતિ કુશલ વિદ્વાન્ હોવાથી તેમને દાદૂ પંથીઓ 'બીજા શંકરાચાર્ય' કહે છે. [૧]

ગોસ્વામી તુલસીદાસઃ—(જન્મ સં૦ ૧૬૦૦; મરણ સં૦ ૧૬૮૦) આ હિન્દી સાહિત્યના અપ્રતિમ મહાકવિ છે. તેમણે રામાયણ રચી તે એટલી બધી આજસુધી પ્રસિદ્ધ છે કે, તેનું વાંચન દરેક હિન્દી કુટુમ્બમાં થાય છે. તેમજ અનેક હિન્દી કાવ્યો રચ્યાં. અકબરના પ્રસિદ્ધ કવિ ગંગના તથા અન્ય હિન્દી પ્રસિદ્ધ કવિ વિહારી તથા કેશવદાસના સમકાલીન છે.

મહારાષ્ટ્રમાં અઢાર પર્વના મહાભારતને મરાઠીમાં પહેલવહેલાં અવતારનાર કવિ વિષ્ણુદાસ, અને મુકતેશ્વર (જન્મ ૧૬૫૬, સ્વર્ગ૦ ૧૭૦૬) તેમજ પ્રસિદ્ધ સંતકવિઓ એકનાથ (જન્મ સં૦ ૧૬૦૫, સ્વ૦ ૧૬૫૬); તુકારામ (જન્મ સં૦ ૧૬૩૪ યા ૧૬૬૪–સ્વ૦ ૧૭૦૮), સમર્થ રામદાસ (જન્મ સં૦ ૧૬૬૫ સ્વ૦ ૧૭૩૮) આદિ થયા.

ગૂર્જર ભાષાના આ યુગ માટે એમ કહેવામાં આવે છે કે 'જે ભાષાના પ્રથમ યુગમાં—સાહિત્યના પ્રભાતમાં—નરસિંહ મહેતા જેવા ભક્ત કવિનાં પ્રભાતિયાં ગાજી રહ્યાં હતાં તેના મધ્ય યુગમાં—સોળમા અને સત્તરમા શતકમાં—કવિતાનાં સ્વર્ગીય ગાનનો ધ્વનિ છેક મન્દ પડી ગયો'—આ વાત સત્ય નથી. જૈનેતર ગૂર્જર કવિઓ આ યુગમાં વધુ સંખ્યામાં મળી નથી આવ્યા તેથી તેવી વાત મૂકવામાં આવે તે સ્વાભાવિક છે, પણ મને ખાત્રી છે કે આ ઉન્નતિના અને જાગ્રતિના યુગમાં અનેક જૈનેતર ગૂર્જર કવિઓ થયા હોવા જોઈએ; અને તે શોધખોળ કરતાં સાંપડી શકશે. જ્યારે મધ્ય યુગમાં જૈન કવિઓ માટે તો નિર્વિવાદ રીતે સ્પષ્ટ કહી શકાય તેમ છે કે તેમણે સાહિત્યની ધારા અખંડ નિરાવરણ અને નિર્મલ રાખી, તેનામાં ઓજસ્‌વાળું પયઃ સિંચી તેને બલવતી, વેગવતી અને ઉજ્વલ બનાવી હતી.

આ સત્તરમા શતકમાં જેમ અંગ્રેજીમાં, રાણી એલિઝાબેથનો સમય (સં૦ ૧૬૧૫-

---

૧ રાઘવીય ભક્તમાલમાં જણાવ્યું છે કે 'શંકરાચાર્ય દૂસરો, દાદૂ કે સુંદર ભયો.' આ સુન્દરદાસજીએ સં૦ ૧૬૬૩–૧૬૮૨ કાશીમાં રહી વિદ્યા લઇ લોકને આપી. પછી બહુ પર્યટન કર્યું. ગુજરાતમાં પણ તે ઘણો કાળ રહ્યા હતા અને ગુજરાતી ભાષા પોતે શીખી લીધી હતી. તેના અપ્રસિદ્ધ 'દશોં દિશાકે સવૈયે'માં ગૂજરાત સંબંધી લખ્યું છે કેઃ—

'આભડછોત અતીત સૌં કીજિયે, બિલાઇ રૂ કૂકર ચાટત હાંડી'

આ પરથી જણાય છે કે વૈષ્ણવ સંપ્રદાયની અસરથી ગુજરાતમાં આભડછેટ પર લોકોનું ઘણું ધ્યાન રહેતું હશે.

Aho ! Shrutgyanam

૧૬૬૦) ઉક્ત ભાષા માટે એક મહાન્ ઉન્નતિનો છે, તેવો જ અકબરનો રાજ્યત્વકાલ (સં૦ ૧૬૧૩-૧૬૬૨) સર્વ દેશી ભાષાઓ માટે વૃદ્ધિ અને ગૌરવનો યુગ થયો છે. બંને દેશોમાં આ સમૃદ્ધિશાલી સમયમાં અતિશય સંતોષજનક ઉન્નતિ થઈ છે અને સારા સારા કવિ અને લેખક પાક્યા છે. ઉર્દૂ ભાષાની સ્થાપના-પ્રતિષ્ઠા મુખ્યપણે આ સમયમાં થઈ. હિંદી ભાષાના સમયવીર-મુખ્ય નાયક ગોસ્વામી તુલસીદાસ આ યુગમાં થયા કે જેમનો કવિતાકાલ (સં૦ ૧૬૩૧-સં૦ ૧૬૮૦) છે. તે મહાનુભાવ-મહાત્માએ રામાયણ આદિ રચી હિન્દી પર જેટલો ઉપકાર કર્યો છે તેવો કોઇએ કર્યો નથી; કવિપ્રિયા અને રસિકપ્રિયાના કર્ત્તા હિન્દી કવિ કેશવદાસ (કવિતાકાલ. સં૦ ૧૬૪૮-૧૬૬૮) એક પ્રતિષ્ઠિત નામી કવિ થયા; આ ઉપરાંત અકબરના દરબારમાંના ગંગકવિ, બીરબલ ('બ્રહ્મ' ઉપનામથી) આદિ, તેમજ સેનાપતિ, દાદૂ દયાલ, સુન્દરદાસ, બનારસીદાસ પ્રભૃતિ કવિઓ ઉદ્ભવ્યા. આ બૃહત્કાલમાં આની પહેલાં સૂરદાસ આદિએ વ્રજભાષાદ્વારા કૃષ્ણ કવિતા પર અધિક ધ્યાન આપ્યું હતું, જ્યારે તુલસીદાસના કાલથી રામભક્તિની ધારા વહી અને પછી રામભક્તોએ કૃષ્ણની પેઠે રામનું પણ શૃંગારપૂર્ણ વર્ણન કર્યું. (આની અસર જૈનસાહિત્યમાં નેમિનાથ-રાજુલ અને સ્થુલિભદ્ર ને કોશ્યાના પ્રસંગો લઇ શૃંગાર પર મર્યાદિત સ્વરૂપે ઉતરી વૈરાગ્ય પરિણામ પર લાવવા પ્રત્યે જૈન કવિઓ પ્રેરાયા હોય એવું સંભવે છે) મહારાષ્ટ્રમાં મહાભારત મરાઠીમાં અવગત થયું અને તત્ત્વજ્ઞાનમય અભંગો-દાસબોધ જેવા તાત્ત્વિક ઉપદેશો ભાષામાં ઉતરવા લાગ્યા. આવા પ્રતાપી-ઉત્સાહભર્યા શતકમાં ગૂજરાતી સાહિત્યમાં ગાનનો ધ્વનિ મંદ પડે એ માનવાને આંચકો આવે.

મધ્યયુગ ભાષા

ગૂર્જર પ્રાચીન સાહિત્યના ત્રણ યુગ નામે અપભ્રંશ યા પ્રાચીન ગુજરાતી યુગ, મધ્યકાલીન યુગ અને અર્વાચીન યુગ એમ પાડીએ, તો અપભ્રંશ યુગમાં 'અપભ્રંશ કિંવા પ્રાચીન ગૂજરાતીનાં વ્યાકરણ આદિપ્રવર્ત્તક અને પ્રાકૃત બોલીઓના પાણિની'-હેમાચાર્ય (વિ૦ સં૦ ૧૧૪૫ થી ૧૨૨૯), પ્રબંધચિંતામણિના કર્ત્તા મેરૂતુંગ (વિ૦ સં૦ ૧૩૬૧), કવિ ધનપાલ (ભવિષ્યદત્ત કથાના કર્ત્તા) આદિ અનેક જૈન ગ્રંથકારોએ પ્રબલ સાહિત્ય-સેવા કરી છે. જૈન ભંડારોમાં અપભ્રંશનાં અનેક પુસ્તકો મળી શકે તેમ છે. એ સિદ્ધ વાત છે કે સંવત પંદરમા સૈકા સુધી સૌરાષ્ટ્ર, ગુજરાત અને રાજસ્થાન એ સર્વ પ્રદેશોમાં અપભ્રંશ ભાષા જ વ્યાપક ભાષા તરીકે પ્રવર્ત્તતી હતી. સંવત્ ૧૩ મા સૈકાથી સં૦ ૧૫૫૦ સુધીની ભાષાને અન્તિમ અપભ્રંશ ભાષા ગણી શકીએ. આને ડા૦ ટેસીટેરી જૂની પશ્ચિમ રાજસ્થાની ભાષા કહે છે.

મધ્યકાલીન યુગ વિક્રમ પંદરમા શતકથી સત્તરમા શતકનો ગણીએ તો તેમાં પંદરમા શતકમાં થોડા, પણ સોળમા શતકમાં ઘણા વધુ, અને સત્તરમામાં તો અતિ વિપુલ પ્રમાણમાં જૈનકવિઓ અને ગ્રંથકારો મળી આવે તેમ છે. મધ્યકાલીન કે અર્વાચીન યુગમાં

Aho ! Shrutgyanam

એક પણ શતક જૈનોની ગૂર્જર સાહિત્યસેવા વગરનું રહ્યું નથી. જૈન સાધુઓએ ભંડારોદ્વારા આ સર્વ સાચવી રાખ્યું છે, તે માટે તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે, અને તેથી તે સર્વ સાહિત્યનો ઇતિહાસ અખંડ લખી શકાશે. તેમ થયે વિશેષ પ્રભાનાં દર્શન થશે.

રા. નરસિંહરાવે આંકેલ ગૂજરાતી ભાષાના વિકાસક્રમની સમયરેખામાં સં૦ ૧૬૫૦ થી ૧૭૫૦ સુધીની ભાષાને 'મધ્ય ગૂજરાતી' કહી છે. આ મધ્ય ગૂજરાતી કે ઉપર નિર્દેશેલ મધ્યકાલીન યુગમાં પ્રસ્તુત કવિ (વિક્રમ સત્તરમો સૈકો) થયેલ છે. તે સૈકામાં અનેક સુંદર કૃતિઓ રચી પોતાને સિદ્ધહસ્ત આખ્યાન-કથા કવિ તરીકે સિદ્ધ કરનાર જૈનકવિઓ નામે કુશલ લાભ (કૃતિઓ સં૦ ૧૬૧૭ થી ૧૬૨૪), સોમવિમલ સૂરિ (કૃતિ સં૦ ૧૬૧૫ થી ૧૬૩૩), નયસુંદર (કવિતાકાલ સં૦ ૧૬૩૨ થી ૧૬૬૯), પ્રસ્તુત કવિ સમયસુંદર (સં૦ ૧૬૫૮ થી ૧૭૦૦), અને શ્રાવક કવિ ઋષભદાસ (કવિતાકાલ સં૦ ૧૬૬૨ થી ૧૬૮૭) એ પાંચ અગ્રભાગ લે છે. આ પૈકી ઋષભદાસ સંબંધી લેખ પાંચમી ગૂર્જર સાહિત્ય પરિષદ્‌માં મેં જરા વિસ્તારથી લખી મોકલ્યો હતો તે છપાઇ ગયો છે, અને નયસુન્દર સંબંધી મારો નિબંધ આનંદ કાવ્ય મહોદધિના છઠ્ઠા મૌક્તિકની પ્રસ્તાવનામાં પ્રકટ થયો છે. આ લેખદ્વારા કવિવર સમયસુન્દર સંબંધી-કંઇક હકીકત જણાવવા મેં પ્રયત્ન કર્યો છે.

મધ્યયુગનું કથાસાહિત્ય.

સં૦ સત્તરમા સૈકાના પ્રારંભથી લોકકથાઓને કાવ્યમાં મૂકવાના સુંદર પ્રયાસો જૈન સાધુઓના હાથથી થઇ રહ્યા હતા. માત્ર પોતાના ધાર્મિક કથા સાહિત્યમાંથી જ વસ્તુ લઈ જૈન સાધુઓએ પોતાનું-જૈન કાવ્ય સાહિત્ય અખંડપણે ઉત્પન્ન કર્યું છે (જેમ પ્રેમાનંદાદિએ કર્યું છે તેમ), એટલું જ નહિ, પણ તે ઉપરાંત લોકકથાઓને પણ કાવ્યમાં (શામળદાસાદિની માફક) ઉતારી છે; વિશેષમાં તેઓએ, એ બંને કવિઓ-પ્રેમાનંદ અને શામળભટ્ટ-ની અગાઉના સૈકામાં એટલે સંવત સત્તરમા સૈકામાં-તેના પ્રારંભથી ભાષામાં અવતાર્યું છે.

આના સમર્થનમાં કહીશું કે સં૦ ૧૫૬૦ માં સિંહકુશલે નંદબત્રીશી રચી, ઉદયભાનુએ વિ૦ સં૦ ૧૫૬૫ માં વિક્રમસેન ચોપાઇ રચી કે જેના માટે રા. મણિભાઈ બકોરભાઇએ નોંધ કરી છે કે 'પાંચસેં છાસઠ ટુંકનો આ પ્રબંધ છે. દરેક રીતે તે શામળભટની વાતો સાથે હરીફાઇ કરે તેવો છે. આ પ્રબંધની રચના કોઇપણ રીતે શામળભટ્ટની વાતોથી ઉતરતા પ્રકારની નથી'; ત્યારપછી[૨] કુશલલાભે સં૦ ૧૬૧૬ માં માધવ-કામકુંડલા

૨ કુશળલાભ-ખરતર ગચ્છના અભયધર્મ ઉપાધ્યાયના શિષ્ય. તેમણે ઉક્ત બે કથાઓ ઉપરાંત તેજસાર રાસ, વીરમગામમાં સં૦ ૧૬૨૪ માં, અગડદત્તરાસ, નવકાર છંદ, ગોડી પાર્શ્વનાથ છંદાદિ રચેલ છે.

Aho ! Shrutgyanam

પર રાસ, અને સં૦ ૧૬૧૭ માં મારૂઢોલા પર ચોપઈ; [૩]દેવશીલે સં૦ ૧૬૧૯ માં વેતાલ પચવીશી અને હેમાનંદે તેજ નામનો ગ્રંથ સં૦ ૧૬૪૬ માં; ગુણમેરૂસૂરિ શિષ્ય રત્નસુંદર ઉપાધ્યાયે પંચોપાખ્યાન (પંચતંત્ર) ચતુષ્પદી સં૦ ૧૬૨૨ માં સાણંદમાં અને શુકબહોતરી ઉર્ફે રસમંજરી સં૦ ૧૬૩૮ માં ખંભાતમાં, [૪]વચ્છરાજે નીતિશાસ્ત્ર પંચાખ્યાન (પંચતંત્ર) ચોપઈ સં૦ ૧૬૪૮ માં; [૫]હીરકલશે સિંહાસનબત્રીશી સં૦ ૧૬૩૬ માં; [૬]મંગલમાણેકે વિક્રમાદિત્ય અને ખાપરા ચોરનો રાસ સં૦ ૧૬૩૮ માં; નરપતિ કવિએ વિક્રમાદિત્ય ચોપઈ સં૦ ૧૬૪૯ માં અને નંદબત્રીશી; [૭]હેમરત્ને ગોરાવાદલ પદમિણી કથા ચોપઇ સં૦ ૧૬૬૦ માં; સારંગે ભોજપ્રબંધ ચોપઇ સં૦ ૧૬૫૧ માં; અને બિલ્હિણ પંચાશિકા; અને કનકસુંદરે સં૦ ૧૬૬૭ માં સગાલ શા રાસ; એમ અનેક કવિઓએ અનેક કૃતિઓ રચી છે. જૈનેતરમાં માત્ર એકાદ જેમકે સં૦ ૧૫૭૪ માં આમ્રપદ્ર (આમોદ)ના કાયસ્થ કવિ નરસા સુત ગણપતિએ માધવાનળની કથા ગૂજરાતીમાં બનાવેલી લોકકથા મળી આવી છે અને શોધ કરતાં બીજી પણ થોડી ઘણી મળી આવે. જો કે સત્તરમા શતકના ઘણાખરા મળેલા ગ્રંથો ધાર્મિક છે, પણ તેમાં આ લોકકથાના ગ્રંથ મળવાથી તેમાંથી લૌકિક બાબતો ઘણી પ્રાપ્ત થઇ શકે તેમ છે.

કેટલાકો એમ માનતા હતા અને માને છે કે ગૂજરાતીમાં વાર્ત્તાઓ લખનાર મૂળ કવિ શામળભટ્ટ આદિ છે; પરંતુ તેમની પહેલાંના જૈન રાસાઓમાંથી અનેક રાસાઓ વાર્ત્તાઓ રૂપે બનાવેલા મળી આવે છેઃ એ વાત ઉપર કર્ત્તાઓ અને તેમની કૃતિઓનો

---

૩ દેવશીલ–તપાગચ્છના સૌભાગ્યસૂરિ શિ૦ સોમવિમલસૂરિ શિ૦ લક્ષ્મીભદ્ર શિ૦ ઉદયશીલ શિ૦ ચારિત્રશીલ શિ૦ પ્રમોદશીલના શિષ્ય. તેની આ કૃતિ રા. જગજીવનદાસ દયાલજી મોદીએ વડોદરામાં પ્રસિદ્ધ કરી છે.

૪ વચ્છરાજ–પાર્શ્વચંદ્રસૂરિ–સમરચંદસૂરિ–રત્નચારિત્ર શિ૦ તેની અન્ય કૃતિઓ સં૦ ૧૬૪૨ માં ખંભાતમાં શાંતિનાથ ચરિત્ર.

૫ હીરકલશ–ખરતર દેવતિલક શિ૦ હર્ષપ્રભ શિ૦ અન્યકૃતિઓ સમ્યક્ત્વ કૌમુદી સં૦ ૧૬૨૪, કુમતિ વિધ્વંસ ચોપઇ સં૦ ૧૬૦૭.

૬ મંગલમાણેક—આંચલિક ગચ્છના બિડાલંબ ગચ્છ, મુનિરત્ન–સૂરિ આનંદરત્ન–સૂરિ જ્ઞાનરત્ન ઉદયસાગર-ભાનુભટ્ટ શિ૦ તેણે વિશેષમાં અંબડ કથાનક ચોપાઇ સં. ૧૬૩૮ જેઠ શુદ ૧૫ ગુરૂએ શરૂ કરી સં. ૧૬૩૯માં કાર્ત્તક શુદ ૧૩ ઉજેણીમાં નિઝામના રાજ્યમાં પૂરી કરી છે.

૭ હેમરત્ન—પૌર્ણમિક ગચ્છ દેવતિલક સૂરિ–જ્ઞાન તિલક સૂરિ–પદ્મરાજ ગણિ શિષ્ય. અન્યકૃતિ શીલવતી કથા સં૦ ૧૬૭૩ પાલીમાં બનાવી.

આ બધા જૈન શ્વેતામ્બર સાધુઓ છે. ગૂજરાતના શ્વેતામ્બર સાધુઓએ કથા સાહિત્ય માટે કેવી સેવા બજાવી છે તે માટે જર્મન વિદ્વાન ડૉક્ટર હર્ટલકૃત "ઑન ધી લિટરેચર ઑફ ધી શ્વેતાંબરાસ્ ઑફ ગુજરાત." એ નામનું ચોપાનીયું અવલોકવું.

Aho ! Shrutgyanam

નામ નિર્દેશ કરી જણાવી છે; તે પરથી શામળભટ્ટને વાર્ત્તાઓના આદિ રચયિતા નહિ કહી શકાય. વિશેષમાં એ પણ સંભવ છે કે ૧૮ મા શતકમાં થયેલા શામળભટ્ટે પોતાની વાર્ત્તાઓનાં મૂળ-વસ્તુ પણ પ્રાચીન જૈન કવિઓના વાર્ત્તારૂપે લખાયેલ રાસાઓ પરથી પ્રાયઃ લીધેલાં હોય. સં૦ ૧૫૭૨ માં સિંહકુશલે નંદબત્રીશી રચી છે કે જે ટુંકી છે, તેની સાથે સરખાવો શામળભટ્ટની નંદબત્રીશી કે જે વિસ્તારવાળી થયેલી છે. ઉપરોક્ત કુશલલાભની માધવાનળ અને કામકુંડલાની કથા સાથે સરખાવો શામળભટ્ટે રચેલી બત્રીશ પુતળીની વાર્તામાંની ૨૬ મી માધવાનળની વાર્ત્તા, કે જે કેટલીક થોડી બાબતમાં જૂદી પડે છે; પણ તે શામળભટ્ટની કથા બહુ સંક્ષેપમાં છે અને ઝાઝા માલ વગરની છે.[૮] તેમ વૈતાળ પચીસી, સિંહાસન બત્રીશી, સુડાબહોતેરી વગેરે જેવી કૃતિઓ સાથે શામળભટ્ટની તે નામની કૃતિઓ સરખાવી શકાય. વખતે જૈન કવિઓએ જેમ લોકમાં પ્રચલિત કથાઓને એકત્રિત આકારમાં ગોઠવી સંગ્રહ કરી યા કોઇ અન્ય ભાષાના ગ્રંથોમાંથી સ્વ ભાષામાં ઉતારી હોય, તેવી રીતે સામળભટ્ટે પણ કર્યું હોય. લોક કથાના સાગર રૂપ કથાસરિત્સાગર, ક્ષેમંકર કૃત સિંહાસન દ્વાત્રિંશિકા અને સંસ્કૃત વેતાલ પંચવિંશતિ જૂની-પ્રાચીન કૃતિઓ છે.

કેટલાક એમ કહેતા હોય કે જૈન સાધુઓ શૃંગારસથી યુકત કાવ્યને તે રચે યા રચવાનો દાવો કરે તો તે જૈન ધર્મનો દીક્ષિત યતિ જ ન કહેવાય[૯] તો આના ઉત્તરમાં જણાવવવાનું કે ઉપરોકત કુશલલાભની માધવાનળની કથા શૃંગારરસથી ભરેલી ઉત્તમ પ્રતિની વાર્ત્તા છે, એ રા. હરગોવિન્દદાસ કાંટાવાળાએ સ્વીકાર્યું છે. જૈન કવિઓ અલબત ઉઘાડો અમર્યાદિત શૃંગાર નહિ મૂકે, કે જેથી જેમ શામળભટ્ટને માટે નર્મદ કવિને કહેવું પડયું કે 'શામળભટ્ટે કેટલીક વાર્તાઓ ન લખી હોત તો સારૂં' તેમ જૈન કવિઓ માટે કહેવું નહિ જ પડે. " વિશેષમાં જૈન સાધુઓ જેમ અમુક સદ્ગુણનું પ્રતિપાદન કરે છે, તેમ આ (માધવાનળની કથાના) ગ્રંથમાં શીળનો મહિમા બતાવ્યો છે, એટલે તે બાબતમાં તે (જૈન કવિ) શામળભટ્ટ કરતાં ચઢે છે.........આ કૃતિ શામળભટ્ટની પૂર્વેના શતકમાં રચાઇ હતી. " (રા. હરગોવિન્દદાસ કાંટાવાળા).

આ કથા તેમજ મારૂ ઢોલાની ચોપાઈ બંને જેસલમેરમાં ત્યાંના મહારાજા રાવળ માલદેવજીના પાટવીકુમાર શ્રી હરરાજજી (કે જેમણે વિ૦ સં૦૧૬૧૮ થી ૧૬૩૪ સુધી જેસલમેરનું રાજ્ય કર્યું) ના કુતુહલ અને વિનોદ અર્થે બનાવેલ છે. મારૂઢોલાની ચોપાઈ સંબંધી એવી વાત છે કે હરરાજજીએ સં૦ ૧૬૧૭ માં અકબરનું સ્વામીત્વ સ્વીકારી

૮ સ્વ. ચિમનલાલ ડાહ્યાભાઇ દલાલનો માધવાનળ કામકંદલાની લોક કથાપર 'સાહિત્ય' માં આવેલ લેખ.

૯ લખપતિ શૃંગાર એ મથાળાનો લેખ. સ્વ. કવિ જીવરામ અજરામર ગોર. ગુજરાતી દીવાળી અંક સં૦ ૧૯૬૭.

Aho ! Shrutgyanam

દિલ્હી દરબારમાં જવા આવવા માંડયું હતું. એમણે પૃથ્વીરાજની કરેલ 'વેલિ' (કૃષ્ણ રૂકિમણીનીવેલી) [૧૦]નાં વખાણ સાંભળી પોતે યુવરાજ હતા ત્યારે અને પટ્ટાભિષેક થયા પછી જેસલમેરના સર્વે કવિ અને વિદ્વાનોને એકઠા કરી 'મારૂઢોલાની વાર્તાના પ્રાચીન દોહા એકઠા કરી તેને વાર્તાના આકારમાં યથાક્રમે ગોઠવી જે ઉત્તમ ગ્રંથ બનાવશે તેને હું ઇનામ આપીશ' એમ કહી કેટલાક ગ્રંથો રચાવેલા પોતા પાસે તૈયાર હતા તેમાંથી સર્વોત્તમ જે ગ્રંથ બન્યો હતો તે બાદશાહને ભેટ ધર્યો. આ વાતને મારૂઢોલાની વાર્ત્તા પર જેટલા ગ્રંથો બન્યા છે તે હરરાજજીની આજ્ઞાથી બન્યા છે એવું છ સાત ગ્રંથોની પ્રશસ્તિ પરથી જણાતાં ટેકો મળે છે. (વાક્ સૌંદર્ય સં૦ ૧૯૭૩ માર્ગશીર્ષનો અંક).

આ રીતે આપણે આ મધ્યયુગના–સત્તરમા સૈકાના ખાસ વિશિષ્ટ ગુણો જોયા. જૈન કૃતિઓ અપ્રકટ હોવાના કારણે યા તે પર અલક્ષ હોવાના કારણે માત્ર જૈનેતર કૃતિઓ લઈ યુગોનાં લક્ષણો જૈનેતરો બાંધે અને તે માટે તેમજ અમુકના અમુક જૈનેતર ઉત્પાદક એમ સિદ્ધાન્તો (theories) ઘડે એ સ્વાભાવિક છે. પણ જે અત્ર ભારપૂર્વક નમ્ર વકતવ્ય છે તે એ છે કે જૈનકૃતિઓ પર લક્ષ રાખવાથી તે સિદ્ધાંતો ખંડિત બની ચૈતન્યશૂન્ય થાય તેમ છે. ગૂર્જર વાગ્દેવીનાં બંને સંતાનો-જૈનેતર તેમજ જૈનો-સમાન-દૃષ્ટિએ નિરખાવાં ઘટે. બંનેનો ફાળો સંયુક્ત અવિભકત પુંજી છે. કોઈ ઓછો, કોઈ વધુ ફાળો આપે, પણ એક્કેયનો અનાદર ન ઘટે. જૈનેતરોમાં સંસ્કૃત ભાષાપ્રત્યેના મોહને લીધે, યા મુસલમાનોના આક્રમણથી થયેલી હિન્દુ રાજ્યની પાયમાલીને કારણે ભાષાસાહિત્ય મુખ્યપણે ન ખીલ્યું હોય તો તે સંભવિત છે, તેમજ જૈનોમાં મુખ્યપણે ત્યાગી અને પરિભ્રમણશીલ સાધુઓ બ્રહ્મચર્ય સેવી વિદ્યાભ્યાસંગી રહી ભાષાસાહિત્યપ્રત્યેના મોહને લીધે તે વિશેષ ખીલવી શક્યા હોય તે તદ્દન સંભવિત છે; સ્વ૦ રણજીતરામ વાવાભાઇ મહેતાએ સત્યરીતે અને આગળ વધીને જણાવ્યું છે કે:–

"અલાઉદ્દીન ખીલજીના સરદારોએ ગુજરાતના હિંદુ રાજ્યને પાયમાલ કીધું ત્યાર પછી ચાલેલી અંધાધૂધીમાં નાસભાગ કરતા બ્રાહ્મણોએ શારદાસેવન ત્યજી દીધું, પણ મંદિરો–પ્રતિમા આદિની આશાતના થવા છતાં જૈનસાધુઓ પોતાના અભ્યાસમાં આસકત રહ્યા અને શારદા દેવીને અપૂજ ન થવા દીધી. આવા ધર્મપરાયણ અને વિદ્વાન્ સાધુઓને

૧૦ જુઓ ગુજરાતીનો દીવાળી અંક સં૦ ૧૯૭૭ પૃ. ૬૬. 'રાઠોડ પૃથ્વીરાજ અને વેલી ક્રિસન રૂકમણીરી' એ નામનો લેખ. તેમાં તેનો રચ્યા સં૦ ૧૬૩૪ આપેલ છે ને ભાટ ચારણો આગળ પરીક્ષા માટે સં૦ ૧૬૪૪ માં મૂકેલ હોય એમ તેની છેલ્લી બે કડીઓ પરથી જણાય છે. જો આ કડીઓ પાછળથી ઉમેરી ન હોય ને પૃથ્વીરાજની સ્વરચિત હોય, તો પછી હરરાજજી તે કૃતિની સામે મૂકવા બીજી કૃતિ સં. ૧૬૧૭ માં ઉત્પન્ન કરાવવા માંગે એ બંધબેસ્તું નથી. બાકી હરરાજજીના આનંદ માટે તે કૃતિ થઇ અને બનાવરાવી એ કથન સિદ્ધ છે.

Aho ! Shrutgyanam

પાટે, અમદાવાદની સલતનત તૂટી ત્યારે, શ્રી હીરવિજયસૂરિ નામે સાધુ હતા. આગ્રે જઈ ઈબાદતખાનામાં અકબર બાદશાહ અને અન્ય ધર્મીઓને તેમણે જૈનધર્મનો મહિમા બનાવ્યો.

"આ ઇતિહાસ શું કહે છે? ગુજરાતના અગ્રગણ્ય નાગરિક જૈનોનો સૂર્ય ગુજરાતના હિન્દુ સામ્રાજ્ય દરમ્યાન મધ્યાન્હમાં હતો અને હેમચંદ્રની માફક અમાસનોદિવસે પ્રકાશોજ્જવલ પૂર્ણિમા આણવા સમર્થ હતો. તેઓ મહિનાઓના મહિના સૂધી દરિયો ખેડી લાંબી સફરો કરી દેશદેશાવરની લક્ષ્મી લાવી ગુજરાતમાં ઢોળતા; પોતાનાં વીરત્વ અને વફાદારીથી રાજા પ્રજા ઉભયને સંકટ અને સૌભાગ્યના સમયમાં મદદ કરતા, અણહિલપુરની ગાદીનું ગૌરવ જાળવતા–વધારતા; બીજા દેવોનાં મંદિરો ખંડિયેર થઈ જતાં હતાં, છતાં સરસ્વતી દેવીનાં મંદિરો જૈન સાધુઓના ભીષ્મ પરિશ્રમને લીધે ઘંટનાદથી ગાજી રહ્યાં હતાં. દેલવાડાપરનાં વિમળશાહનાં દેહરાં જેવાં અનેક સૌંદર્યથી ગૂજરાત વિભૂષિત થતું હતું; રાજ્યની ઉથલ પાથલો, અંધાધૂધી, અને બીન સલામતી વારંવાર નડતી છતાં પોતાના ઉત્કૃષ્ટ વૈશ્ય ગુણોને લીધે ગૂજરાતનો વેપાર પડી ભાંગવા ન દીધો અને આજ પર્યંત વેપાર ખેડવાની લાયકાત અને શક્તિ તેજ રાખ્યાં."

(જૈનધર્મ પ્રકાશનો જ્યુબિલી અંક).

આટલું કહી હવે આપણે પ્રસ્તુત કવિનો પરિચય કરવા પ્રત્યે વળીશું.

કવિનો પરિચય.

કવિ પોતાના જૂદા જૂદા ગ્રંથમાં નાની મોટી પ્રશસ્તિ આપી પોતાનો કંઇક પરિચય કરાવતો ગયો છે. તે પરથી સમજાય છે કે પોતાનો ગચ્છ જૈનશ્વેતામ્બર મૂર્ત્તિપૂજક સંપ્રદાયના પૈકી ખરતર ગચ્છ હતો. તે ગચ્છના ઉત્પાદક સંબંધી એવો ઉલ્લેખ કરે છે કે:—

"જૈનોના છેલ્લા તીર્થંકર શ્રી મહાવીર સ્વામીની પટ્ટ પરંપરાએ દેવાચાર્ય થયા, તેમના પટ્ટધર નેમિચંદ્ર, તેના પછી ઉદ્યોતનસૂરિ થયા. તેમણે આબુગિરિના એક શિખર પર અષ્ટમ તપ આદરી સૂરિમંત્ર આરાધ્યો. ત્યાર પછી વર્ધમાનસૂરિ થયા. તેના શિષ્ય જિનેશ્વરે ગૂજરાતના રાજા દુર્લભરાજ (સં૦ ૧૦૬૬ થી ૧૦૭૮) ની રાજ્ય સભામાં શ્રી અણહિલ્લપુર (પાટણ) નગરે શ્વેતપટ (ચૈત્યવાસી) સાથે વાદ કરી તેઓનો પરાભવ કર્યો અને વસતિનો મનોહારી માર્ગ પ્રકટ કર્યો. તે સૂરિના પટ્ટધર સંવેગરંગશાલા નામના ગ્રંથના રચનાર જિનચંદ્રસૂરિ થયા અને તેના પછી પટ્ટધર, ખરતરગણનાયક, જૈન સિદ્ધાંત શાસ્ત્રો પૈકી નવ અંગ–આગમપર સંસ્કૃતમાં વૃત્તિ–ટીકા રચનાર અભયદેવસૂરિ થયા. ૧૧

૧૧. વિક્રમની સત્તરમી શતાબ્દિમાં (સં૦ ૧૬૧૭) અભયદેવસૂરિ ખરતર હતા કે નહિ તે સંબંધી પાટણમાં જ તપાગચ્છનાં ધર્મસાગર ઉપાધ્યાય અને ખરતર ગચ્છના ધનરાજ ઉપાધ્યાયને

Aho ! Shrutgyanam

" ત્યાર પછી તેમના શિષ્ય જિનવલ્લભસૂરિ થયા, તેમના પછી ૬૪ જોગણીને વશ કરનાર જિનદત્તસૂરિ થયા. તેના જિનચંદ્રસૂરિ, તેના પછી અનુક્રમે જિનપતિસૂરિ, જિનેશ્વરસૂરિ, જિનપ્રબોધસૂરિ અને જિનચંદ્રસૂરિ થયા. જિનચંદ્રસૂરિના આદેશથી તેજઃપાલે શાંતિનાથનું બિંબ બનાવ્યું, તેના પછી જિનકુશલસૂરિ (ખરતરગચ્છની પટ્ટાવલિમાં ૪૩ મા.) ત્યાર પછી જિનપદ્મ, જિનલબ્ધિ, જિનચંદ્ર, જિનોદય, જિનરાજ, જિનભદ્ર અનુક્રમે થયા. આ ૫૬ મા જિનભદ્રસૂરિએ જેસલમેર, જાબાલિપુર (જાલોર), દેવગિરિ, અહિપુર (નાગપુર–નાગોર), અને પાટણમાં પુસ્તક ભંડારો કરાવ્યા. (પટ્ટધર પદ સં૦ ૧૪૭૫ અને મરણ સં૦ ૧૫૧૪). ત્યાર પછી ક્રમે જિનચંદ્ર, જિનસમુદ્ર, જિનમાણિક્ય થયા. જિનમાણિકયના જિનચંદ્રસૂરિ થયા કે જે હાલ વિદ્યમાન છે. તે જિનચંદ્રસૂરિને અકબ્બર બાદશાહે આનંદથી 'યુગ પ્રધાન ' પદ આપ્યું."

ઉકત (૬૧ મા) જિનચંદ્રસૂરિના[૧૨] હસ્તદીક્ષિત મુખ્ય શિષ્ય સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાય[૧૩] થયા અને તેના શિષ્ય તરીકે હું, સમય સુંદર વાચક–ઉપાધ્યાય થયો. (જુઓ સં૦ ૧૬૭૬ માં રચેલી અર્થરત્નાવલી અથવા અષ્ટલક્ષીની પ્રશસ્તિ. પીટર્સન ચતુર્થ રીપોર્ટ. નં. ૧૧૭૪–પૃ૦ ૬૮.)

જબરો ઝઘડો થયો હતો. ધર્મસાગરે એવું પ્રતિપાદન કરવા માંગ્યું હતું કે ખરતર ગચ્છની ઉત્પત્તિ જિનેશ્વરસૂરિથી નહિ, પણ જિનદત્તસૂરિથી થઇ છે. અભયદેવસૂરિ ખરતર ગચ્છમાં થઇ શકતા નથી. જિનવલ્લભસૂરિએ શાસ્ત્ર વિરૂદ્ધ પ્રરૂપણા કરી છે. વગેરે ચર્ચાના વિષયો પોતાના ઔષ્ટ્રિક મતોત્સૂત્રદીપિકા નામના ગ્રંથમાં મૂકયા (રચ્યા સં૦ ૧૬૧૭.) આ ગ્રંથનું બીજું નામ પ્રવચન પરીક્ષા છે યા બંને જૂદા હોય–બંનેમાં વિષયો સરખા છે. તેમાંનાં એકનું બીજું નામ કુમતિકંદકુદ્દાલ છે. આથી બહુ હોહાંકાર થયો. બે ગચ્છ વચ્ચે અથડામણી અને અંતે પ્રબળ વિખવાદ ઉત્પન્ન થતાં તે કયાં અટકશે એ વિચારવાનું રહ્યું. જોખમદાર આચાર્યોને વચ્ચે પડયા વગર ચાલે નહિ, તેથી તપાગચ્છના વિજયદાનસૂરિએ ઉક્ત કુમતિકંદકુદ્દાલ ગ્રંથ સભાસમક્ષ પાણીમાં બોળાવી દીધો હતો અને તે ગ્રંથની નકલ કોઇની પણ પાસે હોય તો, તે અપ્રમાણ ગ્રંથ છે માટે તેમાંનું કથન કોઇએ પ્રમાણભૂત માનવું નહિ, એવું જાહેર કર્યું હતું. ખરતરગચ્છ વાળાએ પોતાના મતનું પ્રતિપાદન કરાવવા ભગિરથ પ્રયત્ન સેવ્યો હતો એ વાતના પ્રમાણમાં જણાવવાનું કે આપણા નાયક સમક સુંદર ઉપાધ્યાયજીના સં૦ ૧૬૭૨ માં રચેલા સામાચારી શતકમાં સં૦ ૧૬૧૭ માં પાટણમાં થયેલા એક પ્રમાણ પત્રની નકલ આપેલી છે કે જેમાં એવી હકીકત છે કે અભયદેવસૂરિ ખરતર ગચ્છમાં થયેલા છે એ વાત પાટણના ૮૪ ગચ્છોવાળા માને છે, અને એ પ્રમાણ પત્ર સાચું જણાય છે, અને તેનો હેતુ ઉપરનો કલહ–વાદ શમાવવા અર્થે હતો.

૧૨. **જિનચંદ્રસૂરિ**–ગોત્ર રીહડ, પિતા શ્રીવંત, માતા શ્રિયાદેવી. જ્ઞાતિ વણિક, તિમરી (તીવરી) –જોધપુર રાજ્ય) ની પાસે આવેલા વડલી ગામમાં સં૦ ૧૫૯૫ માં જન્મ. માત્ર નવ વર્ષની ઉમરે સં૦ ૧૬૦૪ માં જૈન સાધુની દીક્ષા. ૧૭ વર્ષની વયે સં૦ ૧૬૧૨ ભાદ્રપદ શુદિ નવમી ગુરૂવારે જેસલમેરમાં સૂરિપદ. તેમણે અકબર બાદશાહને જૈન ધર્મનો બોધ આપ્યો હતો અને બાદશાહે યુગમાં પ્રધાન

Aho ! Shrutgyanam

આ રીતે પોતાની ગુરૂ પરંપરા પોતે આપી છે તે અત્ર જણાવી. પોતે પોતાના ગચ્છનું નામ બૃહત્ ખરતર ગચ્છ આપેલું છે કારણ કે ખરતર ગચ્છમાં પોતાના સમય સુધીમાં અનેક શાખાઓ મૂળ વૃક્ષમાંથી નીકળી હતી અને પોતાનું મૂળ વૃક્ષમાંથી ચાલી આવેલ થડ બતાવવા 'બૃહત્' શબ્દ યોજેલ છે.

સં૦ ૧૬૪૯ ના ફાગણ શુદિ ૨ ને દિને યુગપ્રધાન જિનચંદ્ર સૂરિએ અકબ્બર બાદશાહના કહેવાથી લાહોરમાં (લાભપુરમાં) માનસિંહને આચાર્યપદ આપી તેમનું નામ જિનસિંહ સૂરિ[૧૪] રાખ્યું, તે સમયે તેજ જિનચંદ્ર સૂરિએ સ્વહસ્તે કવિ સમયસુંદર

પુરૂષ સૂચક 'યુગપ્રધાન' પદ આપ્યું હતું. એમ કહેવાય છે કે બાદશાહને જૈનધર્મી-જૈનધર્મ પ્રશંસક બનાવ્યો હતો (प्रबोधितो येन दया परेण ह्यकब्बराख्यः पतिसाहि मुख्यः-જિનલાભ સૂરિના સં૦ ૧૮૩૩ ના આત્મપ્રબોધની પ્રશસ્તિ). તેમને સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાય ઉપરાન્ત ૯૫ શિષ્યો હતા-તેમાં મુખ્ય સમયરાજ, મહિમારાજ, ધર્મ, નિધાન, રત્નનિધાન, જ્ઞાનવિમલ વિગેરે હતા. તેમનો સ્વર્ગવાસ વેનાતટે (બિલાડા-મારવાડ) સં૦ ૧૬૭૦ ના આશ્વિનવદિ બીજના દિને થયો. (જુઓ ઇંડિયન એંટિક્વરીમાં આપેલ ખરતર ગચ્છની પટ્ટાવલિ-મારૂં ભાષાન્તર, સનાતન જૈનના ૧૯૦૭ ના જુલાઇના અંકમાં વધુ માટે જુઓ રત્નસાગર ભાગ ૨ જો પૃ૦ ૧૨૫) તેમણે પોતાની પાસે ગેલી નામની શ્રાવિકાએ સં૦ ૧૬૩૩ ફા૦ વદ ૫ ને દિને બાર વ્રત સ્વેચ્છા પ્રમાણે ગ્રહણ કર્યાં તે સંબંધી 'ઇચ્છા પરિણામ ટિપ્પનક' યા બાર વ્રતનો રાસ ભાષામાં સં૦ ૧૬૩૩ માં બનાવ્યો છે. વળી મેડતામાં જેને હાલ 'લોઢારો મંદિર' કહેવામાં આવે છે તેમાં ચિંતામણિ પાર્શ્વનાથની પ્રતિમાની તેમણે સં૦ ૧૬૬૯ ના માઘ શુદિ ૫ શુક્રવારે મહારાજા સૂર્યસિંહના રાજ્યમાં પ્રતિષ્ઠા કરી છે (પ્રાચીન લેખ સંગ્રહ ભા૦ ૨ પૃ૦ ૩૦૭). તેમના જ સમયમાં તેમના અનુયાયી ભક્ત, પ્રખ્યાત કર્મચંદ્ર મંત્રીએ સં૦ ૧૬૩૫ ના ભયંકર દુકાળના વખતમાં સવાકરોડ રૂપીઆ ખર્ચી સત્રાકારો બંધાવી બહુ જનોને બચાવ્યા હતા અને તે કર્મચંદ્રે તેમનો યુગ પ્રધાન મહોત્સવ-તેમના શિષ્ય જિનસિંહ સૂરિનો આચાર્ય પદ મહોત્સવ અતિ દ્રવ્ય ખર્ચી સં૦ ૧૬૪૯ માં ઉજવ્યો હતો. વળી તેમના સમયમાં સોમજી અને શિવજી એ બે પ્રસિદ્ધ શ્રાવકોએ રાણકપુર, ગિરનાર, આબુ, ગોડીપાર્શ્વનાથ અને શત્રુંજય એ પાંચ જૈનતીર્થોએ સંઘ કાઢી લઇ ગયા હતા. (જુઓ સમયસુંદરની કલ્પસૂત્ર ટીકાની પ્રશસ્તિ). આ કર્મચંદ્ર મંત્રીએ સધર નગરમાં જિનકુશલ સૂરિનો મોટો સ્થૂભ સં૦ ૧૬૫૫ માહા શુદ ૧૦ મે કરાવ્યો. તે સિવાય બીજાં સ્થલોએ તેમના અનેક સ્થૂભ કરાવ્યા હતા.

૧૩ **સકલચંદ્ર ગણી**-તેઓ વિદ્વાન પંડિત અને શિલ્પશાસ્ત્રમાં કુશલ હતા. પ્રતિષ્ઠાકલ્પ શ્લોક ૧૧૦૦૦, જિનવલ્લભ સૂરિકૃત ધર્મશિક્ષા પર વૃત્તિ (પત્ર ૧૨૮), અને પ્રાકૃતમાં હિતાચરણ નામના ઔપદેશિક ગ્રંથ પર વૃત્તિ ૧૨૪૩૯ શ્લોકમાં સં૦ ૧૬૩૦ માં રચેલ છે.

૧૪. **જિનસિંહ સૂરિ**-પિતા ચાંપસી, માતા ચતુરંગા દેવી, ગોત્ર ગણધર ચોપડા, વણિક્ જ્ઞાતિ. જન્મ ખેસર (ખેતાસર) ગામમાં સં૦ ૧૬૧૫ ના માગશર શુદિ પૂર્ણિમાને દિને; તેમનું મૂલ નામ માનસિંહ. દીક્ષા બીકાનેરમાં સં૦ ૧૬૨૩ ના માગશર વદિ ૫ ને દિને; વાચક-ઉપાધ્યાય પદ જેસલમેરમાં સં૦ ૧૬૪૦ ના માઘ શુદિ ૫ ને દિને; સૂરિપદ લાહોરમાં સં૦ ૧૬૪૯ ના ફાલ્ગુન શુદિ ૨ ને દિને. અકબ્બર બાદશાહને મળવા માટે કાશ્મીરમાં કઠિન વિહાર (મુસાફરી) કર્યો હતો. વાર, સિંદૂર અને ગજજણા (ગિઝની) આદિ દેશોમાં પણ તેમણે અમારિ એટલે જીવદયા-અહિંસા પ્રવર્તાવરાવી હતી. અકબર

Aho ! Shrutgyanam

તથા ગુણવિનય એ બે સાધુઓને ઉપાધ્યાય પદ આપ્યું. આ વાત ઉક્ત ગુણવિનય[૧૫]ઉપાધ્યાયે જ સં૦ ૧૬૫૫ માં રચેલા કર્મચંદ્ર મંત્રિવંશ પ્રબંધ–કર્મચંદ્રવંશાવલિ પ્રબંધમાં આપેલી છે. કે જે કર્મચંદ્ર મંત્રીએ આ આચાર્ય મહોત્સવ કરેલો. આ સમયે જ જિનચંદ્ર સૂરિને યુગ પ્રધાનપદ મળેલું જણાય છે.

વાચક પદ ગુણ વિનયનઇ, સમયસુંદરનઇ દીધઉ રે
યુગ પ્રધાનજીનઇ કરઈ, જાણિ રસાયણ સીધઉ રે
—શ્રી જિન શાસન ચિર જયઉ.

આ ઉત્સવંના શુભ કાર્યના ઉપલક્ષમાં બાદશાહ અકબ્બર ખંભાતના બંદર ઉપર એક વર્ષ સુધી કોઈ મગર કે માછલીઓ ન મારે એવો હુકમ બહાર પાડયો હતો. તેમ લાહોરમાં પણ એક દિવસ કોઇપણ જીવની હિંસા નહિ કરવાની આજ્ઞા ફેરવી દીધી હતી. (જુઓ ઉક્ત પ્રબંધ ઐતિહાસિક રાસમાળા ભા૦ ૩; જૈન ઐતિહાસિક ગૂર્જર કાવ્ય સંચય.) જુઓ પં૦ જયસોમ કૃત સંસ્કૃતમાં કર્મચંદ્ર મંત્રી પ્રબંધ. ઉક્ત જિનસિંહ સૂરિએ બાદશાહ પર પોતાનો પ્રભાવ પાડી તેની પાસેથી આષાઢ શુદિ ૯ થી આષાઢ શુદિ ૧૫ સુધીના સાત દિવસોમાં બીલકુલ જીવવધ ન થાય એવું ફરમાન મેળવ્યું હતું. આ અસલી ફરમાન પત્ર હાથ આવ્યું છે ને તે હિન્દી 'સરસ્વતી' માસિકના જૂન, સને ૧૯૧૨ ના અંકમાં છપાયું છે. આમાં હીરવિજય સૂરિના ઉપદેશથી પર્યુષણના આઠ અને બીજા ચાર એમ બાર દિવસો સુધીમાં જીવવધના નિર્બંધ માટે ફરમાન આપ્યું છે તેનો પણ ઉલ્લેખ કર્યો છે.

જિનચંદ્રસૂરિ એક પ્રભાવક મહાપુરૂષ હતા. તેમનાં જ્ઞાન અને આચારની ખ્યાતિ અકબ્બર બાદશાહે ઉક્ત કર્મચંદ્ર બછાવત પાસેથી સાંભળી પોતાની નિજકલમવડે ફુરમાન (વિનતિ) પંજાબના લાહોર નગરથી લખી અને પોતાના ખાસ મરજી દાન ઉમરાવો તે ગુરૂને બોલાવવા માટે મોકલ્યા. તે વખતે તે ગુરૂના ૮૪ શિષ્યમાં મુખ્ય સકલચંદ્ર ઉપાધ્યાયના શિષ્ય પંડિત સમયસુંદરજી પણ વિહારમાં સાથે હતા. તે વિહાર કયાંથી કયાં કર્યો અને લાહોરમાં આવ્યા પછી ઉપરોકત મહોત્સવ કેમ થયો એ સંબંધી સમયસુંદરેજ 'ગુરૂ ગુણ છંદ અષ્ટક' હિન્દીમાં બનાવેલ છે તે અત્ર જણાવીશું.

બાદશાહે પોતાના રાજવહિવટના છેલ્લા વર્ષમાં (સં૦ ૧૬૬૦ માં) દસ્તાવેજ કરી ફરમાન કરી આપ્યું હતું કે ભાદરવા શુદ ૯ થી ભાદરવા શુદ ૧૫ સુધી પોતાના સંપૂર્ણ રાજ્યમાં જીવહિંસા બંધ રાખવી. ત્યાર પછી જહાંગીર બાદશાહે તેમને 'યુગપ્રધાન' પદ આપ્યું હતું. પટ્ટધર જિનચંદ્ર સૂરિ સ્વર્ગસ્થ થતાં વેનાતટમાં (બિલાડા મારવાડમાં) ગચ્છનાયક પદ સં૦ ૧૬૭૦ ના પૌષ વદિ ૧૩ ને દિને મેડતામાં થયો. (જુઓ ઉપરોકત ખરતર ગચ્છ પટ્ટાવલિ; સનાતન જૈન, જુલાઇ ૧૯૦૭, રત્નસાગર ભા૦ ૨ પૃ૦ ૧૨૭; જ્ઞાનવિમલ કૃત સં૦ ૧૬૫૪ ની શબ્દ પ્રભેદ વૃત્તિમાંની ગુરૂ પટ્ટાવલિ; પીટર્સન રીપોર્ટ બીજો પૃ૦ ૬૫) તેમની પાટે જિનરાજ સૂરિ (બીજા) આવ્યા.

૧૫. ગુણવિનય વાચક–તેમણે ભાષામાં આ પ્રબંધ ઉપરાન્ત અંજનાસુંદરી પ્રબંધ સં૦ ૧૬૬૨

૧૬ સંતનકી સુખ વાણિ સુણી જિનચંદ મુણિંદ મહંત જતી,
તપજપ કરૈ ગુરૂ ગુજ્જરમેં પ્રતિબોધત હૈ ભવિકું સુમતી,
તબહી ચિતચાહન ચૂંપ ભઇ સમયસુંદરકે ગુરૂ ગચ્છપતી,
ભેજે પતસાહ અકબ્બરી છાપ બોલાયે ગુરૂ ગજરાજ ગતી. ૧

એજી ગુજ્જરતેં ગુરૂરાજ ચલૈ વિચમેં ચોમાસ જાલોર રહૈ,
મેદનીતટમેં મંડાણ કિયો ગુરૂ નાગોર આદરમાંન લહૈ,
મારવાડરિણી ગુરૂવંદનકોં તરસૈ સરસૈ વિચ વેગ વહૈ,
હરખ્યો સંઘ લાહોર આયે ગુરૂ પતસાહ અકબ્બર પાંવ ગહૈં. ૨

એજી સાહ અકબ્બરી વબ્બરકે ગુરૂ સૂરત દેખત હી હરખૈ,
હમ જોગી જતી સિદ્ધ સાધ વ્રતી સબહી ખટ દરસન કે નિરખૈ,
ટોપી બસ ડમાવાસ ચંદ ઉદય અજ તીન બતાય કલા પરખૈ,
તપ જપ દયા દર્મ ધારણકોં જગ કોઈ નહીં ઇનકે સરખૈ. ૩

ગુરૂ અમૃતવાણિ સુણી સુલતાન એસા પતસાહ હુકમ્મ કિયા,
સબ આલમ માંહિ અમાર પલાય બોલાય ગુરૂ ફુરમાણ દિયા,
જગજીવ દયા ધર્મ દાક્ષણતૈં જિન સાસનમૈં જુ સોભાગ લિયા,
સમયસુંદર કહૈ ગુણવંત ગુરૂ દૃગ દેખત હરખત ભવ્ય હિયા. ૪

એજી શ્રીજી ગુરૂ ધર્મ ધ્યાન મિલૈ સુલતાન સલેમ અરજ્જ કરી,
ગુરૂ જીવ દયા નિત પ્રેમ ધરૈ ચિત અંતર પ્રીતિ પ્રતીતિ ધરી,
કર્મચંદ બુલાય દિયો ફુરમાણ છોડાય ખંભાયતકી મછરી,
સમયસુંદરકે સબ લોકનમૈં નિત ખરતર ગચ્છકી ખ્યાતિ ખરી. ૫

ના ચૈત્ર શુદ ૧૩ બુધે; ગુણસુંદરી ચોપઇ; અંચલમત સ્વરૂપ વર્ણન રાસ સં૦ ૧૬૭૪ માઘ શુદ ૬ રવિવારે માલપુરમાં રચેલ છે. ખરતર ગચ્છની ક્ષેમ શાખામાં ક્ષેમરાજ ઉપાધ્યાયના પ્રબોધમાણિક્ય શિષ્ય, તેના જયસોમ, અને તેના તેઓ શિષ્ય થાય. આ કવિએ સંસ્કૃતમાં પણ અનેક ગ્રંથો રચ્યા છે તે પૈકી ખંડ પ્રશસ્તિ કાવ્ય ટીકા સં૦ ૧૬૪૧, દમયંતી ચંપૂ ટીકા સં૦ ૧૬૪૬, રઘુવંશ ટીકા સં૦ ૧૬૪૬, વૈરાગ્યશતક ટીકા સં૦ ૧૬૪૭, ઇંદ્રિય પરાજયશતક વૃત્તિ સં૦ ૧૬૬૪, ઉત્સૂત્રોદ્‌ઘટ્ટન કુલક ખંડન સં૦ ૧૬૬૫ કે જેમાં ઉપરોક્ત ધર્મસાગર ઉપાધ્યાયના મતનું ખંડન કરેલું જણાય છે, સંબોધ-સત્તરી ટીકા, લઘુઅજિનશાંતિ સ્તોત્ર ટીકા છે. આ પરથી તેઓ એક સત્તરમા સૈકામાં વિદ્વાન્ ટીકાકાર અને સાક્ષર હતા એ નિર્વિવાદ છે. (વધુ માટે જુઓ એ૦ રાસસંગ્રહ ભાગ ૩ જો)

૧૬. ૨. મેદનીતટ–મેડતા; મારવાડરિણી–મારવાડની સ્ત્રીઓ. ૩. ટોપી......હરખે=આનો અર્થ બરાબર સમજાતો નથી, પણ એમાં એમ હોવાનો સંભવ છે કે ટોપી ઉડાડી અધર રાખી હોય, અમાવાસને દિને ચંદ્રનો ઉદય બતાવ્યો હોય અને ત્રણ બકરાં બતાવીચમત્કાર બતાવ્યા હતા. ૪. ભવ્ય—પાઠાંતર હોત. મછરી—માછલી પકડવાનું ખંભાતમાં થતું હતું તે ફુરમાનથી દૂર કરાવ્યું. ૬–ચામર છત્ર......જિયરે –પાઠાંતર–જુગપ્રધાનકાએ ગુરૂદૂં ગિગડદું ગિગડદું ધુંધું બાજીયેરે સમયસુંદરકે ગુરૂ માન ગુરૂ, પતિસાહ અકબ્બર ગાજીયેરે. (જૈન સંપ્રદાય શિક્ષા પૃ. ૬૪૯)

Aho ! Shrutgyanam

એજી શ્રી જિનદત્ત ચરિત્ર સુણી પતસાહ ભયે ગુરૂ રાજિયે રે,
ઉમરાવ સબૈ કર જોડ ખડે પભણે અપણે મુખ હાજિયે રે,
ચામર છત્ર સુરા તબ ભેટ ગિગડદૂં ધૂંધૂં બાજિયે રે,
સમયસુંદર તૂંહી જગત્ર ગુરૂ પતસાહ અકબ્બર ગાજિયે રે. ૬

હેજી જ્ઞાન વિજ્ઞાન કલા ગુણ દેખ મેરા મન સદગુરૂ રીઝીયેજી,
હુમાયૂકો નંદન એમ અખૈ, અબ સિંઘ (માનસિંઘ) પટોધર કીજીયેજી,
પતસાહ હજૂર થપ્યોં સંઘ સૂરિ મંડાણ મંત્રીશ્વર વીંઝીયેજી,
જિણચંદ પટે જિણસિંહ સૂરિઃ ચંદ સૂરજ જૂં પ્રતપીજીયેજી. ૭

હેજી રીહડવંસ વિભૂષણ હંસ ખરતર ગચ્છ સમુદ્ર શશી,
પ્રતપ્યો જિન માણિક્ય સૂરિ કૈ પાટ પ્રભાકર જ્યૂં પ્રણમૂં ઉલસી,
મન શુદ્ધ અકબ્બર માંનત હૈ જગ જાણુત હૈ પરતીત એસી,
જિનચંદ મુણીંદ ચિરં પ્રતપો સમયસુંદર દેત આશીશ એસી.× ૮

આ પરથી એમ અનુમાન થાય છે કે જિનચંદ્રસૂરિ, અકબર બાદશાહે બોલાવવાથી ગૂજરાતમાં હતા ત્યાંથી અનેક શિષ્યો સાથે લઇ ગયા તેમાં સમયસુંદર હતા. ગૂજરાતમાંથી વિહાર કરતાં પહેલાં જાલોર, ત્યાંથી મેદિનીતટ-મેડતા, નાગોર એમ મારવાડમાંથી પસાર થઇને લાહોર આવ્યા.

સં૦ ૧૬૪૯ પહેલાં તો સમયસુંદર ગૂજરાતમાં જ રહ્યા હતા અને સં૦ ૧૬૪૯ માં લાહોર આવી ઉપાધ્યાય પદ મેળવી પછી તે બાજુ ને વિશેષમાં મેવાડ—મારવાડમાં પ્રવાસ કર્યો છે, અને તેથી તેમની મુખ્ય ગૂજરાતી ભાષામાં અનેક દેશોના પ્રાન્તીય શબ્દો, મારવાડી શબ્દો, ફારસી શબ્દો જોવામાં આવે છે. આ વાત તેમણે જે ગ્રંથો રચ્યા તેના નિર્દિષ્ટ સ્થલપરથી-તે ગ્રંથોપરથી જણાઈ આવે છે.

×આ અષ્ટક 'મહાજન વંશ મુક્તાવલિ'–ઉ૦ રામલાલ ગણી. રાંઘડી વિદ્યાશાલા બીકાનેરમાંથી તેની પ્રસ્તાવના પૃ૦ ૫-૬ પરથી ઉતારેલું છે. તેમાં વિશેષ જણાવ્યું છે કે "આ વખતે નકાસ (ચિતારા) એ તસવીર બાદશાહ અને ગુરૂમહારાજની ઉતારી તે બીકાનેરના ખરતર ભટ્ટારક શ્રી પૂજ્યજી પાસે મોજૂદ છે. ચિતારાએ બાદશાહ અકબ્બરની સભામાંથી બાદશાહની પાછળ મુખ્ય ૩ તસબીર લખી છે. બિરબલ, કરમચંદ બછાવત, તથા કાજી ખાનખા; અને શ્રી ગુરૂ મહારાજના સર્વ સાધુ સમુદાયમાંથી ૩ ત્રણ સાધુ નામ લખ્યાં છેઃ- વેષહર્ષ (ખરૂં નામ વિવેક હર્ષ) પરમાનંદ, તથા સમયસુંદર." આ છબી પ્રકટ થાય તો ઘણો પ્રકાશ પડે અને કવિ સમયસુંદરની તસબીર મળી આવે. આવીજ છબી તપાગચ્છીયહીરવિજય સૂરિની તે વખતની પ્રકટ થઇ છે (જુઓ સાક્ષર શ્રી જિનવિજયજીએ કૃપારસકોશની લખેલી ભૂમિકા સાથે પ્રકટ કરેલ છબી. તેમાં પણ અકબ્બર સાથે ત્રણ અમીરાદિ, અને હીરવિજય સાથે ત્રણ જૈન સાધુઓ છે. આ અને ઉપરની છબી બંને એકતો નથી એમ શંકા રહે છે. વળી આ અષ્ટક જૈન સંપ્રદાય શિક્ષા (યતિ શ્રી પાલચંદ્રની) માં પૃ૦ ૬૪૯ ની ટિપ્પણીમાં પ્રકટ થયું છે.

Aho ! Shrutgyanam

સં૦ ૧૬૫૮ અમદાવાદ, સં૦ ૧૬૫૯ ખંભાત, સં૦ ૧૬૬૨ સાંગાનેર, સં૦ ૧૬૬૫ આગ્રા, સં૦ ૧૬૬૭ મરોટ સં૦ ૧૬૬૮ મુલતાન, સં૦ ૧૬૭૨ અને ૧૬૭૩ મેડતા. સં૦ ૧૬૭૪ માં જિનચંદ્રસૂરિ મેડતામાં સ્વર્ગસ્થ થયા ને **જિનરાજસૂરિને**[૧૬ક] તેમની ગાદી ત્યાં મળી. સં૦ ૧૬૭૬ માગશર માસમાં રાણકપુર (સાદડી પાસે) ની જાત્રા કરી. [તે રાણકપુરની જાત્રા વખતે કરેલા સ્તવનમાં તેના મંદિરનું વર્ણન આપ્યું છે કે 'ચારે દિશાના ૨૪ મંડપ, ચાર ચતુર્મુખ (ચોમુખ) પ્રતિમા, તે દેહરાનું નામ ત્રિભુવન દીપક. ૮૪ દેરી, ભોંયરાં. મેવાડ દેશમાં. ૯૯ લાખ ખર્ચી પોરવાડ ધરણાકે બંધાવ્યું. ત્યાં ખરતર વસતિ છે ને તે ઉપરાંત બીજા પ્રાસાદ છે.] અને તે વર્ષમાં લાહોર ગયા, સં૦ ૧૬૮૧ જેસલમેરમાં હતા. આની પછી સં૦ ૧૬૮૨ માં જેસલમેર પાસેના પાંચ ગાઉ પરના-અસલ રાજ્યધાની લોદ્રવપુરમાં રહેતા[૧૭] **થેરૂ** ભણશાલીએ જેસલમેરથી શત્રુંજયપર જવાનો સંઘ કાઢયો.

૧૬ક. જિનરાજસૂરિ—(**બીજા**) પિતા શા ધર્મસી, માતા ધારલદે, ગોત્ર બોહિત્થરા. જન્મ સં૦ ૧૬૪૭ વૈ. શુ. ૭, દીક્ષા બીકાનેરમાં સં૦ ૧૬૫૬ ના માર્ગશીર્ષ શુદિ ૩, દીક્ષાનામ૰ રાજસમુદ્ર, વાચક (ઉપાધ્યાય) પદ સં૦ ૧૬૬૮, અને સૂરિપદ મેડતામાં સં૦ ૧૬૭૪ ના ફાગણ શુદ ૭ ને દિને થયું. તે મહોત્સવ ત્યાંના ચોપડા ગોત્રીયસાહ આસક કરણે કર્યો. તેમણે ઘણી પ્રતિષ્ઠાઓ કરી-દાખલા તરીકે સં૦ ૧૬૭૫ ના વૈશાખ શુદિ ૧૩ શુક્રે શત્રુંજય ઉપર અષ્ટમ ઉદ્ધારકારક અમદાવાદના સંઘવી સોમજી શિવજીએ ઋષભ અને બીજા જિનોની ૫૦૧ મૂર્ત્તિઓ બનાવરાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરી. ભાણવડમાં પાર્શ્વ-નાથની પ્રાતમાની સ્થાપના કરી હતી. સં૦ ૧૬૭૭ જેઠ વદિ ૫ ગુરૂવારે જહાંગીરના રાજ્યમાં અને શાહજાદા શાહજહાના સમયમાં ઉક્ત આસકરણે બનાવેલા મમ્માણી (સંગેમર્મર) ના પથ્થરના સુંદર વિહાર (મંદિર) માં મેડતામાં શાંતિનાથની મૂર્ત્તિની પ્રતિષ્ઠા કરી. એવું કહેવાય છે કે તેમને અંબિકા દેવીએ વર આપ્યો હતો. તેઓ પાટણમાં સં૦ ૧૬૯૯ ના આષાઢ શુદિ ૯ ને દિને સ્વર્ગસ્થ થયા. તેમણે નૈષધીય કાવ્યપર જૈનરાજી નામની વૃત્તિ રચી છે અને બીજા ગ્રંથો રચ્યા છે. તેમના કહેવાથી મતિસારે ધન્ય શાલિભદ્રનો રાસ સં૦ ૧૬૭૮ આસો વદિ ૬ ને દિને ખંભાતમાં રચ્યો હતો.

૧૭. થેરૂ ભણશાલી સંબંધી એવું કહેવાય છે કે તે લોદ્રવપુર (હાલનું લોધરા) માં ઘીનો વેપાર કરતો હતો. એક ઘીનું પાત્ર લઇ ભરવાડણ વેચવા આવી, તેની નીચે હરીવેલ હતી. આથી તે પાત્રના ઘીનો તોલ કરતાં જેમ જેમ ઘી કાઢતાં જાય તેમ તેમ તે પાત્ર ભરાતું જાય. આ હરીવેલ પાત્ર નીચેની ઇંઢોણી સાથે હતી, તે ઇંઢોણી લઇને થેરૂશાહે ફેંકી દીધી, પછી તેમાંથી તે વેલ લઇ તેના પ્રતાપે અખૂટ ઘીથી અઢળક સંપત્તિ તેણે પ્રાપ્ત કરી. આ વાત તેણે જિનસિંહ સૂરિને કહી, ગુરૂએ સુકૃતાર્થ કરવા કહ્યું ત્યારે થિરૂએ ત્યાં થઇ ગયેલા ધીરરાજા (ધીરાજી ભાટી) એ સં૦ ૧૧૯૬ પછી બંધાવેલા લોધરામાંના સહસ્રફણા પાર્શ્વનાથના મંદિરનો જીર્ણોદ્ધાર કર્યો તેમાં વિશાલપ્રતિમા સ્થાપન કરી. અને પોતાની બે પત્ની તથા બે પુત્રના કલ્યાણાર્થે ચાર બાજુએ ચાર દેવકુલિકાઓ બંધાવેલી છે. આની પ્રતિષ્ઠા નૈષધકાવ્ય ઉપર જૈનરાજી નામની ટીકાના કર્ત્તા મહા વિદ્વાન્ આચાર્ય જિનરાજ સૂરિએ સં૦ ૧૬૭૫ માં કરેલી છે. વિશેષમાં થેરૂશાહે જ્ઞાનભંડાર કરાવ્યા અને નવરત્નોનાં જિનબિંબ કરાવ્યાં. ક્રોડો રૂપીઆ ખર્ચ્યા, ત્યારપછી શત્રુંજયનો સંઘ સં૦ ૧૬૮૨ માં કાઢયો. આની પહેલાં બાદશાહ અકબ્બરે થેરૂશાહને દિલ્હી બોલાવી ઘણું માન આપ્યું. થેરૂશાહે નવ હાથી, પાંચસેં ઘોડા નજર કર્યા ત્યારે બાદશાહે

Aho ! Shrutgyanam

આમાં શ્રી જિનરાજસૂરિ પ્રમુખ અનેક આચાર્ય સાથે હતા અને સમયસુંદર ઉપાધ્યાય પણ આ સંઘમાં ગયા હતા. આ સંઘ શત્રુંજયની યાત્રા કરી આવ્યો—સં૦ ૧૬૮૨. પછી સમયસુંદર ૧૬૮૨ માં નાગોર આવ્યા, કે જ્યાં શત્રુંજય રાસ રચ્યો. ત્યાંથી સં૦ ૧૬૮૩ મેડતામાં, સં૦ ૧૬૮૫ લૂણકર્ણસર, સં૦ ૧૬૮૭ પાટણ. આ વર્ષમાં ભારે દુકાળ પડયો હતો કે જેનું વર્ણન તેમણે ચંપક ચોપઈમાં કર્યું છે. સં૦ ૧૬૯૧ ખંભાત, સં૦ ૧૬૯૪ અને ૧૬૯૫ જાલોર, સં૦ ૧૬૯૬ અમદાવાદ, સં૦ ૧૬૯૮ અહમદપુર (અમદાવાદ); એ રીતે એ સ્થલોએ આપણા કવિએ અચૂક નિવાસ કર્યો હતો.

આ ઉપરાંત સમેતશિખર (પાર્શ્વનાથહિલ જેને હાલ કેટલાક કહે છે), ચંપા, પાવાપુરી, ફલોધી (મારવાડ), નાડોલ, વીકાનેર, આબુ, શંખેશ્વર, જીરાવલા, ગોડી, વરકાણા, અંતરીક્ષ પાર્શ્વનાથ, તેમજ ગિરનાર વગેરે અનેક જૈન તીર્થોની જાત્રા કરી હતી. ૧૭૬ જેસલમેરમાં પોતે ઘણાં વર્ષો ગાળ્યાં લાગે છે.

'રાયજાદા' નો ખિતાબ બક્ષ્યો. આથી આની ઓલાદ 'રાયભણશાલી' કહેવાય છે. આગ્રામાં મોટું જિનમંદિર થિરૂશાહે કરાવ્યું કે જે હાલ મોજૂદ છે. ભણશાલી એ મૂળનામ એ રીતે પડયું કે લોદ્રપુરના યદુવંશી ધીરાજી ભાટી રાજાના યુવરાજ પુત્ર સગરની માતાને બ્રહ્મરાક્ષસ લાગ્યો હતો તેને સં૦ ૧૧૯૬ માં ખરતર ગચ્છના ચમત્કારી આચાર્ય જિનદત્ત સૂરિએ કાઢયો તેથી રાજા કુટુંબ સહિત જૈન થયો અને તેના પર આચાર્યે જૈનત્વની ક્રિયારૂપે ભંડશાલમાં વાસક્ષેપ કર્યો તેથી તેનું ગોત્ર ભંડશાલી (ભણશાલી) સ્થાપિત થયું, અને તેના આ વંશ જ થેરૂશાહ થયા. આ રીતે મૂલ ભણશાલી જૈન હતા. જુઓ મહાજન વંશ મુક્તાવલિ પૃ. ૨૯–૩૦.

૧૭૬. જેસલમેર—આનો કિલ્લો રાજસ્થાનમાં પ્રસિદ્ધ છે. યદુવંશી ભટ્ટી મહારાઉલોએ લોદ્રપુરથી આવી સં૦ ૧૨૧૨ માં બાંધ્યો. જૈનના ખરતર ગચ્છના શ્વેતામ્બરી સાધુઓનો આ પ્રબલ નિવાસરૂપ હતો. જિનરાજ, જિનવર્ધન, જિનભદ્ર આદિ સૂરિયોએ અનેક જૈન દેવાલયોની પ્રતિષ્ઠા કરી છે. કિલ્લાપર આઠ જૈન મંદિર છે; તે પૈકી મુખ્ય ચિંતામણી પાર્શ્વનાથનું છે—સં૦ ૧૪૫૮ માં જિન રાજસૂરિના આદેશથી તેના ગર્ભગૃહમાં સાગરચંદ્રસૂરિએ પ્રતિમા સ્થાપિત કરી, અને સં૦ ૧૪૭૩ માં મહારાઉલ લક્ષ્મણ સિંહના સમયે સંપૂર્ણ થયું. તે રાજાના નામ પરથી તેનું નામ લક્ષ્મણવિહાર રાખ્યું ને તેમાં જિનવર્ધન સૂરિએ પ્રતિષ્ઠા કરી. તેમાંની ચિંતામણી પાર્શ્વનાથની મૂર્ત્તિ ભટ્ટીઓની પ્રાચીન રાજધાની લોદ્રપુરથી આણેલી વેલુની હોઇ પ્રાચીન છે. બીજું મંદિર સંભવનાથનું સં૦ ૧૪૯૪ માં જિનભદ્ર સૂરિના ઉપદેશથી આરંભાયેલું તે ૧૪૯૭ માં પૂરૂં થયું ને તેમાં તે સૂરિએ પ્રતિષ્ઠા કરી. તે વખતે ૩૦૦ મૂર્ત્તિની પ્રતિષ્ઠા થઇ. આ મંદિરની નીચે જ્ઞાનભંડાર વાસ્તે ભોંયરૂં બંધાવ્યું. તેમાં ભંડાર રાખ્યો, જે હજુ વિદ્યમાન છે. તેમાં ૧૦ મીથી ૧૫ મી વિક્રમ સદીનાં લખાએલાં તાડપત્રના પ્રાચીન દુર્લભ પુસ્તકો મોજુદ છે. બીજા મંદિરો–આદીશ્વર, શાંતિ, શીતલ, ચંદ્રપ્રભ, મહાવીર વગેરેનાં વિક્રમના સોલમા શતકના પૂર્વાર્ધમાં નજીક નજીક ત્યાં બંધાવેલાં છે. આ તથા સર્વ બીજા મંદિરોમાં કુલ મળી આશરે ૭૦૦૦ જિનબિંબો છે. વળી બધાં મળી ૬ જ્ઞાન ભંડારો છે. ત્યાંના ભંડારોની પુસ્તકસૂચિ સદ્ગત સાક્ષર ચિમનલાલ ડાહ્યાભાઇ દલાલે મહાશ્રમ લઇ કરેલી તે ગાયકવાડ સરકારે હમણાં બહાર પાડી છે. જોધપુર બિકાનેર રેલ્વેમાં

Aho ! Shrutgyanam

જૈનોનાં ભારતવર્ષમાં તેમના તીર્થંકરોની જન્મભૂમિ, દીક્ષાભૂમિ, કેવલજ્ઞાનભૂમિ, નિર્વાણભૂમિ તરીકેનાં તીર્થો અનેક છે. તેમાં મુખ્ય શત્રુંજય, ગિરનાર, સમ્મેત–શિખરાદિ છે. તે સર્વની યાત્રા દરેક ચુસ્ત જૈનને માટે આવશ્યક ગણાય. આ કવિએ રચેલ 'તીર્થ-માલા સ્તવન' પરથી જણાય છે કે તેમાં લખેલ અષ્ટાપદ અને નંદીશ્વર એ શાસ્ત્રોક્ત તીર્થ સિવાય બધાંય તીર્થની યાત્રા તેમણે કરી હતી. તે સ્તવન નીચે પ્રમાણે છેઃ—

૧૮ **શત્રુંજે ઋષભ** સમોસર્યા ભલા ગુણ ભર્યારે, સિદ્ધા સાધુ અનંત, તીરથ તે નમુંરે,
તીન કલ્યાણક તિહાં થયાં, મુગતેં ગયારે, **નેમીશ્વર ગિરનાર**, તીરથ તે નમુંરે. ૧

અષ્ટાપદ એક દેહરો, ગિરિસેહરોરે, **ભરતેં** ભરાવ્યાં બિંબ—તી૦
આબુ ચૌમુખ અતિ ભલો, ત્રિભુવનતિલોરે, **વિમલ** વસઇ **વસ્તુપાલ**. ૨

સમેતશિખર સોહામણો, રલિયામણોરે, સિદ્ધા તીર્થંકર વીશ.
નયરી **ચંપા** નિરખીયે, હૈયે હરખીયેરે, સિદ્ધા શ્રી **વાસુપૂજ્ય**. ૩

પૂર્વ દિશે **પાવાપુરી**, ઋદ્ધિ ભરીરે, મુક્તિ ગયા **મહાવીર**.
જેસલમેર જુહારીયે, દુઃખ વારીયેરે, અરિહંત બિંબ અનેક. ૪

વિકાનેર જ વંદીયે, ચિર નંદીયેરે, અરિહંત દેહરાં આઠ.
સેરિસરો સંખેશ્વરો, પંચાસરોરે, **ફલોધી થંભણ** પાસ. ૫

અંતરિક અંજાવરો, અમીઝરોરે, **જીરાવલો** જગનાથ.
'**ત્રૈલોકય દીપક**' દેહરો, જાત્રા કરોરે, **રાણપુરેં** રિસહેશ. ૬

શ્રી **નાડુલાઇ જાદવો, ગોડી** સ્તવોરે, શ્રી **વરકાણો પાસ**.
નંદીશ્વરનાં દેહરાં, બાવન ભલાંરે, રૂચકકુંડલે ચાર ચાર. ૭

શાશ્વતી આશાશ્વતી, પ્રતિમા છતીરે, સ્વર્ગ મૃત્યુ પાતાલ.
તીરથ યાત્રા ફલ તિહાં, હોજો મુઝ ઇહાંરે, **સમયસુંદર** કહે એમ. ૮

બાઢમેર સ્ટેશનથી જેસલમેર ૯૨ માઇલ છે. તપાગચ્છે ૧૭ મી સદીમાં પ્રવેશ કર્યો ને મહાકષ્ટે ૧૮૬૯ માં કોટની નીચે તેમના તરફથી શિખરબંધ દહેરૂં બંધાયું. ત્યાંના દહેરાં સંબંધી વિગત જિનસુખ સૂરિએ જેસલમેર ચૈત્ય પરિપાટી બનાવેલ છે તેમાં મળે છે. (જુઓ પ્રાચીન તીર્થમાલા સંગ્રહ પૃ૦ ૧૪૬.)

૧૮. શત્રુંજય—પાલીતાણા કાઠીયાવાડમાં–આવેલો પવિત્રગિરિ. ગિરનાર–જુનાગઢમાં. આબુ કે જયાં વિમલ મંત્રીએ અને વસ્તુપાલ મંત્રીએ મહાન્ કારીગરીનાં અદ્દ્ભુત જૈન દેવાલયો બંધાવેલાં છે. સમેત-શિખર કે જયાં ૨૪ તીર્થંકરો પૈકી ૨૦ મુક્તિ પામ્યા છે–કલકત્તાથી જવાય છે.

ચંપાએ વાસુ પૂજ્યની નિર્વાણ ભૂમિ. પાવાપુરી—મહાવીરની નિર્વાણ ભૂમિ. જેસલમેર—વીકાનેર પ્રસિદ્ધ છે.

સેરીસરો, સેરિસા–કલ્લોલ પાસે. આ તીર્થનો હમણાં જ ઉદ્ધાર કરવામાં આવ્યો છે.

શંખેશ્વર પાર્શ્વનાથ–પાટણથી ૨૦ ગાઉ દૂર. પંચાસરો પાર્શ્વનાથ પાટણમાં વનરાજ ચાવડાએ સ્થાપેલ.

ફલોધી—મેડતારોડ સ્ટેશનથી પા ગાઉ. સં૦ ૧૧૮૧ માં પાર્શ્વનાથની પ્રતિમા સ્થાપાયેલી છે.

Aho ! Shrutgyanam

શિષ્ય પરંપરા.

હર્ષનંદન નામના એક વિદ્વાન્ શિષ્ય તેમને હતા. તે શિષ્યે સં૦ ૧૬૭૩ માં 'મધ્યાન્હ વ્યાખ્યાન પદ્ધતિ' તથા બીજો ગ્રંથ નામે 'ઋષિમંડલ સ્તવ '(મહર્ષિ સ્તવ) ગાથા ૨૭૧ નું,– તેના પર ૪૨૦૦ શ્લોકની ટીકા રચેલ હતી. ખરતર ગચ્છમાં લઘ્વાચાર્યીય નામનો આઠમો ગચ્છભેદ ખ૦ જિનસાગરસૂરિએ સં૦ ૧૬૮૬ માં કર્યો હતો તે ગચ્છને હર્ષનંદને ઘણો વધાર્યો. વિશેષમાં હર્ષનંદને, તથા ખ૦ સુમતિકલ્લોલ એ બંને એ મળીને તૃતીય જૈન આગમ નામે સ્થાનાંગ પરની વૃત્તિમાંની ગાથાઓ પર શ્લોક ૧૩૬૦૪ ની વૃત્તિ રચી હતી.

સમયસુંદરના શિષ્યના શિષ્ય નામે હર્ષકુશલ ગણી (ઉપાધ્યાય) હતા કે જેણે સમયસુંદરની ભાષાકૃતિ નામે ધનદત્તની ચોપઇ પોતે સંશોધિત કરી હતી.

સમયસુંદરની શિષ્ય પરંપરા અખંડ પણે સં૦ ૧૮૨૨ સુધી તો ચાલી આવેલી હતી એ વાત સિદ્ધ છે. સં૦ ૧૮૨૨ ના માગશર શુદિ ૪ ના દિવસે તેમની શિષ્ય પરંપરામાંના આલમચંદે 'સમ્યકત્વ કૌમુદી ચતુઃપદી' એ નામની પદ્યકૃતિ મક્ષુદાબાદમાં બનાવેલ છે તેમાં પોતાની પ્રશસ્તિ આપતાં જણાવે છે કે.

> યુગવર શ્રી જિનચંદ સૂરીંદા, ખરતર ગચ્છ દિણંદાજી
> રીહડ ગોત્ર પ્રસિદ્ધ કહંદા સદ્દગુરૂ સુજસ લહંદાજી.
> પ્રથમ શિષ્ય તસુ મહા વૈરાગી જિણુ મમતા સહુ ત્યાગીજી
> સકલચંદજી સકલ સોભાગી સમતા ચિત્તસું જાગીજી.
> તાસુ સીસ પરગટ જગમાંહી સહૂ કોઇ ચિત્ત ચાહૈજી
> પાઠક પદવીધર ઉચ્છાહૈ સમય સુંદરજી કહાહૈજી.
> તાસુ પરંપરમે સુવિચારી ભયે વાચક પદ ધારીજી
> કુશલચંદજી બહૂ હિતકારી તાસુ શિષ્ય સુખકારી જી.
> સદ્દગુરૂ આસકરણજી સુહાયા જગમે સુજસ ઉપાયાજી
> તાસુ શિષ્ય આલમચંદ કહાયા એ અધિકાર બણાયાજી.

આ રીતે સમયસુંદરની શિષ્ય પરંપરામાં કુશલચંદ ઉપાધ્યાય થયા, તેના શિષ્ય આસકરણજી અને તેના શિષ્ય આલમચંદ.

થંભણ—સ્થંભનક પાર્શ્વનાથ. હાલ ખંભાતમાં. તેની પ્રતિમા અભયદેવસૂરિના સમયમાં પ્રકટેલી.

અંતરિક્ષ પાર્શ્વનાથ—આકોલાથી લગભગ ૨૦ ગાઉ દૂર.

અજાવરો (અજાહરો) પાર્શ્વનાથ-કાઠિયાવાડના ઉંના ગામ પાસે.

અમીઝરો પાર્શ્વનાથ—ડુઆમાં (પાલણપુર તાલુકો.)

જીરાવલા પાર્શ્વનાથ (મારવાડ). નાડુલાઇ—મારવાડમાં. ગોડી પાર્શ્વનાથ—પારકરમાં. વરકાણા પાર્શ્વનાથ–મારવાડમાં.

Aho ! Shrutgyanam

સંસ્કૃત ભાષામાં કૃતિઓ.

કવિ એક સમર્થ વિદ્વાન્, ટીકાકાર, સંગ્રહકાર, શબ્દશાસ્ત્રી, છંદશાસ્ત્રી અને અનેક ગ્રંથોના અવલોકનકાર અને અવગાહનાર હતા એ તેમના નીચેના ગ્રંથો પરથી જણાઈ આવે છે. આ ગ્રંથો ગૂર્જર ભાષા સિવાયના છેઃ-

ભાવશતક શ્લોક ૧૦૧ સં૦ ૧૬૪૧.

રૂપકમાલા પર વૃત્તિ શ્લો૦ ૪૦૦, સં૦ ૧૬૬૩ આ વૃત્તિ કવિના પ્રગુરૂ ઉક્ત જિનચંદ્ર સૂરિના શિષ્ય રત્નનિધાન ગણીએ શોધી હતી.

કાલિકાચાર્ય કથા (સંસ્કૃત) સં૦ ૧૬૬૬.

સામાચારી શતક સં૦ ૧૬૭૨ મેડતામાં.

વિશેષ શતક (પત્ર ૬૭) સં૦ ૧૬૭૨ મેડતામાં, આનો ઉલ્લેખ કર્ત્તાએ પોતાની ગાથા સહસ્રીમાં કર્યો છે. રચ્યા દિન પાર્શ્વજન્મ દિને.

વિચાર શતક (પત્ર ૪૫) સં૦ ૧૬૭૪.

[૧૯] **અષ્ટલક્ષી** સં૦ ૧૬૭૬ (રસ જલધિરાગ ગોસમેતે) લાહોર. આ राजानो ददते सौख्यम्-એ રીતના વાકયના આઠ લાખ અર્થોવાળો ગ્રંથ છે. આનું બીજું નામ અર્થરત્નાવલિ છે. તે લાભપુર (લાહોર) માં પૂર્ણ કર્યો. (પી. રી. ૪ થો. પૃ. ૬૮-૭૩)-

આ અષ્ટલક્ષી ગ્રંથ કવિએ સં૦ ૧૬૪૯ પહેલાં શરૂ કરી તે વર્ષમાં એક પુસ્તકના પ્રમાણનો કરી નાંખ્યો હોવો જોઇએ એમ જણાય છે. એટલું જ નહિ પણ તે વર્ષમાં શ્રી અકબર બાદશાહે ખુદ રાજસભામાં વાચી સાંભળી આ પુસ્તક સ્વહસ્તે લઇ કવિના હાથમાં આપી તે રીતે પ્રમાણ-ભૂત કર્યો એવું પોતે આ ગ્રંથમાં જ જણાવે છેઃ—

૧૯આમાં પહેલા એક શ્લોકમાં સૂર્યદેવની સ્તુતિ કરી છે તે ખાસ ધ્યાન ખેંચે છે. ત્યારપછી બીજા શ્લોકમાં બ્રાહ્મી-સરસ્વતીની સ્તુતિ કરી જણાવે છે કે ' રાજા નો દદતે સૌખ્ય ' એ શ્લોકના એક પાદના મેં નિજબુદ્ધિની વૃદ્ધિ નિમિત્તે અર્થો કર્યા છે તેમાં તે પાદમાંના ' રાજા ' નો અર્થ સૂર્ય પણ થાય છે એમ જણાવી સૂર્યદેવનાં નામો આપે છેઃ-

सावित्री भाविता राजा विसृजो विघृणो विराट् ।
सप्तार्चिः सप्ततुरगः सप्तालोकनमस्कृतः ॥

એમ સ્કંદપુરાણમાં શ્રી સૂર્યસહસ્ર નામમાં જણાવ્યું છે તેથી રાજા એટલે શ્રી સૂર્ય, નઃ એટલે અમને સૌખ્ય આપે છે.

આમ જૂદા જૂદા અર્થો દરેક શબ્દોના મૂકી આખા વાકયનો અર્થ કરી, સર્વે મળી આઠ લાખ અર્થ કર્યા છે તે જણાવી છેવટે પોતાની પ્રશક્તિ આપે છે.

Aho ! Shrutgyanam

संवति १६४९ प्रमिते श्रावण शुक्ल १३ दिने सन्ध्यायां कश्मीरदेश विजयमुद्दिश्य श्री राजश्री **रामदास** वाटिकायां कृतप्रथमप्रयाणेन श्री **अकब्बर** पातशाहिना जलालदीनेन अतिजात साहिजाने श्री **सिलेम सुरत्राण** सामंतमंडलिकराजराजिविराजितराजसभायां अनेकवैयाकरणतार्किकविद्वत्तमभट्टसमक्षं अस्मद् गुरुवरान् युगप्रधानखरतर–भट्टारकश्री **जिनचन्द्र** सूरीश्वरान् आचार्य श्रीजिनसिंहसूरिप्रमुखकृतमुखसुमुखशिष्यव्रातपरिकरान् असमानसन्मानबहुदानपूर्वं समाहूयायमष्टलक्षार्थी ग्रन्थो मत्पार्श्वाद् वाचयांचक्रेऽवक्रेण चेतसा । ततस्तदर्थश्रवण समुत्पन्नप्रभूतनूतनप्रमोदातिरेकेण संजातचित्तचमत्कारेण बहुप्रकारेण श्रीसाहिना बहु प्रशंसापूर्वं 'पठ्यतां सर्वत्र विस्तार्यतां सिद्धिरस्तु' इत्युक्त्वा च स्वहस्तेन गृहीत्वा एतत् पुस्तकं मम हस्ते दत्वा प्रमाणी कृतोऽयं ग्रन्थः । अतः सोपयोगित्वात् श्रीसाहिनापि समुद्दिश्यार्थमाह–राजा श्री अकब्बरः नोऽस्मभ्यं सौख्यं सुखं ददते प्रजानामिति ।

એટલે—સંવત્ ૧૬૪૯ ના શ્રાવણ સુદ ૧૩ દિને સાંજે કાશ્મીર દેશપર વિજય કર્યો તે નિમિત્તે શ્રીરાજ શ્રી રામદાસ (આ રામદાસ તે જણાય છે કે જેણે સં૦ ૧૬૫૨ માં સેતુબંધ (રાવણવહો) ની ટીકા રચી છે અને જેને માટે પ્રાજ્ય ભટ્ટની રાજતરંગિણિમાં વિશેષ ઉલ્લેખ મળી આવે છે) ની વાડીમાં શ્રી અકબર બાદશાહ-જલાલદીને પ્રથમ પ્રયાણ કરી અતિ ખાનદાન શાહજાદા શ્રી સલીમ (પાછળથી જહાંગીર બાદશાહ) સુલતાન સામંત મંડલિક રાજાઓથી વિરાજિત રાજસભામાં અનેક વ્યાકરણીઓ તાર્કિક વિદ્વત્તમ ભટ્ટ-પંડિત સમક્ષ અમારા ગુરૂવર યુગપ્રધાન ખરતર ભટ્ટારક શ્રી જિનચંદ્ર સૂરીશ્વરને આચાર્ય શ્રી જિનસિંહસૂરિ વગેરે આણેલા શિષ્ય સમુદાય સહિતને અતિશય સન્માન આપીને બોલાવી આ અષ્ટલક્ષાર્થી ગ્રંથ મારી પાસે શુદ્ધ ચિત્તથી વંચાવ્યો, ત્યારપછી તેના શ્રવણથી તેને અતિ નવીન પ્રમોદનો અતિરેક થતાં ચિત્તમાં ચમત્કૃતિ થતાં બહુ પ્રકારે શ્રી બાદશાહે બહુ પ્રશંસા કરી અને 'સર્વત્ર વાંચી આનો વિસ્તાર કરો' એમ કહી સ્વહસ્તે તેને લઇને આ પુસ્તક મારા હાથમાં આપી આ ગ્રંથ પ્રમાણ ભૂત કર્યો. પછી પોતે જેના અર્થ કરવા ચાહે છે તે પદ લઈ રાજા એટલે બાદશાહ અકબર તે નઃ એટલે આપણને પ્રજાને સૌખ્ય આપે છે. આ ગ્રંથની અંતે કવિએ 'અકબર ગુણ વર્ણન અષ્ટક' મૂકેલ છે તે ખાસ અવગાહવા યોગ્ય છે-

વિસંવાદ શતક સં૦ ૧૬૮૫ આમાં સૂત્રોઆદિમાં પરસ્પર જે વિરોધ ભાસે છે તે બતાવ્યો છે.

सूत्र प्रकरण टीका प्रबंध संबंध चारु चरितेषु ।
ये केऽपि विसंवादा दृष्टा एकीकृता इह ते ॥ પી. રી. ૩ પૃ. ૨૯૦.

વિશેષ સંગ્રહ સં૦ ૧૬૮૫ લૂણકર્ણસરમાં.

આ રચવામાં શ્રી જિનસિંહ સૂરિના શિષ્ય ઉપાધ્યાય **સમયરાજ** ગણિએ (મદ્વિધૈક ગુરૂ—કે જે મારા વિદ્યાગુરૂનાજ શિષ્ય થાય) મારા પર અનુગ્રહ કરેલો છે એમ પોતે સ્વીકારે છે.

Aho ! Shrutgyanam

ગાથાસહસ્રી સં૦ ૧૬૮૬ (પી. રી. ૩ પૃ. ૨૮૮).

આમાં જમાલિ આદિ નિન્હવોની આવશ્યક ચૂર્ણિમાંથી ૧૬ ગાથા ટાંકી કહેલ છે કે આની વ્યાખ્યા સંબંધ સહિત મારા રચેલ વિશેષ સંગ્રહમાંથી વિદિત થશે. આમાંની અનેક ગાથાઓ જૈન ઇતિહાસ અને સાહિત્ય માટે ઉપયોગી થાય તેવી છે.

गाथाः कियत्यः प्रकृताः कियत्यः श्लोकाश्च काव्यानि कियंति संति ।
नानाविध ग्रंथ विलोकन श्रमादेकीकृता अत्र मया प्रयत्नात् ॥

જયતિહુયણ નામના સ્તોત્રપર વૃત્તિ સં૦ ૧૬૮૭ પાટણમાં.

[20] **દશવૈકાલિક સૂત્રપર** શબ્દાર્થ વૃત્તિ. ટીકા શ્લો. ૩૩૫૦ સં૦ ૧૬૯૧ ખંભાતમાં.

વૃત્તરત્નાકર વૃત્તિ સં૦ ૧૬૯૪ જાલોરમાં.

[21] **કલ્પસૂત્રપર** કલ્પકલ્પલતા નામની વૃત્તિ શ્લો૦ ૭૭૦૦.

નવતત્વપર વૃત્તિ.

વીર ચરિત્ર સ્તવ એ નામના જિનવલ્લભસૂરિ કૃત સ્તવન પર ૮૦૦ શ્લોકની ટીકા
વીરસ્તવ વૃત્તિ (દુરિયરવ સમીર વૃત્તિ)

સંવાદસુંદર ૩૩૩ શ્લો૦

ચાતુર્માસિક વ્યાખ્યાન.

રઘુવંશ વૃત્તિ (પત્ર ૧૪૫)

કવિ કાલિદાસ કૃત રઘુવંશ નામનો ગ્રંથ જૈનોમાં સાહિત્ય અર્થે પઢાવવામાં આવતો અને તેથી તેના પર વૃત્તિઓ પણ જૈન સાધુઓએ અનેક કરેલી જોવામાં આવે છે.

આ રીતે સંસ્કૃત ભાષામાં કૃતિઓ તેમણે કરી છે. વૃત્તિ–ટીકા ઉપરાંત અનેક ગ્રંથો સૂત્રો વાંચી તે સર્વેનું દિગ્દર્શન કરાવી તેમાં રહેલા વિસંવાદ શોધી પોતાનું બહુશ્રુતપણું દાખવ્યું છે.

---

૨૦. **દશવૈકાલિક**—સૂત્ર એ પ્રાચીન સય્યંભવ સૂરિકૃત જૈનાગમ છે તે પર પ્રસિદ્ધ હરિભદ્ર સૂરિએ ટીકા કરી છે. કર્ત્તા કહે છે કે તે ટીકા વિષમ છે તેથી શિષ્યોને અર્થે શીઘ્રબોધ થાય તે હેતુથી સુગમ કરી છે. (મુદ્રિત સં૦ ૧૯૭૫)

૨૧. **કલ્પસૂત્ર**—એ પણ પ્રાચીન, ભદ્રબાહુકૃત જૈનાગમ છે. આ પરની કર્ત્તાની ટીકા ડૅા૦ જેકોબી (કે જેણે અંગ્રેજીમાં આ સૂત્રનો અનુવાદ કરેલ છે. જુઓ સેક્રેડ બુક્સ ઓફ ધ ઇસ્ટ) ના કહેવા પ્રમાણે જિનપ્રભ મુનિએ કલ્પસૂત્ર પર રચેલી સંદેહવિષૌષધિ નામની ટીકાનો માત્ર સંક્ષિપ્ત સાર–abstract–છે. આ જિનરાજસૂરિ (કે જેનું સૂરિપદ સં૦ ૧૬૭૪થી મરણ સં૦ ૧૬૮૬ સુધી રહ્યું) ના રાજ્યમાં ને જિનસાગર સૂરિના યૌવરાજ્યમાં લૂણકર્ણસર ગામમાં આરંભ કરીને તેજ વર્ષમાં ઔષારિણી પુરમાં પૂર્ણ કરેલ છે. તેથી આ રચના સં૦ ૧૬૭૪ થી ૧૬૮૬ ની વચમાં કરી છે ને તે દરમ્યાનમાં

Aho ! Shrutgyanam

ગૂર્જર ભાષાની પદ્યકૃતિઓ.

૧ **ચોવીશી** (૨૪ તીર્થંકરનાં સ્તવનો) સં૦ ૧૬૫૮ વિજયાદશમી અમદાવાદમાં આને કવિએ 'ચતુર્વિશંતિ તીર્થંકરગીતાનિ' એ નામ આપ્યું છે. આની શુદ્ધ પ્રત આણંદજી કલ્યાણજી હસ્તકના પાલીતાણાના ભંડારમાં છે.

૨ **શાંબપ્રદ્યુમ્ન પ્રબંધ** રચ્યા સં૦ ૧૬૫૯ વિજયાદશમી. ખંભાતમાં સ્તંભન પાર્શ્વનાથના પસાયથી.

ભાષામાં મોટો ગ્રંથ રચવાનો આ તેમનો પહેલો પ્રયાસ છે એમ તે જણાવે છે.

શક્તિ નહી મુઝ તેહવી બુદ્ધિ નહી સુપ્રકાશ
વચનવિલાસ નહી તિરયઉ એ પણિ **પ્રથમ અભ્યાસ.**

કૃષ્ણના કુંવર શાંબ અને પ્રદ્યુમ્ને આખરે નેમીશ્વર પાસે દીક્ષા લીધી અને વિમલગિરિ પર સંલેખના કરી મોક્ષે ગયા. આ બંનેનો અધિકાર આઠમા અંગમાંથી (અંતકૃત્ દશાંગ—અંતકૃત્ એટલે તદ્ભવ મુક્ત થનાર—ચરમભવી મહાત્માઓ સંબંધીનું સૂત્ર) લઇ આ પ્રબંધ બે ખંડમાં રચ્યો છે. ગાથા ૫૩૫, ઢાલ ૨૧, શ્લોક ૮૦૦ છે અને તે જેસલમેરના વતની નાનાવિધશાસ્ત્ર વિચાર રસિક લોઢા સા૦ સિવરાજની અભ્યર્થનાથી રચેલો છે એવું એક જૂની પ્રતમાં લખેલું છે. સં૦ ૧૬૭૦ ની લખેલી સારી અને જૂની પ્રત લીંબડીના ભંડારમાં મોજૂદ છે.

૩ **દાન શીલ તપ ભાવના સંવાદ.**P (અથવા સંવાદ શતક)[૨૨] સં૦ ૧૬૬૨ સાંગાનેરમાં ' પદ્મપ્રભુ સુપસાઉલે '—

જૈનમાં ધર્મના ચાર પ્રકાર નામે દાન, શીલ, તપ અને ભાવના જણાવ્યા છે—તે દરેક પોતપોતાને વડો માને છે અને એ રીતે ચારે પોતપોતાના ગુણ ગાઈ પોતપોતાથી કેટલા સુખી અને સિદ્ધ થયા તે જણાવી તકરાર કરી આપ વડાઈ, વીરની પરિષદ્માં, વીર પ્રભુ પાસે કહે છે ત્યારે છેવટે વીર સમાધાન કરી જણાવે છે કે:—

લૂણકર્ણસરમાંજ સં૦ ૧૬૮૫ માં પોતે હતા તે વિશેષસંગ્રહના રચનાકાલ અને સ્થલ પરથી જણાય છે. તેથી આ રચના સં૦ ૧૬૮૫ માં જ પૂર્ણ થયેલી છે.

આ P ચિન્હ મુદ્રિત થયેલ ગ્રંથ સૂચવે છે.

૨૨. કોઇકિ પ્રતમાં પાઠાંતર બાસઠ ને બદલે ' છાસઠ ' છે. પણ ઘણી પ્રતોમાં બાસઠ છે તેથી તે જ પાઠ યોગ્ય લાગે છે. આ સંવાદને 'સંવાદશતક' કર્ત્તાએ પોતે એક ઠેકાણે કહેલ છે. પોતાની સીતારામ ચોપાઇમાં એક ઢાલનો રાગ મૂકતાં જણાવ્યું છે કે " રાગ ધન્યાસિરી—સીલ કહે જગિ હું વડું, મુઝ વાત સુણો એક મીઠીરે (કે જે આ સંવાદમાં બીજી ઢાલમાં શીલ કહે છે) એ સંવાદ શતકની બીજી ઢાલ." કુલ ૫ ઢાલ છે અને ૫૦ કડી છે. આ સંવાદ સઝાયમાળા અને રત્ન સમુચ્ચયમાં મુદ્રિત થયેલ છે.

Aho ! Shrutgyanam

કો કેહની મ કરો તુમ્હે નિંદા ને અહંકાર
આપ આપણે ઠામે રહો સહુકો ભલો સંસાર

તોપણ અધકો ભાવ છે, એકાકી સમરત્થ
દાન શીલ તપ ત્રિણે ભલા, પણ ભાવ વિના અકયત્થ.

અંજન આંખે આંજતા, અધિકો આણી રેખ
રજમાંહે તજ કાઢતાં, અધિકો ભાવ વિશેષ.

૪ **ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધનો રાસ.** P મારૂ સં૦ ૧૬૬૫ જેઠ શુ. ૧૫ આગ્રામાં.

પ્રત્યેક બુદ્ધ થઈ સિદ્ધ થયેલા જૈન કહેલા કરકંડુ, દુર્મુખ, નેમિરાજ અને નિર્ગતિ (નિગ્ગઇ) એ ચાર સંબંધી ચાર ખંડમાં આ રાસ વિભક્ત છે. પ્રત્યેક ખંડ સં૦ ૧૬૬૪ માં પૂર્ણ કર્યો છે પણ દરેકની તીથિ જૂદી જૂદી છે. ૧ કરકંડુ પરનો સં૦ ૧૬૬૪ ફાગણ સિદ્ધિયોગ બુધવારે. ઢાલ ૧૦, ગાથા ૧૮૭, શ્લોક ૨૫. ૨ દુમુહપર ચૈત્ર વદ ૧૩ શુક્ર. ઢાલ ૮. ૩ નેમિરાજ પર-તીથિ નથી જણાવી ઢાલ ૧૭.૪ નિગ્ગઈ પરનો મારૂ સંવત ૧૬૬૫ જેઠ શુદ ૧૫ આગ્રામાં 'વિમલનાથ પસાઉલે' સાન્નિધ્યે 'કુશલસૂરીંદ'; ઢાળ ૯. આચારે ખંડ નાગડ-ગોત્રના સંઘનાયક સૂરશાહના આગ્રહથી રચ્યા છે. આખો રાસ અતિ સુંદર અને રસમય છે. મદનરેખા (મયણરેહા) સંબંધી આખ્યાન ત્રીજા ખંડમાં અંતર્ગત થાય છે. મુંબઇના શ્રાવક ભીમસી માણેકે આ મુદ્રિત કરેલો છે. ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધ પર તિલકાચાર્યકૃત ૨૧૫ પત્રમાં, ૧૧૩૮ શ્લોકમાં, ૬૦૦ શ્લો. અને ૩૫૦ શ્લોકમાં રચાયેલી એમ ચાર પુસ્તક રૂપે કથાઓ જૈન ગ્રંથાલલીમાં નોંધાઈ છે.

૫ **પોષધવિધિ સ્તવન.** (એક નાની કવિતા) સં૦ ૧૬૬૭ માગશર શુદ ૧૦ ગુરૂ. મરોટમાં.

૬ **મૃગાવતી ચરિત્ર રાસ**–ચોપઇ. સં૦ ૧૬૬૮ મુલતાનમાં.

વત્સદેશની રાજધાની કૌશામ્બીના રાજા શતાનીકની રાણી અને ઉદાયનની માતા મૃગાવતી પતિ પોતાના પુત્રને સગીર મૂકી સ્વર્ગસ્થ થતાં પોતે રાજ્ય ચલાવે છે તે વખતે તેના પર આસક્ત બની અવંતીનો રાજા ચંડપ્રદ્યોત આક્રમણ કરે છે, પણ તેને સમજાવી રાજ્યને દુર્ગઆદિથી પ્રબલ કરી આખરે મહાવીર ભગવાન્ પાસે પોતે દીક્ષા લે છે. આ પ્રમાણે શીલ સાચવી પુત્રહિતાર્થે રાજ્યવ્યવહાર કરી ધર્મ વૈરાગ્ય પામી મુક્તિ મેળવે છે; તે જૈન સતી પર આ સુંદર આખ્યાન છે. જુદી જુદી ગુજરાતી, મરૂધરની, સિંધી, પૂર્વની નવી નવી ઢાળોમાં ત્રણ ખંડોમાં આ 'મોહનવેલી' ચોપઈ રચેલી છે. પ્રથમ ખંડમાં ૧૩ ઢાળ, ગાથા ૨૬૬ અને બીજામાં પણ ઢાળ ૧૩, ગાથા ૨૬૬, ત્રીજામાં ઢાલ ૧૨, ગાથા ૨૧૧ છે. મૂળ જેસલમેર નિવાસીને મુલતાનવસતા રીહડ ગોત્રના કરમચંદ શ્રવક વગેરે માટે મુલતાનમાં કે જ્યાં 'સિંધુ શ્રાવક સદા સોભાગી ગુરૂગચ્છ કેરા બહુ રાગી' —સિંધી શ્રાવકો વસતા હતા ત્યાં રચેલ છે.

Aho ! Shrutgyanam

આ રચનાની પહેલાં પોતે સાંબપ્રદ્યુમ્નની ચોપાઈ રચી હતી એવું આના મંગલાચરણમાં જ જણાવ્યું છે.

૭ કર્મ છત્રીશી—P સં૦ ૧૬૬૮ માહ શુદ ૬ મુલતાનમાં ૩૬ કડીનું કર્મવશ સર્વ જીવ છે એમ જણાવી તે માટેનાં દૃષ્ટાંત આપ્યાં છે. (પ્ર૦ ચૈત્યવંદન સ્તુતિ સ્તવનાદિ સંગ્રહ પુના.)

૮–૧૦ પુણ્ય છત્રીશી (સં૦ ૧૬૬૮ સિદ્ધપુર) શીલ છત્રીશી. અને સંતોષ છત્રીશી } સં૦ ૧૬૬૯ દરેકમાં ૩૬ કડી

૧૧ ક્ષમા છત્રીશી. નાગોરમાં.

(આદરજીવ ક્ષમા ગુણ આદર એથી શરૂ થતું ૩૬ કડીનું પ્રસિદ્ધ કાવ્ય.)

૧૨ સિંહલ સુત પ્રિયમલેક રાસ. [૨૩]સં૦ ૧૬૭૨ મડેતામાં.

દાન વિષય ઉપર આ આખ્યાન છે. સાધુને દાન દેવાથી સિંહલસુત સિંહલસિંહ કેવાં સુખ પામે છે તે અને તેમાં પ્રિયમેલક નામના તીર્થનું મહાત્મ્ય જણાવી તે ઉતમ શ્રાવક તરીકે ધર્મના રૂડાં કામ કરે છે અને સમાધી મૃત્યુ પામી સુરપદવી લહે છે એ બતાવ્યું છે. ઢાલ ૧૦ છે. આ પોતાની સ્વકલ્પિત કથા લાગે છે.

૧૩ નલદમયંતી રાસ. સં૦ ૧૬૭૩ વસંત માસમાં મેડતામાં.

કવિ પ્રેમાનંદે નલાખ્યાન રચ્યું છે, તેની પહેલાના સૈકામાં કવિ સમયસુંદરે જૈન કથામાં નિરૂપેલું નલદમયંતી ચરિત્ર પરથી ભાષામાં આ રસમય રાસ રચ્યો છે. [૨૪]તિલકાચાર્ય કૃત દશવૈકાલિક વૃત્તિ અને પાંડવ નેમિ ચરિતમાંથી અધિકાર ઉદ્ધરી 'કવિયણ કેરી કિહાં કણિ ચાતુરી' કેળવી છ ખંડમાં, સર્વ ગાથા ૯૧૩, શ્લોક સંખ્યા ૧૩૫૦, અને

---

૨૩ આમાં પ્રાચીન સુભાષિત મૂકેલ છે કેઃ—

યતઃ—ધરિ ઘોડો નંઇ પાલો જાય, ઘરિ ઘેણુ ને લૂષઉ ષાય,
ધરિ પલ્યંક નેં ધરતી સૂઇ, તિણરી બઇંયરિ જીવતાનેં રૂઇં.

આની પ્રત મારી પાસે છે. પત્ર ૧૧. પંક્તિ ૧૩. બીજી પ્રતો ધોરાજીના સર્વજ્ઞ મહાવીર ભંડાર, તેમજ ગારીયાધરના, પાલણપુરના ભંડારોમાં છે.

૨૪. તિલકાચાર્ય—શ્રી ચંદ્રપ્રભ—ધર્મઘોષ—ચક્રેશ્વરસૂરિ—શિવપ્રભસૂરિ અને તેના શિષ્ય. તેમણે આવશ્યક સૂત્ર લઘુવૃત્તિ ૧૦૬૫૦ શ્લોકમાં સં. ૧૨૯૬ માં, ચૈત્યેવંદના વંદનક પ્રત્યાખ્યાનવૃત્તિ શ્લો. ૫૫૦, શ્રાવકપ્રતિક્રમણ સૂત્રવૃત્તિ શ્લો. ૨૦૦, સાધુપ્રતિક્રમણવૃત્તિ શ્લો. ૨૯૬, ઉક્ત દશ વૈકાલિક સૂત્રવૃત્તિ શ્લોક ૭૦૦૦, સં. ૧૩૪૬ માં, જીતકલ્પવૃત્તિ શ્લો. ૧૭૦૦, સં. ૧૨૭૪ માં, શ્રાદ્ધજીતકલ્પ મૂળગાથા ૩૬ અને તેના પર સ્વોપજ્ઞવૃત્તિ શ્લો. ૧૧૫, પૌર્ણમિક સામાચારી શ્લો. ૨૫૦૦, નેમિનાથ ચરિત્ર શ્લો. ૩૫૦૦ અને પ્રત્યેક બુદ્ધ ચતુષ્ટય કથા રચેલ છે. આ પૈકી છેલ્લો ગ્રંથ પણ કવિએ ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધનો રાસ રચતાં કદાચ જોયો હોય.

Aho ! Shrutgyanam

ઢાલ ૩૮ માં રચના કરી છે. આની પ્રત મુંબઈની મોહનલાલજી સેંટ્રલ લાયબ્રેરીમાં; આણંદજી કલ્યાણજીના પાલીતાણાના ભંડારમાં, લીંબડીના ભંડાર વગેરે સ્થળે વિદ્યમાન છે.

૧૪. **પુણ્યસાર ચરિત્ર.** સં૦ ૧૬૭૩ આની પ્રત મને પ્રાપ્ત થયેલ નથી.

૧૫. રાણકપુર સ્તવન સં૦ ૧૬૭૬ માગશર. રાણકપુરમાં.

મારવાડમાં સાદડી પાસે રાણકપુરમાં સોમસુંદરસૂરિથી પ્રતિષ્ઠિત થયેલું ૯૯ લાખ ખર્ચી ધનાશા પોરવાડે સં૦ ૧૪૯૧ માં બંધાવેલું અતિ ઉત્તમ અને શિલ્પકારીગરીથી ભરપૂર અનેક સ્તંભોવાળું 'ત્રિભુવન દીપક' નામનું મંદિર વિરાજે છે. તેની કવિએ જાત્રા કરી તેના ટુંક વર્ણન રૂપે આ સ્તવન રચ્યું છે. ચારે દિશાના ૨૪ મંડપ, ચાર ચતુર્મુખ (ચોમુખ) પ્રતિમા, ૮૪ દેરી, ભોંયરાં. ત્યાં ખરતર વસતિ-દેહરૂં છે.

૧૬. **વલ્કલચીરી રાસ.** સં૦ ૧૬૮૧ જેસલમેરમાં.

ઉપરોક્ત જેસલમેરી કર્મચંદ મુલતાનમાં વસતો હતો તેના આગ્રહથી આ પણ રાસ રચ્યો છે. આની પ્રત પ્રવર્તક શ્રી કાન્તિવિજયજીના વડોદરાના ભંડારમાં છે. અને લીંબડીના ભંડારમાં છે.

૧૬અ. **એકાદશી (મૌન એકાદશી) નું વૃદ્ધ (મોટું) સ્તવન.** P સં૦ ૧૬૮૧ જેસલમેર પ્ર. રત્નસમુચ્ચય પૃ. ૧૭૨-૩.

૧૭. **વસ્તુપાલ તેજપાલનો રાસ.** સં૦ ૧૬૮૨ (પાઠાં ૧૬૮૬) તિયરી પુરમાં.

આ એક બહુ ટૂંકી કૃતિ છે. આમાં વસ્તુપાલ અને તેજપાલ જે ગૂર્જરરાજ વીરધવલના પ્રખ્યાત શૂરવીર જૈન મંત્રીઓ થયા તેમણે જે દેવલ કર્યા તેનો તથા બીજાં ધર્મ કાર્યોનો ટુંક અહેવાલ છે. આની પ્રત મેં લખી લીધેલી છે. એક પ્રત ફાર્બસ સભા પાસે છે.

૧૮. **શત્રુંજય રાસ.** P. સં૦ ૧૬૮૨ (પાઠાં. ૧૬૮૬)[૨૫] નાગોરમાં શ્રાવણ વદમાં. આ રાસ ટૂંકો છે. તેમાં લખ્યું છે કે સં૦ ૪૭૭ માં ધનેશ્વરસૂરિએ શત્રુંજય માહાત્મ્ય નામાનો ગ્રંથ શિલાદિત્ય હજૂર કર્યો (આ એક દંત કથા છે) તેનો કંઈક આધાર આમાં લીધો છે. આમાં પહેલી ઢાલમાં શેત્રુંજયનાં ૨૧ નામ, પછી તેનું પ્રમાણ, બીજી ઢાલમાં ત્યાં સિદ્ધ થયેલાનાં નામ, ત્રીજી તથા ચોથી ઢાલમાં તેના સોલ ઉધ્ધાર વર્ણવેલાં છે, પછી માહા-

૨૫. બાસી અને છાસી: એમ તેમ બાસઠ અને છાસઠ એમ પાઠાંતર બા અને છા એકબીજાને બદલે લખાઇ જવાના હસ્તદોષથી સંભવે છે. આ બંને રાસો માટે જુઓ ફાર્બસ ગુજરાતી સભાનાં હસ્તલિખિત પુસ્તકોની સવિસ્તર નામાવલી પૃ. ૪૭ અને પૃ. ૬૭.

Aho ! Shrutgyanam

ત્મ્ય બતાવી પાંચમી ઢાલમાં ત્યાં પાપનું આલોયણ (આલોચના) કરતાં છુટકો થાય છે એ બતાવી છઠી ઢાલમાં ત્યાંના દેવળોનું ટુંક વર્ણન કરી–ચૈત્ય પ્રવાડિ વર્ણવી જણાવે છે કે-

'ચૈત્ય પ્રવાડિ ઇણ પર કરીએ, સીધાં વંછિત કામ.
જાત્રા કરી શેત્રુંજ તણીએ, સફલ કિયો અવતાર
કુશલ ક્ષેમશું આવિયોએ, સંઘ સહૂ પરિવાર–

આ રીતે સંઘ સાથે પોતે જાત્રા કરી કુશલક્ષેમ આવ્યા ને ત્યાર પછી સં૦ ૧૬૮૨ માં નાગોરમાં આ રાસની રચના કરી. તો આ સંઘ કયો તે અંદર જણાવેલ સોમજીશાહ

વંશ પોરવાડે પરગડો એ સોમસી સાહ મલાર
રૂપજી સંઘવી કરાવીઓ એ, ચૌમુખ મૂલ ઉધ્ધાર

નો સંઘ કદાચ હોય એવી કલ્પના થવા સંભવ છે. કારણ કે તે અમદાવાદના શેઠ સોમજી સવાઇએ સં૦ ૧૬૭૫ માં આ ચૌમુખની ટોંક બંધાવી. તેમાંના બહારના ભાગને ખરતરવસહિ અને અંદરના ભાગને ચૌમુખ–વસહી કહે છે. મીરાતે–અહમદી કહે છે કે આ મંદિર બંધાવવામાં ૫૮ લાખ રૂપીઆ લાગ્યા હતા.

(રત્નસમુચ્ચયમાં પૃ. ૨૭૦ થી ૨૮૦ ને પાને પ્રસિધ્ધ થયેલ છે. છેલ્લી પ્રશસ્તિ આમાં છે તેથી વધારે ૧૯ મી કડી પછી ત્રણ કડી બીજી પ્રતમાં વિશેષ છે તેમાં જણાવેલ છે કે આ રાસ શત્રુંજય માહાત્મ્ય સાંભળી તે અનુસાર રચ્યો છે અને તે જેસલમેરથી ભણશાલી થિરે શત્રુંજયનો સંઘ કાઢયો હતો, તો આ થિરનો સંઘ જ ઉપર જણાવેલ કુશલક્ષેમથી આવેલ સંઘ હોવાનું સ્પષ્ટ પ્રતીત થાય છે.)

૧૯. સીતારામ પ્રબંધ ચોપઇ. સં૦ ૧૬૮૩ મેડતામાં.

આ રાસ ઘણો મોટો છે અને જૈન રામાયણ આખી તેમાં મૂકી છે. આમાં પ્રથમ જ પોતે આની અગાઉ ચાર રાસ રચ્યા છે તેમાં 'હે સરસ્વતિ તેં મદદ કરી હતી તેમ આમાં પણ મદદ કરજે ' એવું જણાવે છેઃ—

સમરૂં સરસતિ સામિણી, એક કરૂં અરદાસ
માતા દે જે મુજઝને કરૂં વચન વિલાસ.

સંબ પ્રજૂન કથા સરસ (૧), પ્રત્યેક બુદ્ધ પ્રબંધ (૨)
નલ દવદંતી (૩) મૃગાવતી (૪), ચઉપઇ ચ્યાર સંબંધ.
આઇ તું આવી તિહાં સંભર્યાં દીધો સાદ,
સીતારામ સંબંધ પણિ સરસતિ કરે પ્રસાદ.

આ પદ્મ ચરિત્ર (પઉમ ચરિયમ્)–સીતાચરિતના આધારે રચેલ છે. હિન્દુ રામાયણમાંથી અનેક આખ્યાનો જૂદા જૂદા હિન્દુ કવિએ લખેલાં છે. કવિ કહે છે કે-

Aho ! Shrutgyanam

જિનશાસન શિવશાસને સિતારામ ચરિત્ર સુણીજેરે
ભિન્નભિન્ન શાસન ભણી કે કે વાર્ત્તા ભિન્ન કહિજેરે.

આ નવ ખંડમાં લગભગ ૩૭૦૦ ગાથાનો આ રાસ, ગોલછા ગોત્રીય પ્રસિધ્ધ રાયમલના પુત્રરત્ન અમીપાલ અને નેતસી, તથા ભત્રીજા રાજસીના આગ્રહે રચેલો છે. તેમાં કવિએ ગૂજરાતી, સિંધી, મારવાડી, મેવાડી, ઢુંઢારી, દિલ્હી વગેરે અનેક સ્થાળોનાં ગીતો તથા દેશીઓ લઇ તેની લયમાં પોતાની દેશીઓ બનાવી કાવ્યચાતુરી એવી કુશલતાથી રશને ખીલવી બતાવી છે કે ન પૂછો વાત. આ કૃતિ તો કવિની અદ્‌ભૂત થઈ છે અને તે ગૂર્જર કવિ શિરોમણી પ્રેમાનંદથી અનેકધા ટક્કર મારી કેટલીક બાબતમાં ચડી જાય છે. કવિ પોતે આ કૃતિને માટે મગરૂર છે એમ તે છેલ્લે જે જણાવે છે તે પરથી સ્પષ્ટ થશેઃ—

સીતારામની ચોપઇ જે ચતુર હુંઇ તે વાંચો રે,
રાગ રતન જવહર તણો, કુણ ભેદ લહે નર કાચો રે–
નવરસ પોષ્યા મેં ઇહાં, તે સુઘડો સમજી લેજ્યો રે,
જે જે રસ પોષ્યા ઇહાં, તે ઠામ દેખાડિ દેજ્યો રે–
કે કે ઢાલ વિષમ કહિ તે, દુષણ મત ઘો કોઇ રે,
સ્વાદ સાબૂણી જે હુવે તે લિંગ હદે કદે ન હોઇ રે–
જે દરબારે ગયો હુસે ઢુંઢાડિ મેવાડિ ને ઢિલ્લી રે,
ગુજરાત મારૂઆડિમેં તે કહિસે ઢાલ એ ભલ્લી રે–
મત કહો મોટિ કાં જોડી, વાંચતાં સ્વાદ લહેસો રે,
નવનવા રસ નવનવી કથા, સાભલતાં શાબાશ દેશો રે–

આ રાસ ખાસ પ્રકટ કરવા યોગ્ય છે. દેવચંદ લાલભાઈ પુસ્તકોદ્ધાર ફંડવાળા પાસેથી આની પ્રત મને જોવા મળી હતી. તેઓ પ્રકટ કરવા ઈચ્છતા હોય એમ જણાતું હતું, પણ આને ત્રણ ચાર વર્ષ થયા છતાં કંઈપણ તે માટે પ્રયાસ થયો નથી જણાતો તે શોચનીય છે. આ રાસની કવિ સ્વહસ્તલિખિત પ્રત આગ્રાભંડારમાં છે.

૨૦ બારવ્રતરાસ સં. ૧૬૮૫

૨૧ ગૌતમપૃચ્છા સં ૧૬૮૬

૨૨ થાવચ્ચા ચોપાઇ સં. ૧૬૯૧

[થાવચ્ચા પુત્ર કથા શ્લોકબદ્ધ પત્ર ૧૧ ની જૈનગ્રંથાવલિમાં નોંધાયેલી છે.]

૨૩ ચંપક શ્રેષ્ઠીની ચોપાઇ સં. ૧૬૯૫ જાલોરમાં.

આ અનુકંપાદાન ઉપર કથાનક છે. પોતાના અધિક સ્નેહી શિષ્યના આગ્રહથી. બે ખંડ. કુલ ગાથા ૫૦૬. ગ્રંથાગ્રંથ શ્લો. ૭૦૦. પ્રત આણંદજી કલ્યાણજીના તથા ઘોરાજીના ભંડારમાં છે.

Aho ! Shrutgyanam

આમાં એ પણ બતાવ્યું છે કે સરજત ઉપર આધાર રાખનાર હોય છે પણ ઉદ્યમ અને ભાવી બંનેને ભાવી કરતાં ઉદ્યમ અધિકું છે.

'સહુ કો લોક લહઇ છઇ સરજ્યું, તે બોલ કેતા વાંચું,
ઉદ્યમ છઇ ઇમ પણિ ભાવી અધિકું, સમયસુંદર કહઇ સાચું.

[ચંપકશ્રેષ્ઠિ કથા એ નામથી (૧) ૩૫૫ શ્લોકમાં, (૨) જયસોમ (કવિ સમયસુંદર સાથે જેણે ઉપાધ્યાય પદ લીધું તે ગુણવિનયના ગુરૂ) કૃત, (૩) વિમલગણિ કૃત, એમ ત્રણ જૈન ગ્રંથાવલિમાં નોંધાએલ છે.]

૨૪ ધનદત્ત ચોપાઇ સં૦ ૧૬૯૬ આસો માસ. અમદાવાદમાં.

આ વ્યવહારશુદ્ધિ પર કથાનક છે. શ્રાવકે વ્યવહારમાં કેવી રીતે વર્ત્તવું એ આનો ઉદ્દેશ છે. શુદ્ધ વ્યવહાર—ચોખવટભર્યો વ્યવહાર કયો તે કવિ બતાવે છે. શ્રાવકના ૨૧ ગુણ ગણાવે છે.

વિણજ કરતઉ વાણીયઉ, સાહજી, ઓછું નાપઇ ટાંક,
અધિકું પિણ તોલઇ નહી, સાહજી, મનમાંહિ આણઇ સાંક—
સુણઉ રે ભવિકજન, શ્રાવક ગુણ ઇકવીસ ઇણિ પરઇ.

સખર વચન ન કહઇ નિખર, સા૦ નિખર સખર ન કહેઇ
જિણ વેલા દેવું કહ્યું, સા૦ તિણિ વેલા તે દેઇ—સુ૦

ઝૂઠું કદિ બોલઇ નહિ, સા૦ સાચું કહઇ નિતમેવ,
પહિલઉ વ્યવહાર શુદ્ધિ ગુણ, સા૦ ઇમ કહ્યુ અરિહંતદેવ. સુ૦

લગભગ દોઢસો ટુંકનો આ રાસ છે. આની પ્રત અમદાવાદમાં, ધોરાજી અને પાટણના ભંડારમાં છે. પાટણના હાલાભાઇના ભંડારના ડાબડા ૮૨ માં પત્ર ૯ ની આ રાસની એક પ્રત છે તેની અંતે લખ્યું છે કે 'સર્વ ગાથા ૧૬૧ શ્રી સમયસુંદર મહોપાધ્યાયાનાં પૌત્રેણ પં. હર્ષકુશલ ગણિના સંશોધિતા. સા. હરજી ધનજી સુશ્રાવિકાગ્રહેણ.' પત્ર ૯. આ પરથી જણાય છે કે કવિની શિષ્ય પરંપરા હતી અને તે પૈકી તેના શિષ્યના શિષ્યનું નામ પંડિત હર્ષકુશલ હતું.

[ધનદત્ત કથા (૧) શ્લોકબદ્ધ પત્ર ૨૪, (૨) ગદ્યમાં પત્ર ૧૦, (૩) પત્ર ૧૭ માણિક્યસુંદર કૃત, (૪) ૩૩૦ શ્લોકની, એમ ચાર અને સૌથી પ્રાચીન તાડ પત્રમાં લખેલી અમરચંદ્ર કૃત એમ પાંચ જૈન ગ્રંથાવલિમાં નોંધાયેલ છે.]

૨૫ સાધુવંદના સં૦ ૧૬૯૭ (લીં૦ ભંડાર)

૨૬ પાપ છત્રીશી સં૦ ૧૬૯૮ અહિમદપુરમાં. (પૂરણચંદજી નહાર પાસે પ્રત છે).

Aho ! Shrutgyanam

૨૭ સુસઢ રાસ આ પ્રાપ્ત થયેલ નથી. [મૂળ આ કથા પ્રાકૃતમાં દેવેંદ્રસૂરિ કૃત ૫૩૭ ગાથામાં અને બીજી પ્રાકૃતમાં ૩૫૦ ગાથા, જૈન ગ્રંથાવલિમાં નોંધાયેલ છે.]

૨૮ પુણ્યાઢય રાસ (ડહેલાનો અપાસરો તથા રત્નવિજયજીનો ભંડાર. અમદાવાદ)

૨૯ પુંજા ઋષિનો રાસ.

નાગપુરીય તપાગચ્છની પટ્ટાવલિમાં થએલા એક મુનિના તપનું વર્ણન કરવા સમયસુંદર ઉપાધ્યાયે આ રાસ કરેલો જણાવ્યો છે. પાર્શ્વચંદ્રસૂરિ સંતાનીય વિમલચંદ્રસૂરિ થયા તેની પાસે પુંજા મુનિએ રાજનગરમાં વિ. સં૦ ૧૬૯૦ માં અષાઢ શુદિ ૯ ને દિને દીક્ષા લીધી, અને ત્યાર પછી ઉગ્ર તપ ક્રિયા કરી ૧૨૩૨૨ (?) ઉપવાસ કર્યા અને બીજાં અનેક તપ કર્યાં. આ સર્વ તપની સંખ્યા વગેરે ઉક્ત રાસમાં આપી છે.

આ સિવાય કવિએ અનેક સ્વાધ્યાયો (સઝાયો), સ્તવનો, પદ વગેરે ટુંકી કવિતાઓ રચેલી છેઃ-

સઝાયો—મહાસતી યા મહાપુરૂષો પર લખેલી, અને બીજી વૈરાગ્યોપદેશક સઝાયો એમ બે પ્રકારે છે.

(૧) રાજુલ પર સઝાય. (પ્રથમ ચરણ–રાજુલ ચાલી રંગ શું રે)
ગજસુકુમાલ સ૦ (નયરી દ્વારામતિ જાણિયેજી)
અનાથી મુનિ સ૦ (શ્રેણિક રયવાડી ચડયો)
બાહુબલિ સ૦ (રાજતણા અતિ લોભિયા...વીરા મ્હારા ગજથકી ઉતરો)
ચેલણા સ૦ (વીર વાંદી વલતાં થકાંજી........વીરે વખાણી રાણી ચેલણાજી)
અરણક મુનિ સ૦–(અરણિક મુનિવર ચાલ્યો ગોચરી)
કરકંડું સ૦–(ચંપા નગરી અતિ ભલી, હું વારી લાલ)
નમિરાજર્ષિ સ૦. પ્રસન્નચંદ્ર રાજર્ષિ સ૦. સ્થૂલભદ્ર સ૦
મેઘરથ રાય સ૦–દશમે ભવે શ્રી શાંતિજી, મેઘરથ જીવડો રાય-રૂડારાજા....ધન્ય ધન્ય મેઘરથ રાયજી, જીવદયા ગુણખાણ....)
શાલિભદ્ર સ૦ (પ્રથમ ગોવાળિયા તણે ભવેજી, દીધું મુનિવર દાન....)
ભૂદેવ-નાગિલાની સ૦ (અર્ધ મંડિત ગોરી નાગલા રે–આ દેશી વિનય વિજય અને યશોવિજય કૃત શ્રી પાળરાસમાં લેવાઈ છે) અપ્રગટ.
ધનાની સઝાય–(જગિ જીવન વીરજી, કવણ તમારો શીષ)–અપ્રકટ.

(૨) નિંદા પર–(નિંદા મ કરજો કોઇની પારકી રે)
માયા પર–(માયા કારમીરે માયા મ કરો ચતુર સુજાણ.)
દાનશીલ તપ ભાવ પર–(રે જીવ જિન ધર્મ કીજીએ.)

Aho ! Shrutgyanam

ધોબીડા પર-(ધોબીડા તું ધોજે મનનું ધોતિયું રે.)

પંચમઆરા.

(શ્રાવકના) એકવીસ ગુણ સ૦ (પુરણચંદજી નહાર-કલકત્તા પાસે પ્રત છે)-
આ કદાચ વ્યવહાર સુદ્ધિ રાસનો ભાગ હોય.

સ્તવનો

(૧) મુનિસુવ્રત સ્વામી સ્ત૦ (પખવાસાનું સ્ત૦)--૧૫ દિવસના ઉપવાસ કરવાના તપ ઉપર--(જંબૂદ્વીપ સોહામણો દક્ષિણ ભરત ઉદાર.)

ઋષભદેવ સ્તવન.

તીર્થમાલા સ્તવન (શત્રુંજયે ઋષભ સમોસર્યા)

રાણકપુર સ્ત૦ સં૦ ૧૬૭૬ (રાણકપુર રળિયમણું રે...શ્રી આદીશ્વર દેવ મન મોહ્યું રે)

અષ્ટાપદ ગિરિ સ્ત૦(મનડો અષ્ટાપદ મોહ્યો માહરોજી, નામ જપુ નિશિદીસ જી)

સીમંધર સ્ત૦ (ધન ધન ક્ષેત્ર મહાવિદેહજી.)

શત્રુંજય મંડણ શ્રી આદિનાથ સ્તવન--સં૦ ૧૬૯૯ માં કવિના હાથનું લખાયેલું પંડિત લાલચંદ પાસે છે. 'સંવત સોલ ૯૯ વર્ષે ભાદ્રવા સુદિ ૧૩ દિને લિષિતં ।। સ્વયમેવ ।।' એમ છેલ્લે ઉલ્લેખ છે. તેમાંની ૨૨ મી કડી

'ચંચલ જીવ રહે નહીંજી રાચઈ રમણી રુપ,
કામ વિટંબણ સી કહુંજી તું જાણઈ તે સરુપ.'

તે જિન હર્ષે પોતાના ' આદિજિન વિનતિ ' સવનમાં થોડા ફેરફાર સાથે લીધી જણાય છે.

(૨) પંચમી તપ પર નાનું સ્ત૦-(પંચમી તપ તમે કરો રે પ્રાણી.)

પંચમી તપ પર વૃદ્ધ (મોટું) સ્ત૦-ઢાલ ૩નું (પ્રણમી શ્રી ગુરૂપાય નિર્મલ જ્ઞાન ઉપાય) જ્ઞાન પંચમી એ જૈનોમાં જ્ઞાન વૃદ્ધિ અર્થે એક ધાર્મિક પર્વ છે. આમાં જણાવ્યું છે કે.

જ્ઞાન વડો સંસાર, જ્ઞાન મુગતિ દાતાર
જ્ઞાન દીવો કહ્યો એ સાચો સદ્દહ્યો એ.

જ્ઞાન લોચન સુવિકાશ, લોકા લોક પ્રકાશ,
જ્ઞાન વિના પશુ એ, નર જાણે કિસ્યું એ.

એકાદશી વૃદ્ધ સ્ત૦ ૧૩ કડીનું. (સમવસરણ બેઠા ભગવંત, ધરમ પ્રકાશે શ્રી અરિહંત). મૌન એકાદશી નામના ધાર્મિક પર્વ પર જેસલમેરમાં સં૦ ૧૬૮૧

Aho ! Shrutgyanam

ઉપધાન તપ સ્ત૦-(શ્રી મહાવીર ધરમ પરગાસે, બેઠી પરષદ બારજી.)
પોષધવિધિ સ્ત૦-

(૩) વિનતિ એટલે સંબોધન રૂપે આપવીતિ--સ્વદોષ જણાવી પ્રભુની કરૂણા અને દયા માંગવા માટે જેમાં આર્જવ પૂર્વક વિનતિ કરવામાં આવી છે તેવાં વિનતિ સ્તવનો.

મહાવીર વિનતિ સ્ત૦ (વીર સુણો મોરી વિનતિ, કરજોડી હો કહું મનની વાત) આ જેસલમેરમાં વાચનાચાર્ય પોતે હતા ત્યારે બનાવ્યું છે.

અમર સરપુર મંડન શીતલનાથ વિનતિ સ્ત૦ (મોરા સાહેબ હો, શ્રી શીતલનાથ કિ, વીનતી સુણો એક મોરડી)

આલોયણ (આલોચના) રૂપે વિનતિ સ્ત૦

(૪) છંદ—પાર્શ્વનાથ છંદ (આપણ ઘર બેઠાં લીલ કરો.)

(૫) દાદાજી સ્ત૦ (ખરતર ગચ્છમાં પોતાની ગુરૂ પરંપરામાં થયેલ જિન કુશલસૂરિજી 'દાદાજી' તરીકે ઓળખાય છે. ઘણા ચમત્કારી હોઈ તેમણે સમરતાં ઘણાને પરચા આપ્યા છે એમ મનાય છે. એવો પરચો કવિને મળ્યો હતો તેવું આ સ્તવનમાં જણાવેલ છે, તેમજ પોતાની કૃતિમાં પણ સ્તુતિ રૂપે તેમનું સાંનિધ્ય લઈને આહ્વાહન કરેલું છે. આદિ ચરણ-આયો આયોજી સમરંતા દાદોજી આયો.)

સ્તુતિઓ. પ્રભુ સ્તુતિ.

વિમલાચલ ઋષભ સ્તુતિ.

[૨૬]**કેટલાંક પદો.** વૈરાગ્ય-ઉપદેશ બોધક ટૂંકાં કાવ્યોને 'પદ' એ નામ અપાય છે. જે મળેલાં તે આ નિબંધમાં ઉદ્ધૃત કર્યાં છે. આ બધાં હિન્દી ભાષામાં છે.

અન્ય કૃતિઓ—ઉપરોક્ત સિવાય અન્ય કૃતિઓ કવિની હોવાનો સંભવ છે. એ પૈકી ઋષિમંડળ પર પોતાની ટીકા કે સ્તવન-કંઈ પણ હોવી જોઇએ.[૨૭]

---

૨૬ ઉપરની સઝાયો, સ્તવનો, પદ વગેરે સર્વ મુદ્રિત થયાં છે. જુઓ જૈનપ્રબોધ સઝાયમાળા, રત્નસાગર, રત્નસમુચ્ચય, જૈન કાવ્યસંગ્રહ, ચૈત્યવંદનસ્તુતિ સ્તવનાદિ સંગ્રહ.

૨૭ કારણ કે ખ૦ શિવચંદ પાઠકે ૨૪ જિન પૂજા સં. ૧૭૭૯ (નંદ મુનિ નાગધરણી) વર્ષમાં આશો શુદ ૨ ને શનિને દિને જયપુરમાં રચેલ છે તેમાં સમયસુંદરની આ કૃતિનો પોતે આધાર લીધેલો જણાવ્યો છે:—

સમયસુંદર અનુગ્રહી ઋષિમંડલ, જિનકી શોભ સવાયા,
પૂજા રચી પાઠક શિવચંદૈ આનંદ સંઘ વધાયા—

રત્નસાગર ભાગ ૧ લો પૃ. ૨૮૮.

Aho ! Shrutgyanam

કવિની અન્યે કરેલી પ્રશંસા.

આ સર્વ કૃતિઓ પરથી જણાય છે કે સમયસુન્દર એ એક પ્રતીષ્ઠિત, નામી કવિ, ગ્રંથકાર અને લેખક હતા. તેમના સમકાલીન, શ્રાવક–કવિ પ્રસિધ્ધ ઋષભદાસે પણ માત્ર નામથી ઉલ્લેખેલા પ્રસિદ્ધ કવિઓમાં સમયસુંદરને પણ ગણાવ્યા છેઃ—

સુસાધુ હંસ સમયો સુરચંદ, શીતલ વચન જિમ શારદચંદ
એ કવિ મોટા બુદ્ધિ વિશાલ, તે આગલિં હું મુરખ બાલ.'
—કુમારપાલ રાસ, રચ્યા સં૦ ૧૬૭૦.

આ પરથી સં૦ ૧૬૭૦ પહેલાં જ સમયસુંદરે શરચ્ચંદ્ર સમાન શીતલ વચન જેનાં છે એવા મોટા બુધ્ધિ વિશાલ કવિ તરીકેની ખ્યાતિ ઋષભદાસ જેવા ઉત્તમ અને તે યુગના એક આધારભૂત કવિ પાસે મેળવી હતી એ સ્પષ્ટ જણાય છે.

સં૦ ૧૬૭૦ પછી તો તેમણે અનેક સુંદર અને મોટી કૃતિઓ રચી છે અને તેથી તેમની ખ્યાતિ દિન પ્રતિદિન વધતી ગઈ છે. તેમની કવિતાઓના પ્રથમ ચરણો લઇને તેની દેશીઓ મૂકીને તે દેશીઓ પર અનેક જૈન કવિવરો—સારા સારા કવિઓએ (સમકાલીનમાં ઋષભદાસ, અને પછીના આનંદઘન વિગેરે) પોતાનાં કાવ્યો રચ્યાં છે એ વાત વિસ્તારથી હવે પછી સમજાવેલ છે.

વિશેષમાં તે પછીના જ અઢારમ સૌકામાં થયેલા એક કવિ નામે પંડિત જ્ઞાનતિલકના શિષ્ય વિનયચંદ્રે પોતાના સં૦ ૧૭૫૨ ના ફાગણ શુદિ ૫ ના દિને પાટણમાં ૪૨ ઢાલ અને ૮૪૮ ગાથાના ઉત્તમકુમાર ચરિત્ર રાસમાં પોતાની માહીતી આપતી છેવટની પ્રશસ્તિમાં સમયસુંદર માટે યથાર્થ જણાવ્યું છે કેઃ—

જ્ઞાન પયોધિ પ્રબોધિવા રે, અભિનવ શશિહર પ્રાય, સુ.
કુમુદચંદ્ર ઉપમા વહે રે, **સમયસુંદર** કવિરાય સુ. ૮
તતપર શાસ્ત્ર સમરથિવા રે, સાર અનેક વિચાર સુ.
વલિ કલિંદિકા કમલિની રે, ઉલ્લાસ દિનકાર. સુ. ૯

આ રીતે કવિરાજ સમયસુંદર જ્ઞાન સમુદ્ર માટે ભરતી આણનાર અભિનવ ચંદ્રમા સમાન, કુમુદ માટે ચંદ્ર સમ, અને શાસ્ત્ર સમર્થન કરવા તત્પર—શાસ્ત્રના ગર્ભમાંથી અનેક વિચારથી સાર–અર્ક કાઢનાર અને કમલના ઉલ્લાસ માટે જેમ સૂર્ય તેમ શાસ્ત્રનું ઉલ્લાસન કરનાર હતા.

કવિની લઘુતા.

કવિએ પોતાનાં આખ્યાનો ઘણી સુન્દર, મનોરમ અને સાદી ભાષામાં આળેખ્યાં છે,

Aho ! Shrutgyanam

અને કવિત્વ બતાવ્યું છે; છતાં પોતે પોતાના નામ પાછળ 'કવિ' એ પદ કયાંય ધારણ કરેલું દેખાતું નથી; ઉલટું પોતાની લઘુતા તેમણે બતાવી છે.

૧ પ્રણમૌં ગુરૂ માતા પિતા, જ્ઞાનદષ્ટિ દાતાર,
કીડીથી કુંજર કરે, એ મોટો ઉપગાર.
ગારૂડ ફણીની મણિ ગ્રહે, તે જિમ મંત્રપ્રભાવ,
તિમ મહિમા મુઝ ગુરૂ તણો, હૂં મતિ મૂઢ સ્વાભાવ.
—પ્રત્યેકબુદ્ધરાસ.

૨ હું મૂઢ મતિ કિસ્યું જાંણું મુઝ વાણિ પણિ ન સવાદો રે,
પણિ જે જોડિ મેં રસ પડયો તે દેવગુરૂનો પરસાદોરે;
હું શીલવંત નહિ તિસો, મુઝ પોતે બહુ સંસારોરે,
પણિ શીલવંતનો જશ કહતાં મુઝ થાશે સહિ નિસ્તારો રે.
—સીતારામ ચોપાઇ.

પણ કવિ પોતે 'કવિ'નાં લક્ષણ એક સ્થલે જણાવે છે કે;

ચપલ કવીસરનાં કહ્યાં એક મન ને વચન એ બેઇરે,
કવિ કલ્લોલ ભણિ કહે, રસના વાણા પણ કેઇરે,
—સીતા રામ.

કાવ્યનો હેતુ

સાધુઓનાં ગુણ ગાવાથી અનંત લાભ છે, તેથી ભવનો અંત આવે. પ્રહસમે ઉઠી શીલવંતનાં નામ સહુ જપે છે તેથી હું પણ ભક્તિથી આ મૃગાવતી શીલવતીનું ચરિત્ર ભણું છું. દાન ઉત્તમપાત્રને દેવાથી અઢળક લક્ષ્મી થાય છે તેથી આ સિંહલસુતની દાન કથા કહું છું. જીભ પવિત્ર કરવા આ દમયંતી સતિનું ચરિત્ર કહું છું. કોઇને કલંક ન દેવું—પાપ વચન પરિહરવું એ સીતાનું દુખ જોઇ બોધ લેવાનો છે તેમ જ શીલ પાળી સીતાની પેઠે સુખ અને લીલવિલાસ પામો તે માટે સીતા રામનો સંબંધ કહું છું. અનુકંપાપર ચંપક શ્રેષ્ઠી, અને વ્યવહાર શુદ્ધ શ્રાવક ધર્મપર ધનદત્તની કથા કહુ છું—એમ કવિ જણાવે છે.

પોતાની કૃતિમાં મંગલાચરણમાં મહાવીર આદિ તીર્થંકર, ગૌતમસ્વામી, સરસ્વતી, સુમતિ, માતપિતા, ગુરૂ—દીક્ષાગુરૂને વિદ્યાગુરૂની, સ્તુતિ-સ્મરણ કરે છે તે પૈકી સરસ્વતી આદિની સ્તુતિ ખાસ ધ્યાન ખેંચે છે.

સરસ્વતી સ્તુતિ

વીણા પુસ્તક ધારિણી સમરૂં સરસતિ માય,
મૂરખનૈ પંડિત કરૈ કાલિદાસ કહિવાય.
—ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ.

Aho ! Shrutgyanam

સમરૂં સરસતિ સામિની, પ્રણમું સદગુરૂ પાય;
બે કરજોડી વીનવું, માગું એક પસાય.
સરસ વચન દીઉ સરસતિ, સુણતાં અમીય સમાણ;
સદગુરૂ પણિ સાનિદ્ધ કરો, નિરમલ દિઉ મુઝ ગ્નાન.

—મૃગાવતી રાસ.

સમરૂં સરસતિ સામિણી, એક કરૂં અરદાસ;
માતા દેજે મુજનઇ કરૂં વચન વિલાસ.
સંબપ્રજૂન કથા સરસ (૧), પ્રત્યેકબુદ્ધ પ્રબંધ (૨)
નલ દવદંતિ (૩) મૃગાવતી (૪), ચઉપઇ ચ્યાર સંબંધ.
આઇ તું આવી તિહાં, સમર્યાં દીધો સાદ
સીતારામ સંબંધ પણિ, સરસતિ કરે પ્રસાદ

—સીતારામ ચોપાઇ.

સુમતિ

મુજને સુમતિ જગાઇયો, ઉઠ ઉઠ રે ઉઠ,
ગુણ વરણને ગરૂવા તણા, હૂં તુઝ પૂરસો પૂઠ.
તિણ મુઝ ઉદ્યમ ઊપનો, પંખીને જિમ પંખ,
એક લાભ વલિ કહે સુમતિ, દૂધ ભર્યો વલિ શંખ.

—ચારપ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ.

માતપિતા-ગુરૂસ્તુતિ

માતપિતા પ્રણમું સદા જનમ દીયો મુઝ જેણ,
વાંદું દીક્ષા ગુરૂ વલી, ધરમ રતન દિયો તેણ.
વિદ્યાગુરૂ વાંદું વલી, ગ્નાન દૃષ્ટિ દાતાર,
જગમાંહિ મોટો જાણિજ્યો, એ ત્રિહુંનો ઉપકાર.
એ ત્રિહુંને પ્રણમી કરી, છઠો ખંડ કહેસિ,
ષડ રસ મેલી એકલા સગલા સ્વાદ લહેસિ.

—સીતારામ ચોપાઇ.

આ સિવાય ચમત્કારી ગુરૂઓ પોતાના ગચ્છમાં પૂર્વે થયેલા તે જિનદત્તસૂરિ, અને જિનકુશલસૂરિ વગેરેનું આવ્હાહન કરે છે અને સાંનિદ્ધ માગે છે.—

શ્રી જિનદત્ત સૂરિ જાગતો, હવઇ પ્રણમું તસ પાય
અખંડ ૧૨ અક્ષર થકી, યુગ પ્રધાન કહિવાય.
જીતી ચોસઠિ જોગિણી, ક્ષેત્રપાલ બાવન્ન;
નામઇં ન પડઇ વીજલી, લોક કહઇ ધનધન્ન,

Aho ! Shrutgyanam

ખંડ બીજઇ સાનિધિ કરી જિમ શ્રી કુશલ સૂરીંદ,
તિમ ત્રીજઇ કરજ્યો તુમ્હે, હું પણિ છું મતિમંદ,

—મૃગાવતી ત્રીજા ખંડની આદિમાં.

આનાજ બીજા ખંડમાં જિનકુશલ સૂરિની સહાય માગી હતી.

શ્રી જિનકુશલ સૂરીસરૂ, સુણિ મોરી અરદાસ,
મુઝનઇં આળસ ઊપજઇ, મતિ પણિ નહીં પ્રકાસ.
ઉદાસીન મન માહરૂં, કહો કીમ કીજઇ જોડિ,
તું સદ્દગુરૂ જગિ જાગતાં, પૂરઇ વંછિત કોડિ.
પરતો એક મઇં પેખીઉં, નગર મરોટ મઝાર,
મેહ માગ્યો વૂઠો તુરત; ઇમ અનેક પ્રકાર.
તેણઇ તુજનઈં મઇં પ્રારથ્યો, સમરથ સાહિબ જાંણિ,
મઇં બીજો ખંડ માંડીઉં, તું શિઘ્ર ચાઢિ પ્રમાણિ,

આ રીતે 'પરતો'—ચમત્કાર—પરિચય પોતાને મરોટનગરમાં જિનકુશલ સૂરિના નામ સ્મરણથી વાંછિત મેઘવૃષ્ટિ થયાનો પોતાને મળેલો કવિ સ્વીકારે છે. એ ઉપરાંત બીજો 'પરતો' પણ દેરાવરમાં પોતાને મળેલ તે હકીકત પણ પોતે તેમના સ્તવનમાં નોંધી છે.

આયો આયો જી સમરંત દાદોજી આયો,
સંકટ દેખ સેવકકું સદ્દગુરૂ, દેરાવર તેં ધ્યાયો જી—સમરંતા૦
દાદા વરસે મેહ ને રાત અંધેરી, વાયપિણ સબલૌ વાયૌ,
પંચ નદી હમ બૈઠે બેડી, દરીયે હો દાદા દરિયે ચિત્ત ડરાયો જી—સમરંતા૦
દાદા ઉચ્ચ ભણી પોહચાવણ આયો, ખરતર સંઘ સવાયો,
સમયસુંદર કહે કુશલ કુશલ ગુરૂ, પરમાનન્દ સુખ પાયો જી—સમરંતા૦

—[પ્ર૦ રત્નસાગર ભા. ૧ પૃ. ૬૪૮]

ચાર પ્રત્યેક બુદ્ધના રાસની અંતે પણ જિનકુશલ સૂરિના સાંનિધ્યથી એ પૂર્ણ થયો એમ જણાવે છે.

વિમલનાથ સુપસાઉલે એ, સાન્નિધ્ય કુશલ સૂરીંદ,
ચારે ખંડ પૂરા થયા એ, પામ્યો પરમાણંદ—

વાર્ત્તાનો ઉપયોગ.

કવિ પ્રેમાનન્દ, અને શામળના પુરોગામી આ કવિએ પણ વાર્ત્તાઓને કૌતુકવતી બનાવી વિમલવાણીમાં મૂકી. વાર્ત્તાઓનું મૂલ કથામાંનું વસ્તુ લઇ તેને મનમાં ખડી રાખી તેનામાં પોતાનો અનુભવ પૂરતા જઇ લોકોત્તર ગિરામાં મૂકતા જઈ રસની સાથે વાર્ત્તાના પ્રવાહનું અનુસંધાન કવિ રાખતો ગયો છે;

Aho ! Shrutgyanam

वार्त्ता च कौतुकवती विमला च वाणी लोकोत्तरः परिमलश्च कुरंगनाभेः
तैलस्य बिन्दुरिव वारिणि दुर्निवारमेतत्त्रयं प्रसरति स्वमेव भूमौ ॥

કૌતુકવતી વાર્ત્તા, વિમલ વાણી અને કસ્તૂરીમૃગની નાભિની લોકોત્તર સુગંધઃ આ ત્રણ પાણીમાં તેલનું ટીપ અનિવાર્યપણે પ્રસરે તેમ પૃથ્વી પર સ્વયમેવ પ્રસરે છે.

આ કવિ જૂની વસ્તુને નવા આકારમાં-નવી ભાષામાં—પોતાની માતૃભાષામાં મૂકતા જઇ તેને ખીલાવ્યે ગયો છે અને તેવી ખીલાવટમાં આવશ્યક એવી પ્રેરણા અને તર્કશક્તિનો ઉપયોગ કવિ પોતે કવિ અને વાર્ત્તાકાર તરીકે કર્યે ગયો છે. વાર્ત્તાઓમાં લોકોનું અને સંસાર વ્યવહારોનું ચિત્ર-પ્રતિબિંબ કવિએ આળેખ્યું છે. તેનામાં પ્રેરણા છે, અને કિલષ્ટતા નથી.

કૃતિઓ ભાષાન્તર નથી.

કવિ પ્રેમાનન્દે પૌરાણિક સાહિત્યનું અનુકરણ અને ભાષાંતર કર્યું તે પહેલાં જૈન સાધુઓએ પોતાની પૌરાણિક કથાઓનું અનુકરણ અને ભાષાંતર કરવાનો માર્ગ ઘણાં વર્ષોથી લઈ લીધો હતો. પ્રેમાનન્દને પુરાણમાંની કથાનું વસ્તુ લઇ તે પર પોતાના કવિત્વનો ઓપ આપ્યો અને તેના સમયને 'કવિત્વ' જો કાળની ઉપમા અપાય તો તેની પહેલાંના જૈન કવિ, નય સુંદર, આ કવિ, ઋષભદાસ વગેરેને 'ભાષાંતર કાળ' માં ઉદ્ભવેલા નહિ કહી શકાશે. કારણકે તેઓએ માત્ર ભાષાંતર નથી કર્યું પણ મૂળ વસ્તુ પર પોતાનાં 'કવિ કેળવણી' થી ચણેલા સુંદર રોગાનો-રંગોવાળાં ચણતર કરી તેમાં 'કવિત્વ' દાખવ્યું છે-એ બધા છુટથી અને છટાથી ભાષાદ્વારા મનોભાવ દાખવવામાં સફલ અને વિજયી થયા છે.

દેશી દેશીઓ

સામાન્ય જન સમૂહમાં વાર્તા સાંભળવાનો અત્યંત રસ હોય છે અને તેવા વાર્ત્તાના રસીયાઓને-ભાવવાહી લોકભોગ્ય ભાષામાં એક ધારે વહેતી જૂદી જૂદી ઢાળો-દેશી રાગણીઓમાં પોતાની સ્વોત્પન્ન શક્તિથી કાવ્યમાં મૂકી આ કવિએ કથાનકો પૂરાં પાડયાં છે.

એવું કહેવામાં આવે છે કે ગૂર્જર સાહિત્યમાં કવિ પ્રેમાનંદે ગૂર્જર ભૂમિનાં જ 'વૃત્તસંતાનો'-ગૂજરાતી રાગો જેવા કે મારૂ, રામેરી, રામગ્રી આદિ દેશી રાગોનો બહુ છુટથી ઉપયોગ કર્યો છે; પરંતુ અત્રે મને કહેવા દો કે તેમના પૂરોગામી આ સમયસુન્દરે તેમની પહેલાં જ દેશી રાગોને અતિ વિસ્તૃત પ્રમાણમાં પોતાની સર્વ કૃતિઓમાં વાપર્યા છે, એટલું જ નહિ, પણ સમયસુંદરના સમકાલીન, અને તેમના સત્તરમા સૈકામાં જ થયેલ સર્વ જૈન કવિઓએ દેશી ઢાળો-રાગોનો જ ઉપયોગ કર્યો છે.

Aho ! Shrutgyanam

સમયસુન્દર તો દેશી રાગો-ઢાળો-દેશીઓના માર્મિક જાણકાર અને વાપરનાર હતા અને તે વાપરી જે સુન્દર કાવ્યો રચતા તે એટલે દરજજે સુધી પ્રસિદ્ધ થઇ ગયા હતાં કે તેમના પછીના જ નહિ, પણ નયસુંદર અને ઋષભદાસ જેવા તેમના સમકાલીન સમર્થ જૈન કવિઓએ પણ સમયસુન્દરનાં કાવ્યોની દેશીઓ ટાંકી તે દેશી ઢાળોમાં પોતાની કવિતાઓ રચી છે.

દેશી રાગો યથાસ્થાને વ્યાપરવામાં સમયસુંદરે વિવેચક બુદ્ધિથી કૌશલ દાખવ્યું છે.

(૧) સિંધુડે રાગેં રે, સુણિ શૂરિમા જાગે રે;
અતિ મીઠી પણ લાગે ઢાલ એ સાતમી રે.

(૨) ગોડી રાગેં પહેલી ઢાળ, સમયસુંદર કહે વચન રસાલ.

× × × ×

ગોડી રાગ રસાલ બીજી ઢાલ કહી,
સમયસુંદર કહે એમ સુણતાં સરસ સહી.

(૩) ટોડીને ધન્યાશરીજી, નવમી ઢાલે રાગ,
સમયસુંદર કહે સાંભલોજી, જિમ ઉપજે વૈરાગ.

× × × ×

ઢાલ ભણી એ સાતમી, ધન્યાસિરિ રાગ સોહેરે,
સમયસુંદર કહે ગાવતાં, નરનારી મન મોહેરે.

(૪) ભલો રાગ ખંભાયતીરે, સોહેલાની ઢાલ છઠ્ઠી રે,
સમયસુંદર કહે શ્રાવકો રે, સાંભલતાં અતિ મીઠીરે.

યુદ્ધમાં વીર રસ ઉત્પન્ન કરાવવા યુદ્ધગીત ' કડખા ' માં મૂકાય છે. હાલ ઝૂલણા છંદ યા પ્રભાતિયું જે રીતે ગવાય છે તેજ રીતે બારોટ ચારણાદિ ગાઈ તેને ' કડખુ ' નામ આપે છે. જૈન કવિઓ બનતાં સુધી યુદ્ધ સંગ્રામનાં ગીત આ કડખાની દેશીમાં જ મૂકે છે. સમયસુંદરે યુદ્ધ સંગ્રામનું ગીત-યુદ્ધ વર્ણન આ દેશીમાં મૂકયું છે અને છેવટે કહ્યું છે કે ' રામગ્રી રાગની ઢાલ એ પાંચમી, સમયસુંદર કહે જાતિ કડખો.—

ચડયો રણ ઝૂઝવા ચંડપ્રદ્યોત નૃપ, ચડતનાં તુરત વાજાં વજાયાં,
સુભટ ભટ કટક ચટ મટકિ ભેલા થયાં, વડવડા વાગીયા વેગેં ધાયા.—૧ ચડયો૦

(ગજવર્ણન) શીશ સિંદૂરીયા પ્રબલ મદ પૂરીયા, ભમર ગુંજાર ભીષણ કપોલા,
સુંઢ ઉલાલતા શત્રુદલ ગાલતા, હાથીયા કરત હાલા કલોલા—૨ ચડયો૦

ઘંટ બાજે ગલે રહે એકઠા મલે, મેહ-કાલી ઘટા જાણે દીસે,
ઢલકતી ઢાલ ને શીશ ચામર ઢલે, મત્ત માતંગ રહે ભર્યા રીસેં—૩ ચડયો૦

હાલતા ચાલતા જાણે કરી પર્વતા, ગુહર ગુંજાર ગંભીર કરતા,
ચંડપ્રદ્યોત રાજા તણા કટકમેં, હસ્તી લાખ દોય મદવારિ ઝરતા—૪ ચડયો૦

Aho ! Shrutgyanam

(અશ્વવર્ણન) દેશ કાશ્મીર કંબોજ કાબુલ તણા, ખેત્ર ખુરસાણુ સૂધા બુખારા,
અવલ ઉત્તર પવન પાણી પંથા વલી, ભલ ભલા કચ્છી તેજી તુખારા—૫ ચડયો૦
નીલડા પીલડા સબલ કંબોજડા, રાતડા રંગ કવિલા કિહાડા,
ફિરડીયા કાલૂઆ ધૂંસરા દૂસરા, હાંસિલા વાંસલા ભાગ જાડા—૬ ચડયો૦
પવન વેગ પાખર્યા ફોજ આગલ ધર્યા, ચાલતા જાણે ચિત્રામ લેખ્યા,
એહવા અશ્વ ઉજેણી રાજા તણે, કટકમેં લાખ પંચાસ સંખ્યા—૭ ચડયો૦

(પાયક વર્ણન) શિર ધરે આંકડા બાંહે પેહેરી કડાં, ભાજની પરતના બોલવાલા,
એકથી એકડા કટક આગલ ખડા, શૂર વીર વાંકડા સુભટ પાલા—૮ ચડયો૦
સબલ કાંધાલ મૂછાલ જિન સાજિયા, લોહ મય ટોપ આટોપ ધારા,
પંચ હથિયાર હાથે ને બાથે ભડિ, ભીમ સમ વડ ભલા પાલિ હારા—૯ ચડયો૦
તીર તર કસ ધરા અભંગ ભટ આકરા, સહસ જોધાર સંગ્રામ શૂરા,
ચંડપ્રદ્યોત રાજાતણે એહવા, સાત કોડિ સાથઃ પાયક પૂરા—૧૦ ચડયો૦

(રથવર્ણન) નિજ નિજ નામ નેજા ધજા ફરહરે ધર હરે ઘોર નીશાણુ વાજા,
જરહ જોશાણુ કીયા લાખ બે રથ શીયા, સાથમેં ચંડપ્રદ્યોત રાજા—૧૧ ચડયો૦
ચાલીયા કટક જાણે ચક્રવર્ત્તિકા, ઇસરી ધૂલ ઉડે ગગન લાગી,
સમુદ્ર જલ ઊછલ્યાં સેષ પણ સલસલ્યા, ગુહર ગોપીનાથકી નિંદ ભાગી—૧૨ ચડયો૦
ઇંદ્રિને ચંદ્ર નાગેન્દ્ર પણ ખલભલ્યા લંક ગઢ પોલિ તાલાં જડાયાં;
સબલ સીમાલ ભૂપાલ ભાગી ગયા, ચંડપ્રદ્યોત રાજા ન આયા—૧૩ ચડયો૦
આવીયો ચંડપ્રદ્યોત ઉતાવલો, દેશ પંચાલની સીમમાંહે,
દુમુહ રાજા પણ દેદિમામાં ચડયો, આવી સાહમો અડયો મન ઉચ્છાહેં-૧૪ ચડયો૦
ફોજ ફોજેં મલી બાટ ભટ ઊછલી, સબલ સંગ્રામ ભારથમંડાણો,
ભડેં ભડ મલ્યા ભૂપ ભૂપેં ભડયા, સુભટ સુભટેં અડયા દેખી ટાણો—૧૫ ચડયો૦
મુકુટ પરભાવેં રાજાન જીત્યો દુમુહ, કટકમાં પ્રગટ જસ પડહ વાગો,
કાછ લંપટ સદા કૂડ કપટી તદા, ચંડપ્રદ્યોત રાજાન ભાગ્યો—૧૬ ચડયો૦
નાસતો ભાજતો ચંડપ્રદ્યોત નૃપ, જાલિ કરી બેડીયામાંહે દીધો,
કટક ભાજી દશોદિશિ ગયું તેહનું, 'ધર્મ જય પાપ ક્ષય' વચન સીધો—૧૭ ચડયો૦
દુમુહ રાજા ન આયો ઘેર આપણે, કહે ઇહાં રાજ પંચ રાત પડખો,
રામથી રાગની ઢાલ એ પાંચમી, સમયસુંદર કહે જાતિ પડખો—૧૮ ચડયો૦

આમ ઉજ્જયિનીના વિષયલંપટ રાજા ચંડપ્રદ્યોતને અને પંચાલના કંપિલપુરના રાજા દુર્મુખ સામેના યુદ્ધનું વર્ણન કવિએ કડખાની દેશીમાં આપ્યું; તેમ 'સિંધુડો' એ યુદ્ધના રાગમાં કવિએ કંચનપુરનાં કરકંડુ રાજા ચંપાના દધિવાહન રાજા પર ચડે છે તેનું વર્ણન કરે છે.

Aho ! Shrutgyanam

કરકંડુ રાજા રે, સુણિ કરત દીવાજા રે, તતકાલ વજાયાં, વાજાં ચઢતરાં રે.
કટકી કરી ધાયો રે, ચંપા પુરી આયો રે, તપ તેજ સવાયો રે, પુર વીંટી રહ્યો રે.
ગઢરો હો મંડયો રે, અભિમાન ન છંડયો રે, નિજ બોલ ન ખંડયો, નૃપ સાહામો અડયો રે.
રણ ભૂમિકા સૂડે રે, નાલગોલા છૂટે રે, ગડડંત ગયગુડે, શેષનાગ સલસલે રે,
સરણાઇ વાજે રે, સિંધૂડો સાજે રે શૂરવીર વિરાજે ઉંચા ઉચ્છલે રે.
પહેર્યા જિણ શાલા રે, ઉમટયા મેહ કાલા રે, શિર ટોપ તેજાલા ઝબઝબ ઝબકતા રે,
ભાલાં અણીયાલાં રે, ઉછાલે પાલા રે એક સુભટ સુછાલા, ચાલે ચમકતા રે.
વાજે રણતૂરાં રે, બેઉ દલ પૂરાં રે, એક એકથી શૂરા સુભટ તે સાથમેં રે.
જમકી જીભ લબકે રે, જાણે વિજલી ચમકે રે, તરવાર ઉઘાડી ઝબકે હાથમેં રે.
વહે તીર વચાલેં રે, આવંતાં ટાલે રે વયર પોતાનું વાલે તે સાસે નહી રે.
નવા નેજા ફરકે રે, વઢવાને થરકે રે પગ એક ન સરકે પાછા તે સહી રે.
મૂછે વલ ઘાલે રે, આગલથી ચાલે રે ફોજ આવંતી પાળે તે વલી વારકી રે.
એક પાગડા છોડે રે, નૃપ હોડાહોડે રે, અણીએં અણી જોડે ફોજાં મારકી રે.
છોડી આતસ બાજી રે, બેઉ રાજા-રાજી રે ન રહે ગજ વાજી ઝાલ્યા કેમ કિયે રે.
ઠાકુરબ પુકારે રે, બાપ બિરૂદ સંભારે રે આજ જય તે તુમ્હારે ભુજે પામીયેં રે.
ભાજણરા સુસ લીધા રે, ગંગોદક પીધાં રે, ભલાં ભોજન કીધાં તાજાં ચૂરમાં રે.
રાણીરા જાયા રે, આમ્હા સામ્હા ધાયા રે ઘણા અમલ ખવરાયા ચઢિયા શૂરમાં રે.
એક કાયર કંપેરે, ચિહું દિશિ દલ ચંપે રે, મુખ જંપે હાહા હવે કિણ દિશિ ભાગશું રે,
શૂરવીર ત્રાહુકે રે, હોંશે રણ ઢૂકે રે, મુખ કૂકેં આવો આજ લટાપટ લાગશું રે.
સંગ્રામ મંડાણો રે, નહીકો તિસો શાણો રે, રાય રાણો સમજાવે જે બિહું રાયને રે.
હુંતી વાત થોડી રે, થઇ કલેશની કોડી રે, ન શકે કોઇ છોડી સમજાયને રે.
સિંધુડે રાગેં રે, સુણિ શૂરિમા જાગે રે, અતિ મીઠી પણિ લાગે ઢાલ એ સાતમી રે
સમયસુંદર ભાંખેરે, હવે વઢતાં રાખે રે, પદ્દમાવતી પાખેં એ કુણ મતિ સમીરે.

કવિએ અનેક દેશદેશાંતર ભ્રમણ કરેલ છે અને ત્યાં ત્યાંથી ગવાતાં ગીતોને-દેશીઓને લઇ તેમાં પોતાનાં કાવ્યો ગાયાં છે-સંગીત કાવ્યો રચ્યાં છે. પોતાના 'મૃગાવતી રાસ' માં જણાવે છે કેઃ-

સંધી પૂરવ મરૂધર ગુજરાતી, ઢાલ નવી નવ ભાતી,
ચતુર વિચક્ષણ તુમ્હે હોઇ, ઢાલ મ ભાંગજ્યો કોઇ.

એટલે સિંધની સિંધી, પૂર્વ હિંદની, મારૂવાડની મરૂધર અને ગુજરાતની ગુજરાતી ઢાળો નવી નવી પોતે કરી છે, તે ઢાળને હે શ્રોતા! તમો ચતુર વિચક્ષણ હોઇને કોઈ ભાંગતા નહિ-અખંડ રાખજો એટલે રાગથી અળગી નહિ કરતા-ગાયે જ જજો, કારણ કે

ભાંગી ચૂડિમેં નહી સકારા, તૂટિ લટિમેં જ્યું હારા,
ભાંગે મને ન સોહે વૈરાગી, તિમ ન સોહે ઢાલ ભાંગી.
કનક મુદ્રડી નંગ વિહુણી, રસવતી જેમ અલૂણી,
કંત વિના જિમ નારિ વિરંગી, રાગ વિણ ઢાલ ન ચંગી.

Aho ! Shrutgyanam

મીઠી ઢાલ રાગસિઉં મેલી, જિમ મિશ્રી દૂધ ભેલી,
તેહ ભણી ઢાલ રાગસિઉં કહયો, ચતુર તુમ્હે જસ લેયો.

આ ઉપરાંત ઢુંઢાડી (મારવાડ પાસેનો પ્રદેશ), મેવાડી, દિલ્હી વગેરેની દેશીઓ લીધી છે. (જુઓ ઉપર સીતારામ ચોપાઈ પર લખતાં જણાવ્યું છે તે)

હવે ઉપરના પ્રાંતની ઢાલો જોઇએ. સિંધી, એટલે સિંધ પ્રદેશની. પોતે મુલતાનમાં વસ્યા હતા અને ત્યાં અનેક સિંધીઓ વસતા હતા એમ તેમણે જણાવ્યું છે. તે લોકોમાંથી—

(૧) સિંધી ઢાળ. ૧. "રાગ-મારૂણી-ઝાંખર દીવા ન બલે રે, કાલરિ કમલ ન હોઇ,
છોરિ મૂરખ મોરી બાંહરી, મીયા જોરે પ્રીતિ ન જોઈ,
કન્હઇયા બે, ઇયારલ બાસિયા, જોવન જાસિયા બે, બહુર ન આસિયા.

એની ઢાલ-એ ગીત "સંધિ માહે પ્રસિદ્ધ છે." આ પ્રમાણે કવિએ સ્વહસ્તલિખિત પોતાની સીતારામ પ્રબંધ ચોપાઇમાં આઠમા ખંડની બીજી ઢાલમાં લખ્યું છે.

૨. સંધિની રાગ આસાઉરી. મન રાજી તો સું કરઇ કાજી; એ ઢાલ.
૩. રાગ આસાઉરી સિંધૂડો. ઢાલ સિંધની.
—આ બંને મૃગાવતી રાસમાં વાપરી છે.

(૨) પૂરવની ઢાળ.-રાગ હુસેની. ધન્યાસિરી મિત્ર.

દિલ્લી કે દરબારમેં લખ આવે લખ જાઇ, એક ન આવે નવરંગ ખાન જાકિ પઘરિ ઢલિર જાઇ.
–નવરંગ વેરાગીલાલ એ દેશી.

(૩) મરૂધર ઢાલ-(ઢુંઢાડી તથા મેવાડી) તો પુષ્કળ લીધી છે કારણ કે ત્યાં પોતે બહુ વાસ કર્યો છેઃ-કવિએ પોતે જણાવેલ તે પ્રમાણે નીચે મૂકવામાં આવેલ છે.

૧. વરસાંરી હોલી આવઇ, પ્રાહુણા—એ ગીત
૨. ભોજરાજારી ગીતરી. હાથીયાં રઇ હલકઇ આવઇ માહરઇ પ્રાહુણીરે–એહની ઢાલ.
૩. ઇડરીયો ઇડરીયો ઓલગાણે આબૂ ઉલગ્યોં આબુ ઉલગ્યોરે લાલ.
૪. તોરા કીજો મ્હારા લાલ, દારૂ પીજો જી, પડવે પધારો મ્હારા લાલ, લસરક લેજ્યોજી.–
તેરી અજબ સૂરતિ મ્હાંકો મનડો રંજ્યો રે લોભી લંજ્યાજી–એ ગીતની ઢાલ.
૫. રે રંગ રત્તા કરહલા, મો પ્રીઉ રતો આંણુ, હુંતો ઉપરીકા દિનેં પ્રાણુ કરૂં ખુરબાંણુ
સુરંગા કરહલા રે, મો પ્રીઉ પાછો વાલ. મજિઠા કરહલા રે–એ દેશી રાગ મારૂણી.
૬. અમ્હાં માંકી ચિત્રાલાં કીઈ જોઇ, અમ્હાં મારૂડેં મેવાસીકો સાદ સોહામણો રે લો.
૭. રૂડીરે રૂડીરે બારણે સમલા પદમિનીરે. એ દેશી રાગ મારૂણી. -આ બધી મૃગાવતીમાં.
૮. રાગ આસાઉરી. સિંધુડો મિત્ર. ચરણાંલી ચામુંડા રણે ચડે, ચખ કરી રાતા ચોલોરે
વિરતિ દાનવ દલ વિચિ, ધાઉ દીયો ધમરોલો રે—રારણાલી૰

Aho ! Shrutgyanam

૯. વેસર સોનાકી, ઘરિદે ચતુર સોનાર વે૦, વેસર પહેરી સોનાકી રંઝે નંદકુમાર વે૦
—એહ ગીતની. રાગ અસાઉરી.

૧૦. નોખારા ગીતરી—નોખારા ગીત મારૂયાડિ ઢુંઢાડિ માંહે પ્રસિદ્ધ છે.

૧૧. રાગ ખંભાયતી. સોહલાની જાતિ. અમાં મોરી મોહિ પરણાવિ હે અમાં મોરી.
જેસલમેરા મેરા જાદવાં હે—જાદવ મોટા રાય, જાદવ મોટા રાય હો.
અમાં મોરી કડિ મોડીને ઘોડે ચડેહો—એ ગીતની ઢાલ.

૧૨. રાગ ખંભાયતી—સુંબરા તું સુલતાણ, બીજાહો થારા સુંબરાં ઓલગૂ હો—એ ગીતની ઢાલ.
—એ સુંબરાના ગીતની ઢાલ—જોધપુર મેડતા નાગોર નગરે પ્રસિદ્ધ છે.

૧૩. તિલ્લીરા ગીતરી ઢાલ—મેડતાદિક દેસે પ્રસિદ્ધ છે. (**આ સીતારામ પ્રબંધમાંથી છે.**)

(૪) **ગૂજરાતની**

૧. પોપટ ચાલ્યઉ રે પરણવા—એ સંસારી ગીતની ઢાલ ખંભાતમાં પ્રસિદ્ધ છે. (ચંપકશેઠ રાસ)

૨. ઢાલ ગામી ગૂજરાતી કુલડાંની.

૩. રાગ વયરાડી—જાજારે બાંધવ તું વડો—એ ગૂજરાતી ગીતની ઢાલ.

૪. કપૂર હુયે અતિ ઉજલું રે, વલિ અનોપમ ગંધ—એ ગીતની ઢાલ.

આવી અનેક દેશીઓ ગીતો વગેરેની લીધી છે તે પરથી એમ સમજાય છે કે આ ગીતો—લોકગીતોનું સાહિત્ય તે વખતે-કવિના જમાનામાં ઘણું હતું. એક સ્થળે એક એવી દેશી ઉતારી છે; જેમકે રાગ પરજીયો. ઢાલઃ—

સિહરાં સિહર મધુ સુરીરે, ગઢાં વડો ગીરનારી રે
રાંણ્યા સિરહર રૂકમિણીરે, કુંયરાંનંદ કુંમાર રે
કંસાસુર મારણ આવિને રે પલાદ ઉધારણ રાસ રમણ ધરિ આવ્યો
ધરિ આજ્યો ધરિ આજ્યો, હો રાંમ રાંમજી ધરિ આજ્યો.—એ દેશી.

આ પરથી કવિની અગાઉનાં કાવ્યો હતાં તે પૂરવાર થાય છે. 'સોરઠ દેસ સોહામણો સાહેલડી રે દેવાં તણો નિવાસ—એ ગજસુકુમાલની ચોઢાલીયાની' દેશી એક સ્થળે કહી છે અને બીજે સ્થળે સુબાહુ સંધીની ઢાલ કહી છે તે પરથી ગજસુકુમાલ પરથી ચાર ઢાલવાળું કાવ્ય તથા સુબાહુ સંધિ એ કવિના અગાઉનાં અન્ય કવિએ રચેલાં સુપ્રસિદ્ધ કાવ્યો હતાં તે સિદ્ધ થાય છે.

કવિ પોતે જોડેલાં કાવ્યોની પહેલી કડીની દેશી તરીકે પણ બીજાં પોતાનાં કાવ્યમાં મૂકી છે તે પરથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે પોતાની દેશીઓ પર પણ પોતાને મોહ હતો. દાખલા તરીકે સીતારામ પ્રબંધમાં—

(૧) પ્રત્યેક બુદ્ધની બીજા ખંડની આઠમી ઢાલ.

(૨) સુણોરે ભવિક ઉપધાન લહ્યાં વિણ કિમ સૂઝે નવકાર. એ સ્તવનની ઢાલ.
(આ ઉપધાન સ્ત૦ પોતાનું છે)

Aho ! Shrutgyanam

(૩) રાગ બંગાલો-ઇમ સૂણી દૂત વચન્ન, કોપીઓ રાજા મન્ન-એ મૃગાવતીની ચોપઇની બીજા ખંડની દશમી ઢાલ.

(૪) રાગ ધન્યાસિરી-સીલ કહે જગિ હું વડું, મુઝ વાત સુણો એક મીઠીરે-એ સંવાદ શતકની બીજી ઢાલ (આ સંવાદ શતક તે દાનશીલ તપ ભાવના સંવાદ પર ચોઢાળીયું સ્વરચિત છે તે)

(૫) શ્રેણિકરાય હુંરે અનાથી નિગ્રંથ (અનાથી પર સઝાય)

(૬) આદરજીવ ક્ષમા ગુણ આદર (ક્ષમાબત્રીશી)

(૭) હવે રાણી પદમાવતી જીવરાશિ ખમાવે. (પ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ) વગેરે વગેરે અનેક ઉદાહરણ છે.

રસાલંકાર જ કાવ્યનું લક્ષણ છે?

રસાલંકારવાળું કાવ્ય લખનારને જ કવિ કહેવાય એવો નિયમ સર્વાંશે ગ્રહણ કરી ન શકાય. રસાલંકારવાળું કાવ્ય કરવું શ્રમસાધ્ય છે અને તે પંડિતોને માટે-વિદ્વદ્ભોગ્ય થાય છે. જે સહજ સરલતાથી અખંડપણે વ્હેતા ઝરાની માફક સ્વાભાવિક, સરલતાથી રસિકભાવ અર્પતી કવિતા છે તે કાવ્ય નથી એમ કેમ કહી શકાય ? આવી કવિતામાં ચરિત્ર વિષયક ગ્રંથમાં ચરિત્રનાયકનું રસાળ અને ચિત્તવેધક કથાનક સુરસરીતિથી કવિએ વર્ણવેલું હોય છે ત્યારે માનવી વૃત્તિના ભિન્નભિન્ન દૃશ્યો વાચકની હૃત્પટ્ટિકા પર આબેહૂબ આલેખવાનું અમોઘ સામર્થ્ય કવિનું સ્થળે સ્થળે જણાઈ આવે છે. ભયપ્રદ યુદ્ધસંગ્રામ, રમ્ય સુરમ્ય સ્થાનો, રાજ્યાભિષેકના પ્રસંગો, અને નગરશોભાના અપ્રતિમ દેખાવો-એ સર્વનાં મનોહર રીતિથી વર્ણન કરેલાં હોય છે. આમાંના કેટલાંક વર્ણનો આ કવિનાં આપણે અગાઉ જોઇ ગયા. વિશેષ હવે પછી જોઈશું.

પ્રકૃતિ પર કાવ્યો.

પ્રકૃતિનું સૌંદર્ય કવિ જે આંખથી જોઈ શકે છે તે પ્રકૃત--સામાન્ય જનો જોઈ શકતા નથી. પ્રકૃતિના વિવિધ દેખાવ જોઈને સુંદર શબ્દ રચનાથી તેનું વર્ણન કરવામાં કવિનો ભાવ વહે છે અને તે ભાવથી સૌન્દર્યબોધ કરતો કવિ વિશેષ આકર્ષક બને છે. આપણા જૂના સાહિત્યમાં બહુ સુન્દર કાવ્યો આ સંબંધી મળતાં નથી, છતાં સામાન્ય એવા કંઈ નમુનાઓ મળી આવે છે:—

વસંતવિહાર

તેણે અવસરે સોહામણો, આયો માસ વસંત, સુરંગાં ખેલણાં.
રસિયા ખેલે બાગમેં, ગાયે રાગ વસંત, સુરંગા ખેલણાં.
બોલસિરી જાઇ જૂઇ, કુંદ અને મુચ કુંદ,-
ચંપક પાડલ માલતી, ફૂલી રહ્યાં અરવિંદ-
દમણો મરૂઓ મોધરો, સબ ફૂલી વનરાય,-
એક ન ફૂલી કેતકી, પીયુ વિણ હર્ષ ન થાય-

Aho ! Shrutgyanam

આંબા મોર્યા અતિ ઘણા, માંજર (મંજરી) લાગી સાર,-
કોયલ કરે ટહુકડા, ચિહું દિશિ ભમર ગુંજાર-
જુગબાહુ રમવા ચલ્યો, મયણરેહા લૈ સાથ,-
બાગમાંહિ રમે રંગશું, ડફ્ ધર્યું નિજ હાથ-
નિર્મલ નીર ખંડો ખલી, ઝીલે રાજ મરાલ,-
પ્રેમદા શું પ્રેમેં રમે, નાખે લાલ ગુલાલ-
ભોજન ભક્તિ યુક્તિ ભલી, કરતાં થઇ અવેર,-
રાત પડી રવિ આથમ્યો, પ્રસર્યો પ્રબલ અંધેર-
નિર્ભય ઠામ જાણી રહ્યો, રાતેં બાગ મઝાર,-
કેલીઘર સૂતો નૃપ, થોડો શો પરિવાર-
ચોથી ઢાલ પૂરી થઇ, ઝુંબખડાની જાતિ,-
સમયસુંદર કહે હવે સુણો, રાતે હોશે જે વાત-

—નમિરાજા પ્રત્યેક બુદ્ધ રાસ રચ્યા સં૦ ૧૬૬૨

વસંતવર્ણન

એહવેં માસ વસંત આવીઉં, ભોગી પુરૂષાં મન ભાવીઉં,
રૂડી પરઈ ફૂલી વનરાઇ, મહકેં પરિમલ પુહવી ન માઈ.
સખર ઘણું મહોર્યા સહકાર, માંજરી લાગી મહિકેં સાર,
કોઇલ બઇઠી ટીહૂકા કરે, શાખા ઉપરિ મધુરે સ્વરેં.
છયલ છબીલા નર છોગાલ, ગાઈ વાઈ બાલ ગોપાલ,
ચતુર માણસને હાથે ચંગ, મેઘનાદ વાજઈ મિરદંગ.
ફૂટેરાં ગીત ગાઈ ફાગનાં, રસિક ભેદ કહઈ રાગનાં,
ઊડે લાલ ગુલાલ અબીર, ચિહું દિસિ ભીંજાઇ ચરણા ચીર.
નગરમાંહિ સહુકો નરનારિ, આણંદ ક્રીડા કરઇ અપાર,
ઢલતી રામગિરિ એ ઢાલ, સમયસુંદર કહે વચન રસાલ.

—પ્રિયમેલક રાસ, સં૦ ૧૬૭૨.

કવિ પોતાના સમયનું પ્રતિબિંબ છે.

કવિ એ પોતાના સમયનું ચિત્ર નજર આગળથી દૂર કરી શકતો નથી. કલ્પનાના અંતર્પટ પર ખેંચેલાં ચિત્રો કે આદર્શભાવનામાંથી ઉતારેલાં પાત્રોનાં આલેખનો વાણીમાં ચિતરતી વખતે કવિ આસપાસની પરિસ્થિતિ થોડો વખત ભૂલી જાય, છતાં યે સંપૂર્ણ રીતે પોતાના સમયની સ્થિતિમાંથી સંપૂર્ણરીતે કવિ મુક્ત થઇ શકતો નથી. પ્રચલિત કથાઓ કે શાસ્ત્ર—પુરાણની દંતકથાઓને સ્વભાષામાં, કવિતામાં, અવતારતીવેળા આખ્યાનક કવિઓથી સ્વસમયની સ્થિતિ કદિ વીસરાતી નથી. આખ્યાનોનો હેતુ રસ અને બોધ આપવાનો છે અને તેથી મનુષ્યઆત્માની સ્વભાવિક પ્રેરણા-(ideal) ને વ્યાપકરીતે અંત સુધી અખંડપણે આપવામાં ભાવનામય-આદર્શમય કવિઓ ચીવટથી વળગી રહે તેવું

Aho ! Shrutgyanam

આખ્યાનોમાં સ્વાભાવિક રીતે હોતું નથી. આટલું છતાં આખ્યાનમાં માત્ર હકીકતો કહી જવી એટલું જ કાર્ય કવિનું નથી, તેમાં તેને પ્રેરણામય ભાવના સાથે વસ્તુ-સ્થિતિના ચિત્રકાર (realist) થવું પડે છે. રાસાઓ એ મુખ્યપણે આખ્યાનો છે-કથા વર્ણનો છે. તેના રચનાસમયનાં આચાર, વ્યવહાર અને રહેણી-કહેણીની વાતો તેમાં પ્રવેશ પામે છે તેથી તે સમયનું થોડું ઘણું સામાજિક જ્ઞાન પણ થાય છે.

આ કવિએ દુમુખરાજા (પછીથી પ્રત્યેક બુદ્ધ) ની પટરાણી ગુણમાલાને સાત પુત્ર થયા છતાં પુત્રીની ઈચ્છા થઇ તે હકીકત પર કેટલીક સ્ત્રીઓ સામાન્ય રીતે અતૃપ્ત હોય છે તેના પર એક ઢાળ તેના પ્રબંધમાં રચી અને ખાસ કરી છેવટે ગૂજરાતી સ્ત્રીઓને માટે તે હકીકત લાગુ પડે છે એવું જણાવી કવિ ટોણો મારે છે કે પોતાનું કહેવું સાચું છે કે નહિ તે જાણવું હોય તો 'ગૂજરાતી લોક પૂછજયોરે, તે કહેશે તતકાલ!' તે ઢાલ નીચે પ્રમાણે છેઃ—

અતૃપ્ત સ્ત્રી

આ કામિની તૃપ્તિ ન પામે કેમ,
રઢ લીધી મૂકે નહી રે, પગ પગે નવનવા પ્રેમ રે—આ કામિની.
જનમથી માયા કેલવી રે. શીખે ઘરનું સૂત્ર,
ધૂલડી યેં રમતી કહે રે, એ મુજ પતિ એ પુત્ર રે—
દેહ સમારે દિન પ્રત્યેં રે, શીખી નાણુ વિન્નાણુ,
અણુખ અદેખાઇ કરે રે, ગાયે ગીત નેં (ત્રિયનાં) ગાન રે—
આરાધે કુલ દેવતા રે, વિનતિ કરે વારંવાર,
ગૌરી ગણુ ગોરી રમે રે, ભલો હોજ્યે ભરતાર રે—
પરણી પણ રહે પૂછતી રે, વશીકરણ એકાંત,
કિમહિ પિયુડો વશ કરૂં રે, પૂરૂં મનની ખાંત રે—
સુખ પામે ભરતારનું રે, તો પુત્ર વાંછે નાર,
પુત્ર પાંખે કહે કામિની રે, કાંઇ સરજી કિરતાર રે—
પુત્ર પરણાવું પ્રેમશું રે, વહૂ દેખું એક વાર,
ગોદ ખેલાઉં પોતરા રે, સફળ કરૂં અવતાર રે—
બાલક પીડા ઉપજે રે, પ્રાયેં ઉગમતે સૂર,
ખેત્રપાલેં ભમતી રહે રે, ઢોલે તેલ સિંદૂર રે—
પુત્ર પ્રમુખ સુખ ઉપનાં રે, તો પણ જીવ ઉદ્વેગ,
ગુણમાલા રહે ઝૂરતી રે, પુત્રી ન પામી એક રે—
ચોરી ન બાંધી આંગણે રે, તોરણેં નાવી જાન,
પેસતો જમાઇ ન પોંખીયેં રે, તે જીવ્યું અપ્રમાણ(કુલ જ્ઞાન) રે—
હાથ મુકાવણ હાથીયો રે, કે ઘોડા કે ગામ,
જમાઇ ન દીધો દાયજો રે, તો ધન કેહું (કેહે) કામ રે—
ધનતન (ધણતણ) સદાલી નારીનો રે, સહજ સદારો એહ,

Aho ! Shrutgyanam

પુત્ર થકી પણ વાલહો રે, નવલ જમાઇ નેહરે —
માંન્યા ઇચ્છણાં માનણાં રે, દોડિ દેવાલે જાય,
દોડધાવ કરતા થકાં રે, કિણ મેલે પુત્રી થાય રે—
સમયસુંદર કહે મેં ભણી રે, એણીપરેં ત્રીજી ઢાલ,
ગુજરાતી લોક પૂછજ્યો રે, તે કહેશે તતકાલ.

—(દુમહ નામના બીજા પ્રત્યેક બુદ્ધનો રાસ.)

નમિરાજ ઋષિ નામના ત્રીજા પ્રત્યેક બુદ્ધના ચરિત્ર પરના રાસમાં કવિ પહેલાં સુદર્શન નામના નગરનું વર્ણન કરે છે તેનો મુખ્ય ભાગ જે આગ્રા નગરમાં કવિ તે રાસ રચી રહ્યો છે તેનું જ વર્ણન કરતો હોય તેમ જણાય છે. આગ્રામાં રચના સમયે (સં૦ ૧૬૬૨) મહાન્ અકબ્બર સ્વર્ગસ્થ થયા પછી જહાંગીર બાદશાહ થયો હતો. મોગલ સલ્તનતના દરબારો અને તેની રાજધાની કેવી હોઈ શકે તેનું કંઈક વર્ણન સુદર્શન નગરના વર્ણનમાં કવિએ મૂકેલું છેઃ—

નગર વર્ણન

જંબૂદ્વીપ સોહામણો, ક્ષેત્ર ભરત રસાલ, દેશ અવંતી દીપતો, કદી ન પડે દુષ્કાલ.
નગર સુદર્શન અતિ ભલું, બહુ ઋદ્ધિ સમૃદ્ધિ, વારૂ વસે વ્યવહારીયા, દેશ દેશ પરસિદ્ધ.—નગર૦
ઉંચા મંદિર માલીયાં, ઉંચા રાજ પ્રાસાદ, દંડ ઉપર ધ્વજ લહલહે, કરે સ્વર્ગશું વાદ.
અંતેઉર જાણે અપછરા, ઇંદ્રે મૂકી આણી, દૈત્ય થકી ડરતે થકે, નિર્ભય ઠામ જાણી.
કિહાં કિણે રાજસભા જડી, મહેતા પરધાન, શેઠ સેનાપતિ સૂત્રવી, **ખોજા ને ખાન.**
કિહાં કણે છત્ર ધરાવતો, બેઠો ભૂપાલ, હુકમ ચલાવે આપણો, માને બાલ ગોપાલ.
કિહાં કણે ભૂપ આગળ ભલા, વઢે જેઠીમલ્લ, હુશીયાર રહે રવે રામલા, વાહે વલી ગાલ.
કિહાં કણે શુંઢ ઉલાલતા, ઝરતાં મદવારિ, સુંદર શશિ સિંદૂરીયા, ઘૂમે દરબારિ.
કિહાં કણે ઘોડા જુલમતી, સોવન જડિત પલાણ, તાજા તેજી હીંસતા, દીસે દીવાણ.
કિહાં કણે વલી પાયક લડે, સામે હથિયાર, એક વાહે ઘા એકને, એક ટાલણહાર.
કિહાં કણે **ઘડીયાલાં** ઘડી, વાજે વારંવાર, કાલ જણાવે લોકને, રેહેજ્યો હુશિયાર.
કિહાં કણે વલી નોબત તણા, વાજે નીશાણ, જાગોરે જાગો ધર્મ કરો, લોકને કરે જાણ.
કિહાં કણે કનક રૂપા તણી, પડે તિહાં **ટંકશાલ**, ગંજ ખજાના ઉપર રહે, બહુત રખવાલ.
કિહાં કણે બેઠા ચઉતરે, **કાજી કોટવાલ**, ઝગડો ભાજે લોકનો, ન લીધે લાંચ વિચાલ.
કિહાં કણે દોશી કાપડા, વેચે પટકૂલ, જેમ તેમ સાટું મેલવે, દલાલ વાતુલ.
કિહાં કણે બેઠા જવહરી, જવાહીર લેઇ જોય, મોતી માણક લાલડે, લાભ પામે સોય.
કિહાં કણે માંડયાં કંદોઇએં, સુખડી બહુ હાટ, ગુંદવડાં પેડા ભલા, દીઠે ગલે દાઢ.
કિહાં કણે સખરા સુરહીએ, ચૂઆ ચંપેલ, મહમહતા માંડયાં ઘણાં, મોઘરેલ ફૂલેલ.
કિહાં ઘંટા રણકે દેહરે, જિનબિંબ વિચિત્ર, શ્રાવક સ્નાત્ર પૂજા કરે, કરે જન્મ પવિત્ર.
કિહાં વલી સાધુને સાધવી, બેઠાં પોશાલ, દ્યે ભવિયણને દેશના, વાંચે સૂત્ર રસાલ.
કિહાં ભલે આંક ભણે ઘણા, નીશાલે બાલ, છ્દુ બાર મુખેં કહી, ધડો દે તતકાલ.

Aho ! Shrutgyanam

કિહાં કાજી મુલ્લાં પઢે, કિતાબ કુરાણ, કિહાં વલી બ્રાહ્મણ વેદીયા, ભણે વેદ પુરાણ.
કિહાં બજાર બાજી પડે, કિહાં ગીતને ગાન, કિહાં પવાડા ગાઇયે, કિહાં દીજે દાન.
કિહાં વલી નગરની નાયકા, બૈઠી આવાસ, હાવ ભાવ વિભ્રમ કરી, પાડે નર પાસ.
કિહાં વલી મોતી પ્રોઇયે, કિહાં ફટિકની માલ, કિહાં પરવાલાં કાઢીયે, હીંગલો હરિયાલ.
કિહાં ધાનના ઢગ માંડીયા, કિહાં ખડના ગંજ, કિહાં ઘી તેલ કૂડાં ભર્યાં, કિહાં કાષ્ઠના પુંજ.
ચઉરાશી ચઉટા ભલા, ભલી પોલ પ્રાકાર, ભલી બાજાર ત્રિપોલિયા, ભલા સકલ પ્રકાર.
નગર સુદર્શન વર્ણના, એ પહેલી ઢાલ, સમયસુંદર કહે હવે કહું, તિહાં કોણ ભૂપાલ.

આમાં ખોજા, ખાન, કાજી, કોટવાલ, જવેરી, ટંકશાલ, ઘડિયાલ, સરૈયા (અત્તરવાળા), મુલ્લા-કુરાન, નાયિકા વગેરેને સ્થાન આપ્યું છે, તેમ જ ભૂપાલ પણ જહાંગીરી હુકમ વાળો (હુકમ ચલાવે આપણો, માને બાલ ગોપાલ) વર્ણવ્યો છે એટલું જ નહિ પણ જેને મલ્લબાજી, પટ્ટાબાજી, હાથીને ઘોડાના ખેલો પસંદ છે એવું જણાવ્યું છે તે જહાંગીર બાદશાહને લાગુ પડે છે. મોટી ઘડિયાલ અકબર બાદશાહના વખતમાં દાખલ થઇ હતી તેનો પણ ઉલ્લેખ કર્યો છે.

ચંપક શ્રેષ્ઠીની ચોપઇ સં૦ ૧૬૯૫ માં કવિએ રચી તેમાં કથા પ્રસંગમાં દુકાલનું વર્ણન કરતાં કવિ પોતાના સમયમાં સં૦ ૧૬૮૭ માં પડેલા દુકાળનું વર્ણન ટાંકે છે:—

૩ દુકાળનું વર્ણન

તિણિ દેસઇ હિવ એકદા, પાપી પડયઉ દુકાલ, બાલ વરસ સીમ બાપડા, કીધા લોક કરાલ.
વલિ મત પડજ્યો એહવઉ, કાલ મહા વિકરાલ, જિણિ વિછોડયા માબાપ સુત, ભાગા સબલ ભૂપાલ.
ખાતાં અન્ન ખૂટી ગયા, કીજઇ કુંણ પ્રકાર, ભુખ સગી નહી કેહની, પેટ કરઇ પોકાર.
સગપણ કોઇ ગિણઇ નહી, મિત્રાઇ ગઇ ભૂલ, કો કદાવિ માંગઇ કદે, તઉ માથઇ ચઢઇ સૂલ.
ત્રાણ મૂંકિ વડ માણસે, માંગવા માંડી ભીખ, તે પણિ કો આપઇ નહી, દુખીએ લીધી દીખ.
કે બઇયર મૂંકી ગયા, કે મૂંકી ગયા બાલ, કે માબાપ મૂંકી ગયા, કુંણ પડઇ જંજાલ.
બાપે બેટા વેચીયા, માંટી વેચી બયર, બયરે માંટી મૂકીયા, અન્ન ન દ્યઇ એ બયર.
પરદેશે ગયા પાધરા, સાંભલ્યઉ જેથિ સુગાલ, માણસ સંબલ વિણુ મૂઆ, મારગમાંહિ વિચાલ.
ગઉખે બઇઠે ગોરડી, વીંઝણે ઢોલતિ વાય, પેટનઇ કાજિ પદમિની, યાચઇ પરઘરિ જાઇ.
ભોજન અમૃત જીમતા, ખાતા દ્રાખ અખોડ, કાંટી ખાયઇ કોરડી, કે ખેજડનાં છોડ.
જતીયાં દેખી જીમતા, ઉભા રહતા આડિ, તે તઉ ભાવ તિહાં રહ્યા, જિમતાં જડઇ કમાડ.
દેવ ન પૂજઇ દેહરઇ, પડિકમઇ નહી પોસાલ, સિથિલ થયા શ્રાવક સહૂ, જતી પડયા જંજાલ.
રડવડતા ગણિ એ મુઆ, મડા પડયા ઠામિ ઠામિ, ગલીમાંહિ થઇ ગંદગી, ઘઇ કુણ નાંખણુ દામ.
સંવત સોલ સત્યાસિયઇ, તે દીઠઇ એ દીઠ, હિવ પરમેસર એહનઇ, અલગઇ કરે અદીઠ.
હાહાકાર સબલઉ હૂઅઉ, દીસઇ ન કો દાતાર, તિણ વેલા ઊઠયઉ તિહાં, કરિવા વલી ઉદ્ધાર.

હવે આપણે જોશીનું વર્ણન જોઈએઃ—

ઢાલ દસમી–કપૂર હૃયઇ અતિ ઊજલું રે. એહની. રાગ કેદારો ગોડી
રૂપ કીધું બ્રાહ્મણ તણું રે, ચાલ્યઉ નગર મઝારિ
હાથે લીધું ટીપણું રે, વાંચઇ તિથિ નઇ વાર. ૧
—જોસીયડઉ જાણઇં જોતિષ સાર,
એતઉ નિમિત્ત પ્રકાશઇ અપાર—જોસિયડઉ૦
સ્નાન કરી તટની જલઇં રે, ઢલતા મુકયા કેસ,
માથઇં બાંધ્યું ફાલીયું રે. વારૂ બણાયઉ વેસ—જોસિ૦ ૨
તિલક કીધું કેસર તણું રે, વિચિમાંહિ નખસું ચીરિ,
અદભુત આડિ બિહુ ગમાં રે, સુંદર ચક્ર સરીરિ—જો૦ ૩
ધોલું ખીરોદક ધોતીયું રે, જન્નોઈ સુવિસાલ,
હરિ વિષ્ણુ હરિ વિષ્ણુ મુખિ જપઇરે, તુલસીની જપમાલ—જો૦ ૪
હેમ કમંડલુ હાથમઇ રે, નીર ભરિઉ નિત જાણિ,
વેદ ભણઇં મુખિ વેદીયઉરે, કહઇ સહુનઇં કલ્યાણ—જો૦ ૫
ભમતઉ ભામા ઘરિ ગયઉરે, દીઠઊ કુબ્જા દાસિ,
સુંદર રૂપ સરલ તનૂરે, તતખિણ કીધું તાસિ—જો૦ ૬
અચરિજ દાસી ઊપનું રે, કીધું ચરણ પ્રણામ,
પૂછ્યું કેથિ પધારસ્યઉ રે, જમસ્યું ભોજન કામ?—જો૦ ૭
સત્યભામા મુઝ સામિની રે, આવઉ તસુ આવાસિ,
મોદક મીઠા આપસ્યું રે, દેસ્યઉ મુઝ સાબાસિ—જો૦ ૮
વિપ્ર બાહિરિ મુંકિ માંહિં ગઇ રે, દાસી ભામા પાસિ,
દીવ્ય રૂપ નવિ ઉલખીરે, રહિય વિમાંસિ વિમાંસિ—જો૦ ૯
કુબ્જા દાસી હું તુમ્હ તણી રે, કહી બ્રાહ્મણની વાત,
દઉડિ તેડી આવિ તેહનઈં રે, સિદ્ધ પુરૂષ સુવિખ્યાત—જો૦ ૧૦
વેદ ભણંતઉ આવીયઉ રે, દીધઉ આસિરવાદ,
ભામા ઊઠિ ઊભી થઇ રે, પ્રણમ્યા ચરણ પ્રસાદ—જો૦ ૧૧
ભામા ભગતિં ઇમ ભણઇ રે, એક કરૂં અરદાસ,
રૂકમણિનું રૂપ રૂયડું રે, મૂઝથી અધિક પ્રસાદ—જો૦ ૧૨
તિણિ તેહનઈં માનઇ ઘણું રે, કૃષ્ણજી કંત મુરારિ,
અધિક રૂપ કરિ માહરૂં રે, મનિસું તુમ્હ ઉપગાર—જો૦ ૧૩
ચિત્ત ઉત્તરઈ કંતનુરે, રૂકમણિથી એક વાર,
તઉ હું જાણું માહરૂં રે, જીવિત સફલ સંસાર—જો૦ ૧૪
વિપ્ર કહિં વિધિ છઇ ઘણી રે, તે જઉ સર્વ કરેસિ,
તઉ રૂપ થાસ્યઈ તેહવું રે, દેખી વિસમય ધરેસિ—જો૦ ૧૫
જે કહો તે સ્વામી હું કરૂં રે, વેગિ મ લાયઉ વાર,
મસ્તક મુંડિ તું આપણું રે, આભ્રણ સવિ ઊતારિ—જો૦ ૧૬

Aho ! Shrutgyanam

ખંડિત દંડિત અતિ જર્યાં રે, પહરી પુરાંણાં ચીર,
મસ્તક મુખ આંખિ મસિ ઘસીરે, સઘલું લેપિ શરીર—જો૦ ૧૭
જિમ કહ્યું તિમ ભામા કર્યઉ રે, અરથી ન દેખઇ દોષ,
દીસઈ રૂપ બીહામણું રે, જાણુંઇ ભુત પ્રદોષ—જો૦ ૧૮
ફંડ મુંડ સ્વાહા રૂડ બુડ સ્વાહારે, અઠોતરસઉ વાર,
મંત્ર ગુણે અણબોલતી રે, હોસ્યઉ રૂપ અપાર—જો૦ ૧૯
ભામા હું ભુખ્યો થયઉરે, ભોજન દ્યઇ ભરપૂર,
બઇસાર્યઉ વિપ્ર જમાડવારે, પ્રીસ્યા બહુ ઘ્રૃત પૂરરે—જો૦ ૨૦
પ્રીસ્યા લાડૂ ખાજલારે, વીવાહના પકવાન,
નિરખંતા સવિ નીઠવ્યાંરે, અચરિજ એ અસમાન—જો૦ ૨૧
રે રે વિપ્ર તું કૂણ છઇ રે, ત્રિપતિ ન પામઇ કિમ,
ઊઠિ ઊઠિ તું ઇહાં થકીરે, પભણઇ દાસી એમ—જો૦ ૨૨

—સં૦ ૧૬૫૯ માં રચેલ સાંબપ્રદ્યુમ્ન રાસ, લખ્યા સં૦ ૧૬૫૯.

આમાં બ્રાહ્મણ જોશીનું કેવું તદ્રૂપ ચિત્ર આપ્યું છે તે હાલના જોશી સાથે સરખાવવા જેવું છે. તેવી રીતે ચીતારાનું આબેહૂબ સ્વરૂપ કવિએ પોતાના એક અન્ય રાસ -બે હજાર વર્ષ પર થયેલ મૃગાવતી પરની ચોપાઈમાં આળેખ્યું છે તે અત્ર નીચે આપવામાં આવે છે. તેમાં કવિ પોતાના સમયની સ્થિતિ ભૂલી શકતો નથી. જે ચિત્ર ચિતારાએ દોર્યાં છે તેમાં રાતાં મોં અને ચુંચી આંખવાળાને માથે મોટા પાઘડા વાળા તિરંદાજ મુગલ અને કાબલી, કાળા હબસી, પાંડુવર્ણ પઠાણ, કુરાન કિતાબ વાંચતા બુઢા કાજીનાં ચિત્રો મૂકયાં છે, એટલું જ નહિ પણ માથે મોટા ટોપા ઘાલનારા ને કોથળા જેવા ઢીલા સુંથણા (પાટલુન) પહેરનારા છેડતી કરતાં કોપાયમાન થનારા ફિરંગીઓને પણ બાકી રાખ્યા નથી. આ અકબર-જહાંગીરના સમયમાં વેપાર અર્થે જૂદે જૂદે સ્થલે કોઠીઓ નાંખનાર અંગ્રેજો-પોર્ટુગીઝો છે. આમ કરી કવિએ સમય વિરોધનો દોષ વ્હોરી લીધો છે, અને એવો કાલ વિરોધ ઘણે સ્થળે દેખા દે છે, તેનાં દૃષ્ટાંતો ત્રણેક અગાઉ અપાઈ ગયાં છે.

ચતુર ચિતારો

ખંડ ૨ જે ૫ મી ઢાળ. શતડીયાં રમીનઇં કિહાંથી આવીયારે-એ દેશી

રાગ પરજીઓ.

સકલ ચીતારામાંહિં સૂંદર રે, નિપુણ છઇ જેહનું નામ રે,
રાજમહલ દીધો તેહનઇં રે, વારૂ કરવા ચિત્રામરે

—ચતુર ચીતારો રૂપ ચીતરઇ રે.

ચતુર ચીતારો રૂપ ચીતરઇ રે, રાજમહલ તણી ભીંતિરે,
ન્યાન વિન્યાન નવાં કેલવઇ રે, રંજવા રાજાનૂં ચીતરે– ચતુર૦

ચઉદ સુપન પહિલાં ચીતર્યાં રે, ચીતર્યા આઠ મંગલીક રે,
રામ સીતા રૂપ ચીતર્યાં રે, **લષમણ રામ** નજીક રે– ચતુર૦

વળીરે વાનર હનુમંત ચીતર્યો રે, જેહનું લાંબું પુછરે,
રૂપ વિસિષ્ટ તણું ચીતર્યું રે, મોટી ડાઢી મોટી મુંછ રે– ચતુર૦

રૂપ લષ્યું રાવણ તણું રે, દસ માથાં ભુજ વીસરે,
ષડગ ચંદ્રહાસ તે હાથમઇં રે, શ્રવણ નયણ જસ વીસરે– ચતુર૦

ઇશ્વરનું રૂપ ચીતર્યું રે, અહિ આભરણ રૂંડમાલરે,
ચંદ્રકલા ગંગા સિરઇં રે, વૃષભ વાહન કંઠ કાલ રે– ચતુર૦

રૂપ બ્રહ્માતણું ચીતર્યું રે, ચતુર્મુખ બુઢો જટાલરે,
હાથ કમંડલ જલ ભર્યું રે, જનોઇ જપમાલ રે– ચતુર૦

રૂપ લિષ્યું શ્રી કૃષ્ણનું રે, મુરલી મનોહર શામ રે,
શંખ ગદા ચક્ર હાથમઈં રે, ચતુર્ભુજ અતિ અભિરામ રે– ચતુર૦

ચંદ સૂરજ નવગ્રહ ચીતર્યા રે, ચીતરિઉં ગણેસનું રૂપ રે,
પેટ મોટું સુંડિ ગજ તણી રે, ઉંદિર વાહન અનૂપ રે– ચતુર૦

ભલા નઈ ભારંડ પંષી ચીતર્યા રે, એક ઉદર ગાબડિ દોય રે,
જુગતિં ભષઇ ફલ જુજુઆં રે, જીવ જુદા બેઊ હોઇ રે– ચતુર૦

ગરૂડ મયૂર સુક સારિકા રે, પંખી રૂપ અનેક રે,
નિપુણ ચીતારઇ સઘલાં ચીતર્યા રે, વારૂ જાણે વિવેક રે– ચતુર૦

મુગલ કાબલી ચીતર્યા રે, મુખ રાતા ચુંચી આંષિરે,
માથઇ મોટા પાઘડ દૂમણા રે, તે જાંણઇ તીર નાંષિ રે– ચતુર૦

રૂપ ફુરંગી ચીતર્યા રે, માથઇ મોટા ટોપ રે,
ઢીલા પહિરઈ સૂથણ કોથલા રે, છેડયા કરઇ બહુ કોપ રે– ચતુર૦

પંચવરણ આભાં ચીતર્યા રે, ચીતર્યા પોલિ પાગાર રે,
ચતુર ચીતારો જાંણ પણઇ ઘણું રે, ચીતર્યા સકલ પ્રકાર રે– ચતુર૦

હબસી કાલા, અતિ ઘણું રે, પાંડુર વરણ પઠાણ રે,
ગરઢા બૂઢા કાજી ચીતર્યા રે, વાંચતા કતેબ કુરાણ રે– ચતુર૦

નિપુણ ચીતારઇ દીઠો એકદા રે, મૃગાવતી તણો અંગૂઠ રે,
વસ્ત્ર અંતરિ પણિ પ્રગટીઓ રે, કાંતિ કરી અતિ સુદ્ધ રે– ચતુર૦

તેહ નઇ અનુસારઈ સઘલી ચીતરી રે, મૃગાવતી રાણીનું રૂપ રે,
સકલ કલા આપણી કેલવી રે, કીધો તેહનૂં સરૂપ રે– ચતુર૦

Aho ! Shrutgyanam

રૂપ ચીતરતાં રાણી તણો રે, સાથલિ પડયો મસિ બિંદ રે,
ચતુર ચીતારો વિલષો થયો રે, એહ જણાવઇ દુષ દંદ રે- ચતુર૦
બીજી વાર બિંદુ ભૂંસીઉ રે, વલિ પડયો તેણિ જ ઠામ રે,
વલી રે ચીતારઇ દૂરઇં કીઉ રે, એહનો ઇહાં નહી કામ રે- ચતુર૦
ઇમ વાર વાર તિહાં પડઇ રે, મસિનો બિંદ તે એક રે,
ચતુર ચીતારઇ દૂરઇં કીઉ રે, મન ધરી પરમ વિવેક રે- ચતુર૦
—મૃગાવતી ચોપઇ.

વીણાધારી ગાયક.

ઢાલ પનરમી–ખંભાયતી રાગ-જેસલમેરૂ જીરાઉલઈ રે–એ દેશી

સંબ પ્રજૂન કુમર ચલ્યા રે, વિદ્યાબલિ આવાસો રે,
રૂપ કીધું ચંડાલનું રે, કાંતિ કલા સુપ્રકાશો રે-૧

તોરે કોડડે વેદરબી, પરણિ કુયરી, મોરી માતજી, મન આસા પૂરૂં તાહરી રે- તોરે૦ ૧
ભોજક કટક નગરમહિં ભમઇ રે, ગાયઇં ગીત રસાલોરે,
વિચિ વિચિ વાયઇ વાસલી રે, એક વીણા એક તાલો રે- તોરે૦ ૨
હાહા હૂહૂ અવતર્યા રે, દેવ ગાયક દિવ્ય રૂપો રે,
સંગીત ભેદ સમુચ્ચરઇ રે, સુંદર સકલ સરૂપો રે- તોરે૦ ૩
સપ્ત સ્વર ત્રિણ ગ્રામસું રે, મૂર્ચ્છના એકવીસ માનો રે,
સર મંડલ પૂરઉ જઈ રે, ચ્યાલીસ ને નવ તાંતો રે- તોરે૦ ૪
ટોલઇ ટોલઇં મિલઇં તિહાં રે, નરનારીના વૃંદ રે,
દેવ વિમાન થંભી રહઇં રે, પામઈ પરમાણુંદો રે- તોરે૦ ૫
પામઈં સુખ સંયોગિની રે, વિરહણી રાહુ આરાધઇ રે,
ચંદ્ર વાહન મૃગ નવિ ચલઈ રે, નાદિ બંધ્યો નિસિ વાધઇ રે- તોરે૦ ૬
કાચિત હાર પરોવતી રે, અધવિચ નાંખી આવઇ રે,
કાચિત પ્રીયુ અણપ્રીસતી રે, ધી અણ પ્રીસ્યાં ધાવઇ રે- તોરે૦ ૭
કાચિત ગીત વિનોદિની રે, પ્રીયુ હટકી વિલખાણી રે,
કાચિત પગને માંડણે રે, અણ સુકી ઊજાણી રે- તોરે૦ ૮
કાચિત ધરિ ધીનઉ ધડઉ રે, નીસરિ મૂકી ઢલતોરે,
કાચિત ધાન ચૂલ્હઇ ચડયઉ રે, મુગધા મૂંકઇ બલતો રે- તોરે૦ ૯
કાચિત ન ગણઈ નાહલઉ રે, ગાલિ દેતઉ ઊછલતો રે,
કાચિત છાયલ છેહડઉ રે, ઉંચઉ લ્યઇ નહી રલતઉ રે- તોરે૦ ૧૦
કાચિત વીણ ગુંથાવતી રે, નીસરી છૂટઇ કેસો રે,
કાચિત ભોલી ભામિની રે, અરધઉ પહિરઇં વેસો રે- તોરે૦ ૧૧

Aho ! Shrutgyanam

નાદઇ મોહ્યા મિરગલા રે, આપઈ આપણું સીસો રે,
નાદઇ મોહ્યા વિષધરા રે, ડોલઇ મૂકી રીસો રે- તો૨ે૦ ૧૨

નાદઇ મોહ્યા કૃષ્ણજી રે, નાદઇ ઇશ્વર નાચ્યઉ રે,
નાદઇ બ્રહ્મા વસિ કીયઉ રે, સુર રમણીસું રાચ્યઉ રે- તો૨ે૦ ૧૩

નાદઇ ચિત્ત વિનોદસું રે, દુખિયા કાલ ગમાવઇ રે,
નાદઇ સુખિયાં સુખ લહઇ રે, જોગી ચિત્ત રમાવઇ રે- તો૨ે૦ ૧૪

ચ્યાર વેદ તિમ પાંચમઉ રે, એ ઉપવેદ સવાદો રે,
વલિ વિસેષ વખાણીયઉ રે, નારીમોહન નાદો રે- તો૨ે૦ ૧૫

નાદ વિના સોભઇ નહી રે, પંડિતનઈ મુખિ વાણી રે,
માન વિના સોભઇ નહી રે, જિમ રાજા પટરાણી રે- તો૨ે૦ ૧૬

લવણ વિહુલી રસવતી રે, જિમતા સ્વાદ ન આપઈ રે,
લોક માહિં હાંસી લહઈ રે, કંઠ વિના આલાપઈ રે- તો૨ે૦ ૧૭

દીપક રાગ દીવા બલઇ રે, અગનિ વિના તતકાલો રે,
પંચમ નવપલ્લવ તરૂ રે, ઇમ સગલી રાગ માલો રે- તો૨ે૦ ૧૮

ગમતું ગાયઈ ડુંબડા રે, હીયડઇ હરષિત હોઇ રે,
નરનારી મોહી રહ્યા રે, સાંભલતાં સહુ કોઇ રે- તો૨ે૦ ૧૯

વૈદરભી વાત સાંભલી રે, તેડયા ડુંબ તુરંતો રે,
બાપ પુછઇ બઇસી કરી રે, ગવરાવ્ય ઓ ગુણવંતા રે- તો૨ે૦ ૨૦

પૂછ્યા કિહાંથી આવીઆ રે, સ્વર્ગ થકી સુખવાસો રે,
દ્વારિકા નગરી માંહિ થઇ રે, અમ્હે આવ્યા તુમ્હ પાસો રે- તો૨ે૦ ૨૧

કુમરી કહઇ સુત કૃષ્ણનઉ રે, જાણઉ કુમર પ્રજુન્નો રે,
સંબ કહઇ કુણ તોલખઇ રે, એહવા પુરૂષ રતન્ન રે- તો૨ે૦ ૨૨

કુમરી મન મોહઉ ગુણે રે, રાગ ધર્યો પરછન્નો રે,
જઈ પરણું તઉ તેહનઈ રે, નહિ તરિ અગનિ સરન્ન રે- તો૨ે૦ ૨૩

એહવે ગજ આલાનથી રે, છૂટઉ કરઇ વિનાસો રે,
કુણ નર ઝાલઈ તેહનઇ રે, જઇ ન સકઈ કો પાસે રે- તો૨ે૦ ૨૪

રાજા પડઉ વગાડીયઉ રે, જે હાથીનઇ ઝાલઈ રે,
રાજા રંજયઉ તેહનઇ રે, જે માગઇ તે આલઇ રે- તો૨ે૦ ૨૫

ઢાઢી ઢંઢેરો છબ્યઉ રે, લોક અચંબઉ આણઇ રે,
ગાનઇ ગજ વસિ આણીયઉ રે, સહુ સાબાસી વખાણઈ રે- તો૨ે૦ ૨૬

માગઉ માગઉ માંગણઉ રે, પૂરૂં મુઝ પ્રતિન્યા રે,
રાંધણહારી કોઇ નહીં રે, દ્યઉ વૈદરભિ કન્યા રે- તો૨ે૦ ૨૭

Aho ! Shrutgyanam

રૂઠઇ રાજા ઇમ ભણુઈ રે, ગામ સીમથી કાઢઉ રે,
નગર વિટાલ્યુ ડુંબડિરે, એ ભાંજો આષાઢઉ રે- તોરે૦ ૨૮
ગાયણુ ગામ બાહિર ગયા રે, રાજાસુ નહિ જોર રે,
સંબ કહઇ પ્રજ્યૂનનઇ રે, વિદ્યાબલ કાંઇ ફેરઉ રે- તોરે૦ ૨૯

—સાંબ પ્રદ્યુમ્નરાસ, રચ્યા સં૦ ૧૬૫૯; લખ્યા સં૦ ૧૬૫૯.

મૃગાવતીનું રૂપવર્ણન.

બીજી હાળ નાયકાની, રાગ કેદારો.

તસ ધરણી મૃગાવતી રે સુંદર રૂપ નિધાન રે, મૃગાવતી
ચેડાની સાતે સતી રે, એક એકથી પરધાન રે, મૃગાવતી
રૂપકલા ગુણ રૂયડી રે લાલ, રૂયડું સીલ આચાર રે, મૃગાવતી ૧
સ્યામ વેણી દંડ સોભતાં રે લાલ, ઉપરિ રાષડી ઊપરે, મૃ૦
અહિરૂપ દેષણ આવીઊ રે લાલ, મસ્તકિ મણિ આટોપરે, મૃ૦ રૂપ૦
બહુ ગમા ગૂંથી મીંઢલી રે લાલ, બાંધ્યો તિમિર મિથ્યાત રે, મૃ૦
વિચિ સઈથો સીંદૂરીઊ રે લાલ, પ્રગટયો ધરમ પ્રભાતરે, મૃ૦ રૂપ૦
શશિ દલ ભાલ જીત્યો થકો રે લાલ, સેવઇ ઇસિર દેવ રે, મૃ૦
ગંગાતટિ તપસ્યા કરઇ રે લાલ, ચિંતાતુર નિતમેવ રે, મૃ૦ રૂપ૦
નયન કમલ દલ પાંખડી રે લાલ, અણીઆલી અનૂપરે, મૃ૦
હવિ વધતી હટકી રહી રે લાલ, દેષિ શ્રવણુ દોઇ કૂપ રે, મૃ૦ રૂપ૦
નિરમલ તીષી નાશિકા રે લાલ, જાંણે દીવાની ધાર રે, મૃ૦
કાલિમા કા દીસઇ નહીં રે લાલ, ન બલઇ સ્નેહ લગાર રે, મૃ૦ રૂપ૦
અતિ રૂડી રદનાવલી રે લાલ, અધર પ્રવાલી વિચાર રે, મૃ૦
સરસતિ વદન કમલઈ વસઇ રે લાલ, તસુ મોતિણકી માલ રે, મૃ૦ રૂપ૦
મુખ પુનિમનો ચંદલો રે લાલ, વાણિ અમૃતરસ ભાવ રે, મૃ૦
કલંક દોષ દૂરઇં કીઉ રે લાલ, સીલ તણઇ પરભાવ રે, મૃ૦ રૂપ૦
કંઠ કોકિલથી રૂયડો રે લાલ, તે તો એક વસંત રે, મૃ૦
એ બારે માસ સારિષો રે લાલ, રૂપઇ ફેર અનંત રે, મૃ૦ રૂપ૦
કુંઅલી (કુમળી) બાંહ કલાચિકા રે લાલ, કમલ સુકોમલ હાથ રે, મૃ૦
રિદ્ધિ અનઈ સિદ્ધ દેવતારે લાલ, નિત્ય વસઇ બઇ સાથિ રે, મૃ૦ રૂપ૦
રિદય કમલ અતિ રૂયડો રે લાલ, ધરમ બુદ્ધિ આવાસ રે, મૃ૦
કટિ લંકિં જીત્યો કેસરી રે લાલ, સેવઇ નિત્ય વનવાસ રે, મૃ૦ રૂપ૦
ચરણુ કનકના કાછિબા રે લાલ, ઉન્નત અતિ સુકુમાલ રે, મૃ૦
નખ રાતા અતિ દીપતા રે લાલ, દરપણુ જિમ સુવિસાલ રે, મૃ૦ રૂપ૦

Aho ! Shrutgyanam

દેવ ગુરૂ ધર્મ રાગિણી રે લાલ, અતિ દાતાર ઉદાર રે, મૃ૦
ભગતિ ઘણી ભરતારની રે લાલ, સ્ત્રીનો એ આચાર રે, મૃ૦ ૩૫૦
એ બીજી ઢાલ જાણયો રે લાલ, નાયકા કેરી એહ રે, મૃ૦
સમય સુંદર કહઈ સાંભલો રે લાલ, રાગ કેદારઇ તેહ રે, મૃ૦ ૩૫૦

—સં૦ ૧૬૬૮ માં રચિત મૃગાવતી ચોપઇ, લખ્યા સં૦ ૧૭૧૫.

દમયંતીનો ચંદ્રદ્વારા નલને સંદેશ.

ઢાલ ૫ મી ભાવનરી.

હો સાયરસુત સોહામણો, સોહામણો રે, હો સાંભલિ સુગુણ સંદેસ
હો ગગનમંડલ ગતિ તાહરી, તાહરી રે, હો દેષઇ તું સગલા દેસ,
—દેષઇ સગલા દેસ.

ચંદલિયા સંદેશો રે કહે માહરા કંતનઇ રે–
થાહરી અબલા કરઇ રે અંદેસ, અબલા કરઇ રે અંદેસ,
નાહલીઇ વિહુણી રે નારી હું કયું રહું રે–

હો વાલમ મઇ તોનઇ વારીઉ, વારીઉ રે, હો જૂવટઇ રમવા તું મ જાય,
હો રાજ હારી નલ નીસર્યો, નલ નીસર્યો રે, હો વનમાંહિ ગયો વિલષાય
વારીયો રહો વનમાંહિ–

ચંદલિયા સંદેસો હો કહે માહરા કંતનઇ રે–
હો નલ તુઝસું હું નીસરી, નીસરી રે હો આગમ લીધો દુષ આધ
હો મુઝનઇ તું છોડી ગયો, એવડો કિસ્યો અપરાધ,
ચંદલિયા સંદેસો હો કહે માહરા કંતનઇ રે–

હો સૂતી મૂકી તઈ કાં સતી, કાં સતી રે, હો પ્રમદા ન જાણી તઇ પીડ,
હો હાથિ જિને પરણી હુતી, પરણી હુતી રે, હો ચતુર કર્યણો કિમ ચીર– ચંદલિયા૦
હો ઝબકિ જાગી ઝૂરવા, ઝૂરવા રે, હો પ્રિય તું ન દીઠો પાસ,
હો વનિ વનિ જોઉં તુનઇ વાલહા, હો વાલહા, હો સાદ પણિ કીધા સો પચાસ– ચંદલિયા૦
હો નિરતિ ન પામી થાહરી નાહલા, નાહલા રે, હો પગિ પગિ મૃગલી પણિ પૂછી,
હો રોઇ રોઇ મુઇ રાંનમાં, રાનમાં રે, હો મહીઅલ પડી હું મુચ્છિ– ચંદલિયા૦
હો કીધું તઈ ન તે કો કરઇ, કો કરઇ રે, કો પુરૂષાં ગમાડી પરતીતિ,
હો વિસ્વાસ ભાગો હવિ વાલહા, હો વાલહા રે, હો પુરૂષાં કેઇ પ્રીતિ– ચંદલિયા૦
હો દૃષ્ટાંત થાહરો નલ ! દાષસ્યઇ, દાષસ્યઇ રે, હો કવિયણ કેરી રે કોડિ,
હો પુરૂષ કુડા મહા કપટીયા, કપટીયા રે, હો ષરી લગાડી ષોડિ– ચંદલિયા૦

Aho ! Shrutgyanam

હો એહવા ચંદસું ઉલંભડા, ઉલંભડા રે, હો દીધાં દવદંતી નારી,
હો ચઉથી ઢાલ પુરી કરી, પુરી કરી રે, હો સમયસુંદર સુ વિચાર–
હો સમયસુંદર સુ વિચાર

—ચંદલીયા સંદેશો રે હો કહે માહગ કંતનઇ રે,

—સં૦ ૧૬૭૩ માં રચિત નલ દવદંતી રાસ, લખ્યા પ્રત. સં૦ ૧૭૬૬

કવિએ પોતાના સં૦ ૧૬૭૨ માં રચેલા પ્રિયમેલક રાસમાં રાજકુમારને સાહસિક બનાવી સમુદ્ર યાત્રા કરાવી તેનાં સાહસો વર્ણવ્યાં છે તેની વાનગી રૂપે એક કાવ્ય લઇશું. જે પ્રતમાંથી આ ઉતારવામાં આવ્યું છે તે સં૦ ૧૬૮૦ માં લખાયેલી પ્રત છે એટલે કે રચ્યા સાલ પછી આઠ વર્ષે જ અને તે વળી કવિના જીવનમાં જ લખાયેલી પ્રત છે, તેથી તે વખતની ભાષાનો નમુનો પણ આ કાવ્ય પૂરો પાડશે.

ભાગ્ય પરીક્ષા

(ઢાલ ત્રીજી, વાલુંરે સવાયો વયર હું માહરૂંજી–મૃગાવતી ચઉપઇની એ ઢાલ)

અમર્ષ કુમરનઇ આવીયોજી, કીયો મુઝશું પિતા કૂડી,
અવહીલ્યા જે આલા પડઇજી, ધિગ તે જનમનઈ ધૂલિ. ૧
કરમ પરીક્ષા કરણ કુમર ચલ્યોજી, ધનવતી ચલી ધણી સાથિ,
કંત વિહુણી કિસિ કામિનીજી, અસ્ત્રી નઈ પ્રીયુ આથ. ૨

—*કર્મ પરીક્ષા કરણ કુમર ચલ્યોજી.

દેસ પ્રદેસે અચરિજ દેખસ્યુંજી, ભાગ્યનઉં લહસ્યું ભેદ,
સાજણ દૂજણ સમજીસ્યુંજી, ઇમ મનિ ધરીરે ઉમેદ. ૩ કરમ૦

યતઃ "દીસઇ વિવિહચ્ચરિયં જાણિજ્જઇ સજ્જણ દુજ્જણ વિસેસો,
અપ્પાણં ચ કલિજ્જઈ હિંડિજ્જઇ તેણ પુહવીએ."
આધિ રાતિ ઉઠિઊજી, સુંદરિ લીધી સાથિ,
સિંહલ સુત મહા સાહસીજી, હથિયાર તરવારિ હાથિ. ૪ કરમ૦
તુરત ગયો દરિયાનઈ તટઇજી, સમુદ્ર ચડયો સાહસીક,
પ્રવહણ બઇઠિઇ પરદ્વીપ ભણીજી, નારિનઇ લેઇરે નજીક. ૫ કરમ૦
આગલિ જાતાં દરિયઉ ઊછલ્યોજી, તિમ વલી લાગઉ તોફાન,
પ્રવહણ ભાગો કોલાહલ પડયઉજી, અતિ દુખ પડયઉ અસમાન. ૬ કરમ૦
પુન્ય સંયોગ્યઈ પામ્યઉં પાટીયોજી, ધનવતી લીધઉં આધાર,

* આ 'કર્મ પરીક્ષા કરણ કુમર ચલ્યોજી,' એ દેશી કવિના પછીના અનેક કવિઓએ પોતાની કૃતિઓ માટે લીધી છે. સમયસુંદરની કૃતિની દેશીઓ ઘણી પ્રસિદ્ધ થયેલી દેખાય છે.

Aho ! Shrutgyanam

નારિ સેંતી દુખ નીસરીજી, પામ્યઇ સમુદ્રનઉ પાર. ૭ કરમ૦
અબલા ચાલી તિહાંથી એકલીજી, વસતી જાઉં કિણુ વેગિ,
કેત વિહુંણી રૂપવંત કામિનીજી, ઉપજઇ કોડિ ઉદ્વેગ. ૮ કરમ૦
નગરિ નજીકિ નારી ગઇજી, પેખ્યો એક પ્રસાદ,
દંડ કલસ ધ્વજ દીપતાજી, નવલા સંખનઇ નાદ. ૯ કરમ૦
ધનવતી પુછે કાંઇ ધરમિણીજી, કહિ બાઇ કુણુ ઇ ગામ,
કુણુ તીરથ એહ કેહનઉજી, એ મહિમા અભિરામ. ૧૦ કરમ૦
ગામ કુસુમપુર ગુણતિલઉજી, ઇંદ્રિપુરી અવતાર,
પ્રિયમેલક તીરથ પરગડઉજી, સહુ જાણઇ સંસાર. ૧૧ કરમ૦
વેગા મિલઇ પ્રિય વિછડયકુજી, નિત તપ કરઇ જે નારિ,
ઇહાં બઇઠી અણબોલતીજી, પરતા પૂરઇ અપાર. ૧૨ કરમ૦
ધનવતી મૌન વરત ધરીજી, જાઇ બઇઠી જોગ ધ્યાન,
નાહ મિલ્યા વિણુ બોલું નહીજી, એહ બલીયો અસમાંન. ૧૩ કરમ૦
મન ગમતી ઢાલ મારૂણીજી, દુખિયાં જગાવઇ દુખ,
સમયસુંદર કહઇ સુણતાં થકાંજી, સુખિયાં સંપજઇ સુખ. ૧૪ કરમ૦

દૂહા સોરઠી

કુમરઇ પણુ એક કોય, લાધઉં લાંબઉં લાકડઉં, તરતઉ તરતઉ તોય, પારિઇ પહુંતઉ પાધરઉ. ૧
જેહવઇ આગઇ જાય, નગર રત્નપુર નિરખીયો, રત્નપ્રભ તિહાં રાય, રાણી રતનાસુંદરી. ૨
રતનવતી બહુરૂપ, રાજા નઇ બેટી રતન, સુંદર સકલ સરૂપ, ભરજોવન આવી ભલી. ૩

રાગ આસાઉરી–ઢાલ ચઉથી

(સહજિઇ છેહડઉં દરજણિ, સહજિઇ તેહડો વાલી રે, જારજોબન માતી. એહની ઢાલ ૪)

તિણ અવસર વાજઇ તિહાંરે, ઢંઢેરાનો ઢોલ,
ચઉરાસી ચઉહુટે ભમઇ, બોલઇ વલિ એહવા બોલ રે,
રાજાની કુમરી મરિ રે, સાપ ખાધી કુમરી કો જીવાડઇ રે,

કુમરી કો જીવાડઇ રે—૨ આંકણી.

ગારૂડી નાગ મંતા ગુણ્યા રે, મરઘા મોરી ગઇ,
મણિ પણિ ડંક ઉપરિ મુકી હો, ગુણ ન થયઉ ગયા તે રદ્દરે. ૩ રાજા૦
હિવ વૈદ્ય હાથ ઝાટકયારે, ઉપજે નહિ કોય ઉપાય,
મુરછાંગતા કુમરી મરઇ, જીવિત હાથમાંહિ જાઇ. ૪ રાજા૦
કુમર મહા અતિ કૌતગી રે, આણી ઉપગાર બુદ્ધિ,
પડહ છબ્યઉ નિજ પાંણિસુ, સા પુરૂસા સાચી સિદ્ધિ. ૫ રાજા૦

Aho ! Shrutgyanam

કુમર આંણ્યઉ કુમરી કન્હઇ રે, નિરમલ આણ્યઉ નીર,
ઉહલી મુંદડી આપણી રે, સહૂં છાંટયો કુમરી શરીર- ૬ રાજા૦
પાણી પાયઉં પ્રેમસું રે, ઉઠિ બયઠી થઇ આપ,
કુમર ઉપગાર એ કીયઉ, બહુ હરખ્યા માઇ નઇ બાપ રે- ૭ રાજા૦
રૂપિઈં દીઠઉ રૂયડઉ રે, ગુણ દીઠઉ ઉપગાર,
ઉત્તમ કુલ તિણિ અટકલ્યઉ રે, પ્રગટિઉ પુણ્ય પ્રકાર- ૮ રાજા૦
રતનપ્રભ ગુણ રંજીયઉ રે, કીધઉં કુમરી વીવાહ,
દીધઉં કુમરનઇ દાયજઉ, અધિકઉ કુમરી ઉચ્છાહ રે- ૯ રાજા૦
રાતિ પડી રવિ આથમ્યઉ રે, જાગ્યઉ મદન જુવાંન,
રંગમહલ પહુંતા રલી વારૂ જાંણે ઇંદ્ર વિમાન રે- ૧૦ રાજા૦
વર પલ્લંક બિછાઇયઉ રે, પાથર્યા બહુ પટકૂલ,
અગર ઉખેવ્યા અતિ ઘણા રે, મહકઇ પરિમલ અનુકૂલ રે- ૧૧ રાજા૦
દીવા કીધા ચિહું દિસેઇ રે, રત્નવતી બહુ રંગ,
કુમર પલિંગ છોડી ધરતી સુયઇ, સુતઉ ધરતી તજિ સંગ રે- ૧૨ રાજા૦
ચતુર નારી મનિ ચિંતવઇ રે, કરમ કુટઉં મુઝ કોય,
સેજ છોડી ધરતી સુયેઇ, રમણી જીવતઇ નઇં રોય રે- ૧૩ રાજા૦

યતઃ " ઘરિ ઘોડઉ નઇ પાલો જાઇ, ઘરિ ધેણુઉં નઇ લૂખઉં ખાઇ,
ઘરિ પલંગ નઇ ધરતી સોયેઇ, તિણુરી બઇરિ જીવતા નઇ રોયઇ "
પૂછ્યો કુમરી પ્રેમસુ રે, ભેદ કહિઉં ભરતાર,
એવઇં રાગ તુમ્હે આદરિઉં, કિમ રાગ તણઇ અધિકાર રે- ૧૪ રાજા૦
કુમરૂઇ મનમાંહિ અટકલઉં રે, સ્ત્રી નઇ ન કહિયઇ સાચ,
વલી વિસેષ વાત સઉકિની, વદઇ પંડિત એહવી વાચા રે- ૧૫ રાજા૦
કુમરે કહિઈં વાત કેલવી રે, સુણિ સુંદરી મુઝ સંચ,
માબાપથી મઇં વીછડેઇ, રાખ્યઉ અભિગ્રહ રંચ રે- ૧૬ રાજા૦
સોરસું ધરતી સર્વદા રે, પાલિસિ સીલ પ્રતાપ,
સુંસ લીયઉં મઇં સુંદરી, મિલસેઇં નહિ જાં માઇ બાપ રે- ૧૭ રાજા૦
કહઇ કુમરી સુણ કંતજી રે, ધન્ય તુમ્હે ધર્યો નેહ,
ભગતિ માબાપ તણી ભલી, ઉત્તમ પુત્ર લક્ષણ એહ રે- ૧૮ રાજા૦
ભેદ જાણ્યઉ સહુ ભૂપતી રે, ચિંતાતુર થયઉ ચિત્ત,
કુમરનઇ પૂછ્યું કિહાં વસઉ, કુલવંસ કહઉ સવિત્ત રે- ૧૯ રાજા૦
કુમર કહે કુલ આપણઉ રે, વંસ અનઇ વલી વાસ,
સમયસુંદર સહુ સુખી રે, રહી રત્નવતી નિરાસ- ૨૦ રાજા૦

—પ્રિય મેલક તીર્થ રાસ રચ્યા સં૦ ૧૬૭૨-લખ્યા સં૦ ૧૬૮૦.

Aho ! Shrutgyanam

ઉપદેશમય રાસ કવિએ રચ્યા છે. વ્યવહાર શુદ્ધિ રાખવા માટે કવિએ ધનદત્તનો રાસ રચી તે ધનદત્ત વાણિયો સાધુ પાસે વ્યવહાર શુદ્ધિ પાળવાનો નિયમ લઈ વેપાર કરતાં નુકશાન સહી આખર સ્વદેશ તજી પરદેશ જાય છે અને જીવન પર્યંત વ્યવહાર શુદ્ધિ રાખે છે તે તેના ચરિત્રથી બતાવી-પાત્રદ્વારા લોકને ઉપદેશ કવિએ આપ્યો છે. તે કાવ્યમાંથી નીચેનો એક ખંડ લઇ મૂકવામાં આવે છેઃ—

તું ધન તું કૃતપુણ્ય તું સાધ કહે ધનદત્ત,
પણિ રૂડી પરિ પાલજે, નિશ્ચલ કરિ નિજ ચિત્ત— ૧
વ્યવહાર શુદ્ધપણું ગ્રહી, આયો આપણ ગેહ,
ભલો કિયો કહઇ ભારિજા, પણ દુકર છઇ એહ— ૨
વ્યાપાર માંડિઉ વાંણિઇં, સગલો બોલે સાચ,
પાડ કહઇ તંત પાહિનઇં, ન વદઇં બીજી વાચ— ૩
સાચાં તોલાં તાકડી, સાચા ગજ શ્રીકાર,
ઉછો ઘઇં નહીં આપણો, અધિકો ન લિઇં લિગાર— ૪
સાચ ઉપરિ રાચઇં નહી, લોક હઠી કહે એહ,
વિણજ વ્યાપાર મા(ઠો) પડયો, દ્રવ્ય સો આવ્યો છેહ— ૫
મુહલતિ પૂગી વાણિયા, આવી માગઇં દામ,
ઘરમાહિં દેવા નહીં, ચિંતાતુર થયો જામ— ૬
તેહવઇ બોલી ભારજા, સાંભલી સામી! વાત,
ધન તૂટાં લાગઇ ખરચ, કિમ ગમસ્યાં દિનરાતિ— ૭
ઘર ધંધા દુખ પાલણા, સાયર કૂખ સમાન,
એકાણિ રાતિં વીસર્યાં, ગાહા પંચ સયાણ— ૮
રૂડું કરતાં પાહુઉં, આઇં કલિજુગ તેહ,
પણિ ધરમિં જય નેહિ છઇં, હિયૈ રખઇ નર જેહ— ૯
સાચ કહ્યો તઇં સુંદરી, પણિ હિવ કરસ્યાં કેમ,
સોંસજ ભાજું સર્વથા, માંગણુરો મુઝ નેમ— ૧૦
પરદેસ ચલિ સહું પાધરો, દરિયાં ચલિ સહું દેખિ,
લખમી તિહાં લહિઇં ઘણી, વારૂ ભાગ્ય વિશેષ— ૧૧
બધ્યર બોલી ચાલતાં, સાંભલયો ભરતાર,
હું બઇઠી વ્રત પાલેસ્યું, તું પાલે વ્યવહાર— ૧૨

આમાં વાણિયાણી કેવી બહાદુર રહી પોતાના પતિને શિખામણ આપે છે તે જોઇ શકાશે. 'ગમસ્યાં' 'કરસ્યાં' 'માંગણુરો' એ મારવાડી રૂપો આમાં જણાય છે. કવિ મેવાડ મારવાડમાં જ બહુ ફર્યા છે-રહ્યા છે.

હવે કવિના સર્વ કાવ્યના કલશ રૂપ મહાકાવ્ય નામે સીતારામ પ્રબંધમાંથી પોતાની હસ્ત લિખિત પ્રતમાંથી કાવ્યનો એક નમુનો લઇએ તે પરથી કવિના સમયની તેમ જ પોતે વાપરેલી ભાષાનું સ્વરૂપ સમજાશે.

Aho ! Shrutgyanam

સીતાપર લોકાપવાદ.

આઠમો ખંડ. ઢાલ ૧ લી. રાગ મારૂણી.

[અમાં મ્હાંકી ચિલા લિંગી જોઇ, અમાં અમામ્હાંકી, મારૂડે મેવાસી કો સાદ સોહામણો રે લો

એ ગીતની ઢાલ]

સહિયાં મોરી સુણિ સીતાની વાત, સહિયાં, સહિયાં મોરી આપણે ધરિ રાખી, રાવણ રાજ્યે રે લો૦સહિયાં૦
તે કામી કહિવાઈ સહિયાં, સહિયાં મોરી, તે પાસે એહાં પણિ લોકમેં લાજ્યે રે લો૦ સહિયાં૦ ૧
સીતા સતીય કહાઇ, સ૦ સ૦ પણિ રાવણ ભોગવ્યાં પિણ સહી મુંકે નહી રે લો૦ સહિયાં૦
[1]ભૂખ્યો ભોજન ખીર સ૦ સ૦ વિણ જીમ્યાં છોડે નહી, ઇમ જાણો સહી રે લો૦ સહિયાં૦ ૨
[2]તરસ્યો ન છોડે નીર, સ૦ સ૦ પંડિત તો સુભાષિત તરસિયો કિમ તજે રે લો૦ સહિયાં૦
[3]દલિદ્રી લાધું નિધાન, સ૦ સ૦ કિમ છોડે જાણે ઇમિ, વલિ નહિ સંપજે રે લો૦ સહિયાં૦ ૩
તિણ તું નિશ્ચય જાણિ, સ૦ સ૦ ભોગવિને મુકી પરી, સીતા રાવણે રે લો૦ સહિયાં૦
રામે કીધો અન્યાય સ૦ સ૦ સીતાને અપણે ઘરમાંહે આણણે રે લો૦ સહિયાં૦ ૪
લોકો મેં અપવાદ સ૦ સ૦ સગલે હી સીતા શ્રી રામનો વિસ્તર્યો રે લો૦ સહિયાં૦
અંતેઉર પરિવાર સ૦ સ૦ ભીરતલે લોકે કહ્યો તે મનમે ધર્યો રે લો૦ સહિયાં૦ ૫
એક દિવસ એક ઠામિ સ૦ સ૦ નગરીમેં મહિલાના ટોલ મિલ્યા ઘણા રે લો૦ સહિયાં૦
તિહાં એક બોલી નારિ સ૦ સ૦ અસ્ત્રીમે સબલા પુણ્ય આજ સીતા તણા રે લો૦ સહિયાં૦ ૬
દેવીને દુરલંભ સ૦ સ૦ તે રાવણ રાજાસું સીતા સુખ લહ્યો રે લો૦ સહિયાં૦
સીતા સતીય કહાઇ સ૦ સ૦ એ ન ઘટે એવડી વાત ઇમ બીજી કહ્યો રે લો૦ સહિયાં૦ ૭
એક કહે ચાલીએ સ૦ સ૦ અસ્ત્રીનું સીલ તાં લગિ કહિયે સાબતો રે લો૦ સહિયાં૦
જાં લગિ કામી કોઇ સ૦ સ૦ પ્રારથના.ન કરે બહુ પરિ સમઝાવતો રે લો૦ સહિયાં૦ ૮
એહને રાવણરાય સ૦ સ૦ વીનતિને વચને કરિ વશિ લીધી ઘણું રે લો૦ સહિયાં૦
રાચી અસ્ત્રી રંગે સ૦ સ૦ તન મન ધન સગલું હી આપે આપણું રે લો૦ સહિયાં૦ ૯
એક કહે વલિ એમ સ૦ સ૦ સીતાને જાણે તુમ્હે જગિ સોભાગિણી રે લો૦ સહિયાં૦
નારી સહસ અઢાર સ૦ સ૦ મંદોદરિ સારિખી સહુને અવગણી રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૦

× સરખાવો આ કવિના સમય પછી થયેલા શામભટ્ટની નંદબત્રીશીમાં

૧ અમૃત પીરસ્યું થાળમાં, આપે કરવા આહાર,
દીઠું પણ ચાખ્યું નહીં, પડ પાસા પોબાર.

૨ હંસ ગયો સરોવર વિષે, દીઠું અમૃતવાર,
પિધા વિના પાછો વળ્યો, પડ પાસા પોબાર.

૩ રત્ન અમૂલ્ય સુહામણું, લોભે ગયો તે દ્વાર,
દીઠું પણ લીધું નહીં, પડ પાસા પોબાર.

Aho ! Shrutgyanam

લંકા ગઢનો રાય સ૦ સ૦ સીતાસું લપટાણો રાતિ દિવસ રહ્યો રે લો૦ સહિયાં૦
મન વંછિત સુખ માણિ સ૦ સ૦ સીતા પણિ કીધો સહુ જિમ રાવણ કહ્યો રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૧
સાચો તે સોભાગ સ૦ સ૦ સીલ રતન સાચે મનિ પૂરો પાલીયે રે લો૦ સહિયાં૦
કરે એક વચન વિલાસ સ૦ સ૦ પર પુરૂષાં સંઘાતિં પરિચો ટાલિયે રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૨
જુગતિ કહે વલિ એક સ૦ સ૦ કુસતિ જો સીતા તો કિમ આણી ધણી રે લો૦ સહિયાં૦
કહે અપરા વલિ એમ સ૦ સ૦ અભિમાને આંણીએ રમણી આપણી રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૩
કહે કામિણિ વલિ કોઇ સ૦ સ૦ તે આણી તો માની કાં ? રામ સીતા ભણી રે લો૦ સહિયાં૦
કહે વલિ બીજી કોઇ સ૦ સ૦ સીતાસું પૂરવે પ્રીતિ હુંતી ઘણી રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૪
જો હુયે જીવન પ્રાણ સ૦ સ૦ તે માણસ મુંકે તો જીવ વહે નહી રે લો૦ સહિયાં૦
અપજસ સહે અનેક સ૦ સ૦ પ્રેમ તણી જાયે કિમ વાત કિણે કહી રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૫
એક કહે હિત વાત સ૦ સ૦ લોકાં મે ન્યાઇ નૃપ રામ કહીજીયે રે લો૦ સહિયાં૦
કુલને હોઇ કલંક સ૦ સ૦ તે રમણી રૂડી પણિ કિમ રાખીયે રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૬
ઊખાણો કહે લોક સ૦ સ૦ 'પેટ કો ઘાલે નહિ અતિ વાલ્હી છુરી'રે લો૦ સહિયાં૦
રામને જુગતો એમ સ૦ સ૦ ઘરમેંથી સીતાને કાઢે બાહિરી રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૭
સેવકે એહવી વાત સ૦ સ૦ નગરીમે સાંભલિને રામ આગે કહી રે લો૦ સહિયાં૦
રામ થયા દિલગીર સ૦ સ૦ એહવી કિમ અપજસ વાત જાયે ગહી રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૮
અન્ય દિવસ શ્રીરામ સ૦ સ૦ નષ્ટ ચરિત નગરીમેં રાતિં નીસર્યા રે લો૦ સહિયાં૦
કિણહી કારૂબારિ સ૦ સ૦ છાના સા ઊભા રહિ કાંન ઉંચા ધર્યા રે લો૦ સહિયાં૦ ૧૯
તેહવે તેહની નારિ સ૦ સ૦ બાહિરથી અસૂરી આવી તે ઘરે રે લો૦ સહિયાં૦
રીસ કરી ભરતાર સ૦ સ૦ અસ્ત્રીને ગાલી દેઇ દ્યો બહુ પરે રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૦
રે રે નિરલજ નારિ સ૦ સ૦ તું ઇતરી વેલા લગિ બાહિર કિમ રહી રે લો૦ સહિયાં૦
પેસિવા નહિ ઘું માહિ સ૦ સ૦ હું નહિ છું સરિખો રામ તું જાણે સહી રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૧
સુણિ કુવચન શ્રી રામ સ૦ સ૦ ચિંતવિવા લાગા મુઝ દેખો મેહણો રે લો૦ સહિયાં૦
ક્ષત ઉપરિ જિમ ખાર સ૦ સ૦ દુખ માહે દુખ લાગો રામને અતિ ઘણો રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૨
રામ વિચાર્યો એમ સ૦ સ૦ અપજસ કિમ લોકાંમાંહિ એહવો ઊછલ્યો રે લો૦ સહિયાં૦
સીતા એહવી હોઇ સ૦ સ૦ સહુ કોઇ બોલે લોક કુજસ ટોલે મિલ્યો રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૩
પરઘરભંજા લોક સ૦ સ૦ ગુણ છોડી અવગુણ એક બોલેં પારકારે લો૦ સહિયાં૦
ચાલણિ મેંદો મુંકિ સ૦ સ૦ છીતીને થૂલા દેખાડે અસારકા રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૪
તે કો નહિય ઉપાય સ૦ સ૦ દુરજણનો કિણહિ પરિ ચિત્ત રંજીયે રે લો૦ સહિયાં૦
સૂરિજ પણિ ન સુહાઇ સ૦ સ૦ ઘૂયડને રાતિ કેહી પરિ કીજીએ રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૫
શીતનો પાલણ આગ સ૦ સ૦ તાવડનો પણિ પાલણ ટાઢી છાંહડી રે લો૦ સહિયાં૦
તરસનો પાલણ નીર સ૦ સ૦ માણસના અબેસાસ પાલણ બાંહડી રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૬
સહુના પાલણ એમ સ૦ સ૦ પણિ દુરજણના મુખનો પાલણ કો નહી રે લો૦ સહિયાં૦
સાચો ભાવે જૂઠ સ૦ સ૦ મેં મેલો માહરો કુલવંશ કીયો સહી રે લો૦ સહિયાં૦ ૨૭
કુજસ કલંકયો આપ સ૦ સ૦ અજી તાંઇ સીતાને છોડું તો ભલી રે લો૦ સહિયાં૦
ઇમ ચિંતવતા ચિત્ત સ૦ સ૦ ઇણ અવસરિ આવ્યા તિહાં લખમણ મન રમીરે. સહિયાં૦ ૨૮

Aho ! Shrutgyanam

રામલક્ષ્મણ સંવાદ

ચિંતાતુર શ્રી રામ, દેખીને દુખ કારણ લખમણ પૂછીયે રે લો૦
તુમ્હ સરિખે પણિ સૂર, સોચ ને ચિંતા કરિ મુખ વિલખો કીયો રે લો૦ ૨૯
કહિવા સરિખો હોઇ, તો મુઝનેં પરમારથ બાંધવ દાખીયે રે લો૦
રામ કહે સુણ વીર, તે સ્યું છે જે તુમ્હથી છાનું રાખીયે રે લો૦ ૩૦
લોક તણો અપવાદ, સીતાની સગલી વાત તે રામે કહી રે લો૦
રાવણ લંપટ રાય, સીતા તિહાં સીલવંતી કહે તે કિમ રહી રે લો૦ ૩૧
એહવી સાંભલી વાત, કોપાતુર લખમણ કહે લોકો સાંભલો રે લો૦
સીતાનો અપવાદ, જે કહિસ્યે તેહનો હું મારિ ત્રોડી સિતલો રે લો૦ ૩૨
રામ કહે સુણ વછ, લોકાનાં મુહડા તો બૌક સમા કહ્યા રે લો૦
કિમ મુંદી જે તેહ, કુવચન પણિ લોકોનાં કિમ જાયે સહ્યા રે લો૦ ૩૩
સુણો લખમણ કહે સામિ, ઝખ મારે નગરીના લોક અભાગીયારે લો૦
સાચો સીતા સીલ, એ વાતનો પરમેસર થાસ્યે સાખીયો રે લો૦ ૩૪
જો પણિ વાત છે એમ, તો પણિ વિણ છોડયાં મુઝ અપજસ નૂતરે રે લો૦
ઇણ પરિ ચિત્ત વિચારિ, વાત સહુ ન્યાઇ રામ સુણિજ્યો જે કરે રે લો૦ ૩૫
પહિલી ઢાલ રસાલ સ૦ સ૦ સાંભલતાં સુઘડાંનો હીયડો ગહગહે રે લો૦ સ૦
કીધાં કરમ કઠોર સ૦ સ૦ વિણ વેદ્યાં છૂટે કુણ સમયસુંદર કહે રે લો૦ સ૦ ૩૬

—સીતા રામ પ્રબંધ ચોપઇ રચ્યા સં૦ ૧૬૮૩ ને

લખ્યા સં૦ ૧૬૮૩ (કવિ હસ્ત લિખિત).

આમાં કેવી સાદી વાણી-અલંકાર કે ટાપટીપ વગરની રચના—કવિત્વમાં પરિણમે છે. ગામમાં સીતા માટે બોલાતો અપવાદ, તેનું રામ પાસે નિવેદન, રામ નગર ચર્ચા જોવા જતાં એક જણે સીતાને રાવણે રાખી છતાં રામે પોતાને ઘેર રાખી એવું મારેલું મેણું, તે પર રામના વિચાર અને લક્ષ્મણ સાથેનો વાર્ત્તાલાપ એ સર્વ બતાવી રામના મનના ભાવોનો પ્રવાહ અનેક ક્ષણો સુધી સતત ચાલુ રાખ્યો છે.

'ભાવ સરળ, સ્પષ્ટ અને ભવ્ય હોય-તે ઘણી વખત પ્રબળ હોય તો તેમાંથી નિપજતું કાવ્ય-અમૂર્ત્ત ભાવોને મૂર્ત્ત શબ્દોમાં છંદોબદ્ધ રચનામાં મૂકવાથી પરિણમતું કાવ્ય ખરૂં કાવ્ય બને છે. ઉત્તમ કાવ્યમાં વાચ્યાર્થ તરત જ સમજાવો જોઇએ. પ્રસાદ અને મધુરતા સાથે નવી નવી ખૂબી જેમ વાંચીએ તેમ જણાતી જાય તે ઉત્તમ કાવ્ય છે. વાચ્યાર્થ તુરત ન સમજાય એ લોકને માટે તો નિરર્થક જ થઇ પડે છે; આમાં અર્થબોધ સરલતાથી એકદમ થાય છે, અને આ સ્પષ્ટ કરવા કવિના અપ્રકટ અને અતિ મ્હોટા કાવ્ય-જૈન રામાયણ ને અવતારતા આ સીતા રામ પ્રબંધમાંથી એક આખું કાવ્ય વિસ્તારનો સંકોચ રાખ્યા વગર અત્ર આપ્યું છે.

Aho ! Shrutgyanam

કવિના અખંડ કાવ્યો–મહાકાવ્યમાંથી નમુના લઇ તેમની કાવ્ય શક્તિ પર વિચાર કરવાનાં સાધન જોયાં, હવે તેનાં ખંડ કાવ્યો–ટૂંકા કાવ્યો પર જઇએ.

આલોયણ (આલોચના) સ્તવન.

આમાં શત્રુંજય ગિરિની યાત્રા કરતાં ત્યાં ઋષભદેવ પાસે પોતાના હૃદયની વાત કરી જે કંઇ પોતે પાપો કર્યાં હોય તે ગણાવી તેની આલોચના કરી માફી ચાહે છેઃ–

બે કરજોડી વીનવૂં જી, સુણિ સ્વામી સુવિદીત,
કૂડ કપટ મૂંકી કરી જી, વાત કહૂં આપ વીત.
કૃપાનાથ ! મુઝ વીનતી અવધાર–
તૂં સમરથ ત્રિભુવન ધણીજી, મુઝને દુત્તર તાર– કૃપા૦
ભવસાયર ભમતાં થકાંજ, દીઠાં દુખ અનંત,
ભાગ સંયોગે ભેટિયોજી, ભય ભંજણ ભગવંત– કૃપા૦
જે દુઃખ ભાંજે આપણાજી, તેહનેં કહિયે દુઃખ,
પરદુખભંજન તૂં સુણ્યોજી, સેવકને દ્યો સુખ– કૃપા૦

હવે પોતાના સમયની સ્થિતિ જણાવે છેઃ—

દૂષમ કાલે દોહિલોજી, સૂધો ગુરૂ સંયોગ,
પરમારથ પીછે નહીજી, ગડર પ્રવાહી લોક– કૃપા૦
[તિણ તુઝ આગલ આપણા જી, પાપ આલોઉં આજ,
માય બાપ આગલ બોલતાં જી, બાલક કેહી લાજ– કૃપા૦]
જિન ધર્મ જિન ધર્મ સહૂ કહેજી, થાપૈ અપણી જી વાત,
સામાચારી જુઇ જુઇ જી, સંશય પડયાં મિથ્યાત– કૃપા૦
જાણ અજાણપણે કરી જી, બોલ્યા ઉત્સૂત્ર બોલ,
રતને કાગ ઉડાવતાજી, હાર્યો જનમ નિટોલ– કૃપા૦

આ પછી પોતાની આપવીતી–નિર્બળતા ઉત્કટ હૃદય નિર્મળતાથી જણાવે છે.

ભગવંત–ભાખ્યો તે કિહાંજી, કિહાં મુઝ કરણી એહ.
ગજ પાખર ખર કિમ સહેજી, સબલ વિમાસણ તેહ– કૃપા૦ ૧૦
આપ પ્રરૂપ્યું આકરૂંજી, જાણે લોક મહંત,
પિણ ન કરૂં પરમાદિયોજી, માસાહસ દૃષ્ટાંત– કૃપા૦ ૧૧
કાલ અનંતે મેં લહ્યાંજી; તીન રતન શ્રીકાર,
પિણ પરમાદે પાડિયાંજી, કિહાં જઇ કરૂં પુકાર– કૃપા૦ ૧૨
જાણૂં ઉત્કૃષ્ટી કરૂંજી, ઉદ્યત કરૂં અવિહાર,
ધીરજ જીવ ધરે નહીંજી, પોતે બહુ સંસાર– કૃપા૦

Aho ! Shrutgyanam

મહાવીર સ્તવન.

વીર સુણો મોરી વીનંતી, કરજોડી હો કહું મનની વાત,
બાલકની પરેં વીનવૂં, મોરા સ્વામી હો ! તૂં ત્રિભુવન તાત—
વીર સુણો મોરી વીનતી. ૧

તુમ દરશણ વિણુ હૂં ભમ્યો, ભવ માંહે હો સ્વામી ! સમુદ્ર મઝાર,
દુખ અનંતા મેં સહ્યાં, તે કહિતાં હો કિમ આવે પાર. વીર. ૨

પર ઉપગારી તૂં પ્રભુ, દુખ ભંજે હો જગ દીન દયાલ,
તિણુ તોરે ચરણે હું આવિયો, સામી ! મુઝને હો નિજ નયણુ નિહાલ. વીર. ૩

અપરાધી પિણુ ઊધર્યા, તેં કીધી હો કરૂણા મોરા સ્વામ,
હું તો પરમ ભક્ત તાહરો, તિણુ તારો હો નહીં ઢીલનો કાંમ. વીર. ૪

× × × ×

[આ પછી શૂલ પાણિ, ચંડકૌશિક નાગ, ગોશાલો, ગૌતમ, જમાલિ, અયમન્તા ઋષિ, મેઘકુમાર, નંદિષેણુ, આર્દ્રકુમાર, ચેલણા, શ્રેણિક એ સર્વને ઉદ્ધર્યા જણાવી]

ઇમ અનેક તેં ઊધર્યા, કહું તોરા હો કેતા અવદાત,
સાર કરો હિવ માહરી, મનમાંહે હો આણો મોરડી વાત. વીર. ૧૫

સૂધો સંજમ નહિ પલૈ, નહિ તેહવો હો મુઝ દરશણ ગ્નાન,
પિણુ આધાર છે એતલો, ઇક તોરો હો ધરૂં નિશ્ચલ ધ્યાન. વીર. ૧૬

મેહ મહિતલ વરસતો, નવિ જોવે હો સમ વિષમાં ઠાંમ,
ગિરૂવા સહજે ગુણ કરે, સ્વામી ! સારો હો મોરા વંછિત કામ. વીર. ૧૭

તુમ નામેં સુખ સંપદા, તુમ નાંમે હો દુખ જાયે દૂર,
તુમ નામે વંછિત ફલે, તુમ નામે હો મુઝ આનંદ પૂર. વીર. ૧૮

કલશ (હરિગીતના લયમાં કલશ મૂકાય છે)

ઇમ નગર જેસલમેરૂ મંડન, તીર્થંકર ચોવીસમો,
શાસનાધીશ સિંહ લંછન સેવતાં સુરતરૂસમો.
જિનચંદ ત્રિશલા માત નંદન સકલચંદ કલા નિલો,
વાચના ચારજ સમયસુંદર સંથુણ્યો ત્રિભુવનતિલો.

ચાર ચરણમાં છેલ્લું ચરણ સાધારણ—સામાન્ય એક જાતનું આવે એવું-ભુજંગી; કે એવી જાતના છંદ વાળું કાવ્ય તેને સામાન્ય રીતે ' છંદ ' એ નામ જૈનોમાં અપાયું છે. આવો ' છંદ ' પાર્શ્વનાથનો ૭ કડીનો કવિએ કરેલો નોંધવામાં આવ્યો છે, તેનાં પ્રથમની બે કડીઓ આ છેઃ—

આપણ ઘર બેઠાં લીલ કરો, નિજ પુત્ર કલત્ર શું પ્રેમ ધરો,
તમેં દેશ દેશાંતર કાંઇ દોડો, નિત્ય પાસ જપો શ્રી જિન રૂડો. ૧

Aho ! Shrutgyanam

મનો વંછિત સઘલાં કાજ સરે, શિર ઉપર ચામર છત્ર ધરે,
કલમલ ચાલે આગલ ઘોડો, નિત્ય **પાસ** જપો શ્રી જિન રૂડો. ૨

સીમંધર જિન સ્તવન

* ચાંદલિયા સંદેશડોજી, કહેજો **સીમં**ધર સ્વામ,
ભરતક્ષેત્રનાં માનવીજી, નિત ઉઠી કરે રે પ્રણામ.

× × ×

રાયને વહાલાં ઘોડલાંજી, વેપારીને વ્હાલા છે દામ,
અમને વહાલા **સીમં**ધર સ્વામી, જિમ **સીતાને રામ.**

નહિ માગું પ્રભુ! રાજ ઋદ્ધિજી, નહિ માગું ગરથ ભંડાર,
હું માગું પ્રભુ! એટલું જી, તુમ પાસે અવતાર.

દૈવ ન દીધી પાંખડીજી, કેમ કરી આવું રે હજૂર,
મુજરો માહારો માનજોજી, પ્રહ ઉગમતે સૂર.

એક રૂપક allegory રૂપે મનની શુદ્ધિ અર્થે કવિએ સુન્દર કવિતા કરી છે અને તે અતિ રસથી જૈનોમાં ગવાય છેઃ—

ધોબીડા તું ધોજે મનનું ધોતીયું રે, રખે રાખતો મેલ લગાર રે,
એણે રે મેલે જગ મેલો કર્યો રે, વિણ ધોયું ન રાખે લગારરે. ધો૦

જિનશાસન સરોવર સોહામણું રે, સમકિત તણી રૂડી પાલી રે,
દાનાદિક ચાર બારણાં રે, માંહી નવ તત્ત્વ કમલ વિશાળ રે. ધો૦
તિહાં ઝીલે મુનિવર હંસલા રે, પીયે છે તપ જપ નીર રે,
શમ દમ આદે જે શીલ રે, તિહાં પખાલે આતમ ચીર રે. ધો૦
તપવજે તપ તડકે કરીરે, જાળવજે નવ બ્રહ્મ વાડરે,
છાંટા ઉડાડે પાપ અઢારના રે, એમ ઉજળું હોશે તતકાલ રે. ધો૦
આલોયણ સાબૂડો સુધો કરે રે, રખે આવે માયા શેવાળ રે,
નિશ્ચે પવિત્રપણું રાખજે રે, પછે આપણા નિયમ સંભાળ રે. ધો૦
રખે મૂકતો મન મોકળું રે, પડ મેલીને સંકેલ રે,
સમયસુંદરની શીખડી રે, સુખડી અમૃત વેલ રે. ધો૦

પ્રથમ તીર્થંકર ઋષભદેના પુત્રો—ભરત ચક્રવર્ત્તિ અને તેના ભાઈ બાહુબલી બંને રાજ્ય માટે લડયા, પછી બાહુબલીએ પિતા પાસે દીક્ષા લઇ વનમાં ઉભા રહી કાયોત્સર્ગ કરી ધ્યાનસ્થ રહ્યા થકાં પણ મનમાંથી અહંકાર ઉતરતો નથી તેથી ઋષભદેવે તેની મોટી બહેનો સાધ્વી બ્રાહ્મી અને સુંદરીને મોકલી. પોતાના લઘુ બંધુ ગર્વ-માન-અહંકારના ગજ પર આરૂઢ બની આત્માનું હિત બગાડે છે એ બતાવવા તે બહેનો કહે છે કેઃ

---

* કવિ પદ્મવિજયે આ સીમંધર સ્વામી પાસે ચંદ્રદૂતની કલ્પના પોતાના એક ખંડ કાવ્યમાં મૂકી છે (સુણો ચંદાજી! સીમંધર પરમાતમ પાસે જા જો.)

Aho ! Shrutgyanam

વીરા મારા ગજ થકી ઉતરો, ગજ ચઢે કેવળ ન હોય રે—
　　　　　　　　　　વીરા મારા ગજ થકી ઉતરો.

ઋષભદેવ તિહાં મોકલે, બાહુબળજીની પાસે રે,
બંધવ ગજ થકી ઉતરો, બ્રાહ્મ સુંદરી એમ ભાષે રે—　　　વીરા૦

લોચ કરીને ચારિત્ર લિયો, વળી આવ્યું અભિમાન રે,
લઘુ બંધવ ! વાંદુ નહીં, કાઉસ્સગ્ગા રહ્યા શુભ ધ્યાન રે—　　　વીરા૦

વરસ દિવસ કાઊસ્સગ્ગ રહ્યા, શીત તાપથી સૂકાણા રે,
પંખીડે માળા ઘાલીઆ, વેલડીએં વીંટાણા રે—　　　વીરા૦

સાધ્વીનાં વચન સુણી કરી, ચમકયોં ચિત્ત મોઝાર રે,
હય ગય રથ સહુ પરિહર્યા, વળી આવ્યો અહંકાર રે—　　　વીરા૦

વૈરાગ્યે મન વાળીયું, મૂકયું નિજ અભિમાનરે,
પગ રે ઊપાડયો વાંદવા, ઊપન્જ્યું તે કેવળ જ્ઞાન રે—　　　વીરા૦

પોહોતા તે કેવળી પરષદા, બાહુબળ મુનિરાય રે,
અજરામર પદવી લઈ, સમયસુંદર વંદે પાય રે—
　　　　　　　　　　વીરા મારા ગજ થકી ઉતરો.

નિંદા પર ' સ્વાધ્યાય ' લખી છે તે કેવી ઉપદેશકારક છે તે આખી વાંચ્યા પછી સમજાશે. નિંદા કરવી તો આત્મનિંદા કરવી કે જેથી ' છુટકબારો '—સંસારથી મુક્તિ થાય.

નિંદા મ કરજો કોઇની પારકી રે, નિંદાનાં બોલ્યાં મહા પાપરે,
વૈર વિરોધ વધે ઘણો રે, નિંદા કરતાં ન ગણે માય બાપ રે-　　　નિંદા૦

દૂર બલંતી કાં દેખો તુમ્હેં રે, પગમાં બલતી દેખો સહુ કોય રે,
પરના મલમાં ધોયાં લૂગડાં રે, કહો કેમ ઊજલાં હોય રે-　　　નિંદા૦

આપ સંભાલો સહુ કો આપણો રે, નિંદાની મૂકો પડી ટેવ રે,
થોડે ઘણે અવગુણે સહુ ભર્યા રે, કેહનાં નલીઆં ચુએ કેહનાં નેવરે-　　　નિંદા૦

નિંદા કરે તે જાયે નારકી રે, તપ જપ કીધું સહુ જાય રે,
નિંદા કરો તો કરજો આપણી રે, જેમ છુટકબારો થાય રે-　　　નિંદા૦

ગુણ ગ્રહજો સહુ કો તણો રે, જેહમાં દેખો એક વિચાર રે,
કૃષ્ણ પરેં સુખ પામશો રે, સમયસુંદર સુખકાર રે-　　　નિંદા૦

શાલિભદ્રની સઝાય ૩૯ કડીની રચી છે; શ્રી મહાવીર સમયમાં રાજગૃહે શાલિભદ્ર મહા સમૃદ્ધિવાન્ શ્રેષ્ઠી હતો-તેને બત્રીશ સ્ત્રીઓ હતી. તેની બહેન ધન્ય (ધના) નામના શ્રેષ્ઠીની સાથે તેજ શહેરમાં પરણાવી હતી કે જેને તે મળીને આઠ પત્નિઓ

Aho ! Shrutgyanam

હતી. શ્રી મહાવીરના ઉપદેશથી વૈરાગ્ય આવતાં શાલિભદ્રે એક દિવસ એક, બીજે દિવસે બીજી એમ સ્ત્રીનો ત્યાગ કરતો ગયો; આથી તેની બહેન પોતાના પતિને સ્નાન કરાવતી વખતે રડી પડતાં આંસુ પતિના શરીરે પડયાં. તે ધન્યે રડવાનું કારણ જાણી જણાવ્યું કે આવો ત્યાગ હોય! વૈરાગ્ય થતો હોય તો એકદમ સર્વનો ત્યાગ એકી સાથે ઘટે. સ્ત્રીએ કહ્યું કે કહેવું સોહેલું છે, પણ કરવું દોહેલું છે. એટલે ધન્ય શેઠે સર્વ સ્ત્રીનો તુરત જ પરિત્યાગ કરી સંયમ લીધો. શાલિભદ્રે પણ પછી દીક્ષા લીધી. બંને મહાવીરના શિષ્ય–સાધુ બની સંયમ પાળી દેવલોકે ગયા. ઉપરના શાલિભદ્રના ત્યાગથી તેના બેન અને બનેવી ધના વચ્ચેની–સ્ત્રી પતિની વાત ટુંકમાં પણ સુંદર શબ્દોમાં કવિએ આલેખી છે તે જરા ઉદાહરણાર્થે અત્ર મૂકવામાં આવે છેઃ—

૧

વીર તણી વાણી સુણી જીરે, વૂઠો મેહ અકાલ, એકેકી દિન પરિહરેજી રે, જિમ જલ છંડે પાલ.
માતા દેખી ટલવલે જીરે, માછલડી વિણુ નીર, નારી સઘલી પાયે પડે જીરે, મત છંડો સાહસ ધીર.
વહુઅર સઘલી વીનવે જીરે, સાંભલ સાસુ વિચાર, સર છાંડી પાલે ચડયો જીરે, હંસલો ઊડણહાર.

૨

ઇણુ અવસર તિહાં નાવતાં જીરે ધના શિર આંસુ પડંત, કવણુ દુઃખ તુજ સાંભર્યું જીરે, ઊંચુ જોઇ કહંત.
ચંદ્રમુખી મૃગલોચની જીરે, બોલાવી ભરતાર, બંધવ વાત મેં સાંભલી જીરે, નારીનો પરિહાર.
ધનો ભણે સુણુ ઘેલડી જીરે, શાલિભદ્ર પૂરો ગમાર, જો મન આણ્યું છંડવા જીરે, વિલંબ ન કીજે લગાર.
કરજોડી કહે કામિની જીરે, બંધવ સમો નહી કોય, કહેતાં વાત જ સોહલી જીરે, મૂકતાં દોહલી હોય.
'જારે જા' તેં ઇમ કહ્યો જીરે, તો મેં છંડી રે આઠ, પિઉડા! મેં હસતાં કહ્યું જીરે, કુણ શું કરશું વાત.

૩

ઇણે વચને ધનો નીસર્યો જીરે, જાણે પંચાયણુ સિંહ, જઈ સાલાને સાદ કર્યો જીરે, ઘેલા! ઉઠ અબીહ.
કાલ આહેડી નિત ભમે જીરે, પૂંઠે મ જોઇશ વાટ, નારી બંધન દોરડી જીરે, ધવ ધવ છંડે નિરાશ.
જિમ ધીવર તિમ માછલો જીરે, ધીવરેં નાખ્યો રે જાલ, પુરૂષ પડી જિમ માછલો જીરે, તિમહિં અચિંત્યો કાલ.
જોબનભર બિહુ નીસર્યા જીરે, પોહોતા વીરજીની પાસ, દીક્ષા લીધી રૂઅડીજી રે, પાલે મન ઉલ્લાસ.

× × ×

ક્ષમાછત્રીશી—એ છત્રીશ કડીનું સમતા વિષયે કાવ્ય છે તેમાં પહેલાં એટલું જણાવે છે કે

આદર જીવ ક્ષમા ગુણ આદર, મ કરિશ રાગને દ્વેષજી,
સમતાયેં શિવ સુખ પામીજે, ક્રોધેં કુગતિ વિશેષ જી— આદર૦
સમતા સંજમ સાર સુણી જેં, કલ્પ સૂત્રની સાખજી,
ક્રોધ પૂર્વ કોડિ ચારિત્ર બાલે, ભગવંત ઇણી પરેં ભાખજી— આદર૦

Aho ! Shrutgyanam

કુણ કુણ જીવ તર્યાં ઉપશમથી, સાંભલ તું દષ્ટાંતજી,
કુણ કુણ જીવ ભમ્યા ભવમાંહે, ક્રોધ તણે વિરતંતજી— આદર૦

આ પછી જૈન કથાઓમાંથી ક્રોધ અને સમતાપર દષ્ટાંત આપી છેવટે જણાવે છે કેઃ—
ઇમ અનેક તર્યાં ત્રિભુવનમેં, ક્ષમા ગુણે ભવિ જીવજી,ક્રોધ કરી કુગતે તે પહોતા, પાડતાં મુખ રીવજી.
વિષ હલાહલ કહીયેં વિરૂઓ, તે મારે એક વારજી, પણ કષાય અનંતી વેલા, આપેં મરણ અપારજી.
ક્રોધ કરંતાં તપ જપ કીધાં, ન પડે કાંઇ ઠામજી, આપ તપે પરને સંતાપે, ક્રોધશું કેહો કામ જી.
ક્ષમા કરતાં ખરચ ન લાગે, ભાંગે ક્રોડ કલેશજી, અરિહંત દેવ અરાધક થાયે, આપે સુજસ પ્રદેશજી.

કેટલાંક છુટક પદો.

પ્રભુ-રૂપ

પ્રભુ તેરો રૂપ બન્યો આછો નિકો–પ્રભુ૦ પાંચ બરનકે પાટ પટંબર, પેચ બણ્યો કસબીકો—પ્રભુ૦
મસ્તક મુકટ કાને દોય કુંડલ, હાર હિયે સિર ટીકો; સમકિત નિર્મલ હોત સકલજન, દેખ દર્શ જિનજીકો.
સમવસરણ વિચ સ્વામી વિરાજિત, સાહિબ તીન દુનીકો; સમયસુંદર કહે એ પ્રભુ ભેટે, સફલ જન્મ તાહિકો.

ઋષભ સ્તવન-રાગ મારૂ.

દેવ મેરા હો રિષભ દેવ મેરા હો; પુણ્ય સંજોગે હું પામીઓ, પ્રભુ દરિસન તેરા હો— રિષભ૦
ચોરાશી લખ હું ભમ્યો, પ્રભુ ભવના ફેરા હો, દુખ અનંતાં મેં સહ્યાં, પ્રભુ ત્યાંહા ઓતેરાં હો.
ચરણ તુમારાં મેં ગ્રહ્યાં, સ્વામી અબકી વેળા હો, સમયસુંદર કહે તુમહથી સ્વામી કોણ ભલેરા હો.

ઋષભ ભક્તિ

હેરી માઇ ઋષભકી મેરે મન ભગતિ બસીરી– માઇ૦
પ્રથમ ભવનપતિ પ્રથમ નરેશ્વર, પ્રથમ યોગીસર પ્રથમ જતિ રી– માઇ૦
પ્રથમ ભિક્ષાચર પ્રથમ તીર્થંકર, પ્રથમ કેવલજ્ઞાની ભુજંગપતિ રી– માઇ૦
શ્રી વિમલાચલ સાહેબ મંડણુ, પ્રણમત સમયસુંદર ઉલ્લસી રી– માઇ૦

શાંતિનાથ સ્તવન, રાગ બિભાસ.

આંગન કલ્પ ફલ્યોરી, હમારે માઇ, આંગન૦
ઋદ્ધિ વૃદ્ધિ સુખ સંપતિદાયક, શ્રી શાંતિનાથ મિલ્યો રી— હમારે૦

ચૂવા ચંદન મૃગ મદ ભેલી, માંહે બરાસ ભલ્યો રી—
પૂજત શ્રી શાંતિનાથકી પ્રતિમા, અલગ ઉદ્વેગ ટલ્યો રી— હમારે૦

શરણેં રાખ્યો કૃપા કરી સાહિબ, જ્યું પારેવો પલ્યો રી,
સમયસુંદર કહે તુમારી કૃપા તેં, શિવ સુંદરી શું મિલ્યો રી— હમારે૦

અનંતગુણી પ્રભુ

ગુણ અનંત અપાર, પ્રભુ તેરે, ગુણ૦ સહસ રસના કરત સુર નર, તોહી ન પાવે પાર– પ્રભુ૦
કૌન અંબર ગિને તારા, મેરૂગિરિકો ભાર, ચરમ સાગર લહિર માલા, કરત કૌન વિચાર– પ્રભુ૦

Aho ! Shrutgyanam

ભક્તિ ગુણ લવલેશ ભાખ્યો, સુવિધિ જિન સુખકાર, સમયસુંદર કહત હમકૂં, સ્વામી તુમારો આધાર-પ્રભુ૦

પ્રભુ સેવાનો ઉલ્લાસ-રાગ મલાર.

કયૂં ન ભયે હમ મોર, વિમલગિરિ કયું ન ભયે હમ મોર.
ઋષભજી દેખત આનંદ ઉપજત, જૈસે ચંદ ચકોર- વિમલ૦ કયૂં૦
કયૂં ન ભયે હમ શીતલ પાની, સિંચિત તરૂઅર છોડ,
અહનિશ જિનજીકો અંગ પખાલત, તોરત કર્મ કઠોર- વિમલ૦
કયૂં ન ભયે હમ બાવના ચંદન, ઉર કેશર કોરી છોર;
કયૂં ન ભયે હમ મોગર માલતી, રહેત જિનજીકે ઉર- વિમલ૦
કયૂં ન ભયે હમ મૃદંગ ઝલરીયાં, કરત મધુર ધ્વની ઘોર,
જિનજીકે આગે નૃત્ય સોહાવત, પાવત શિવપુર ઠોર- વિલાસ૦
જગમંડલ સાચો એ જિનજી, ઓર દેખા ન રાચત મોર,
સમયસુંદર કહે એ પ્રભુ સેવો, જનમ જરા નહી ઓર. વિમલ૦

મનને ઉપદેશ

મેરા જીવ આરતિ કાહા ધરે,
જૈસા વે ખાતમે લખિત વિધાતા, તિનમેં ઘટે ન બઢે— મેરા૦ ૧
ચક્રવર્ત્તિ શિર છત્ર ધરાવત, કે ક ન મંગલ કરે,
એક સુખીયા એક દુખી દીસે, એ સબ કરમ કરે— મેરા૦ ૨
આરતિ અબ છોર દે જીઉડા, રોતે ન રાજ ચડે,
સમયસુંદર કહે જો સુખ વાંછે, કર ધરમ ચિત્ત અરે— મેરા૦ ૩

સમયના પલટા પર વૈરાગ્ય સૂચક પદ-રાગ આશાવરી.

કિસિકું સબ દિન સરખે ન હોય. પ્રહ ઉગત અસ્તંગત દિનકર, દિનમેં અવસ્થા દોય—કિસિકું.
હરિ બલભદ્ર પાંડવ નળ રાજા, રહે ષટ્ખંડ સિદ્ધિ ખોય; ચંડાળ કે ઘર પાણી આણ્યું, રાજા હરિચંદ જોય.
ગર્વ મકર તું મૂઢ ગમારા, ચડત પડત સંબ કોય; સમય સુંદર કહે ઇતર પરત સુખ, સાચો જિનધર્મ સોય.

રાગ પટ.

સ્વારથકી સબ હેરે સગાઇ કુણ માતા કુણ બેનડ ભાઈ—સ્વારથકી૦
સ્વારથ ભોજન ભુક્ત સગાઇ, સ્વારથ બિન કોઇ પાણી ન પાઇ-
સ્વારથ માબાપ શેઃ બડાઇ, સ્વારથ બિન નહુ હોત સહાઇ-
સ્વારથ નારી દાસી કહાઇ, સ્વારથ બિન લાઠી લે ધાઇ-
સ્વારથ ચેલા ગુરૂ ગુરુભાઇ, સ્વારથ બિન નિત હોત લરાઇ-
સમય સુંદર કહે સુણોરે લોકાઇ, સ્વારથ હે ભલિ પરમ સગાઇ-

(પાઠાંતર) સ્વારથ હે ભલા ધર્મ સખાઇ-

Aho ! Shrutgyanam

વેરણ નિદ્રા-રાગ ૫૮.

સોઇ સોઇ સારી રેન ગુમાઇ, બેરન નિદ્રા કહાંસેં રે આઇ—સોઇ૦
નિદ્રા કહે મેં તો બાલી રે ભોલી, બડે બડે મુનિજનકું નાખું રે ઢોલી—
નિદ્રા કહે મેં તો જમકી દાસી, એક હાથે મૂકી બીજે હાથેં ફાંસી—
સમયસુંદર કહે સુનો ભાઇ બનીયા, આપ મૂએ સારી ડુબગઇ દુનીયાં—

[આમાં પોતાના શ્રોતાઓ 'વાણીઆ' ને ઉદ્દેશેલ છે ને કબીરનું ચરણઃ 'કહેત કબીરા સુનો મેરે મૈયા, આપ મુએ પિછે દૂબ ગઇ દુનિયાં' એનું અનુકરણ કર્યું જણાય છે.]

સમયસુંદરજી એક વખત હાલના અજમેર પાસેના કિસનગઢ શહેરમાં પધાર્યા હતા, ત્યાં શ્રાવકોને આપસ આપસમાં કલેશ અને એક બીજાની નિંદા કરતા જોઈ તેઓશ્રીએ નીચે પ્રમાણે હૃદયની ઉર્મિઓ પ્રકટ કરી છે તે આત્માર્થી જનોએ મનન કરવા જેવી છે.

કયારે મલશે શ્રાવક એહવા, સુણસ્યે આવી વખાણોજી,
ધર્મગોષ્ઠી ચર્ચા કરીશું અમે, વીતરાગ વચન પ્રમાણોજી. કયારે૦

ધુરથી સમકિત જે સુધો ધરે, માને નહિ મિથ્યાતોજી,
સ્વામીશું ધરણે બેસે નહિ, નહિ રાગદ્વેષની વાતોજી. કયારે૦

[વખાણ-વ્યાખ્યાન, ધુરથી-મૂળથી, સમકિત-સમ્યગ્દર્શન-શ્રદ્ધા; સુધો-શુદ્ધ, મિથ્યાત્વ-અશ્રદ્ધા-મિથ્યા શ્રદ્ધા; સ્વામી-સહધર્મી-સ્વધર્મી; ધરણો-ગ્રહણ-આડું.]

છેલ્લે સ્થૂલભદ્ર અને કોશાનો પ્રસંગ લઇ એક ગીત કવિએ રચ્યું છે તે અપ્રકટ હોવાથી અત્ર આપું છું:—

રાગ સારંગ.

પ્રીતડિયા ન કીજઇ હો નારિ! પરદેસીયા રે, ક્ષણે ક્ષણે ક્ષણે દાઝે દેહ,
વીછડિયા વહાલેસર મલવો દોહિલોજી, સાલે સાલે અધિક સનેહ-પ્રીતડિયા૦

કાલ આવ્યા નેં આજ ઉઠિ ચાલસોરે, ભમર ભમતા જોઈ,
સાજણિઆ વળાવીને પાછા વળતાંજી, ધરતિ ભાર ન હોઇ-પ્રીતડિયા૦

મનના મનોરથ સવિ મનમાં રહ્યાજી, કહીએ કેહનિ સાથિ.
કાગલીઓ લખતાં ભીનો આંસુએજી, ચડિયો હો દુર્જન હાથ.-પ્રીતડિઆ૦

થૂલભદ્ર કોસા બુઝવીજી, પાલ્યો હો પૂરવ પ્રેમ,
સીલ સુરંગિ પેહરો ચુનડિજી, સમય સુંદર કહે એમ—પ્રીતડિયા૦

[સીલસુરંગી ચુનડી ઉપર પછીના કેટલાક કવિઓએ નવાં કાવ્ય કર્યાં છે.]

આ કવિની કૃતિઓમાં, કવિ રજપુતાના-મારવાડ મેવાડમાં બહુ રહેલા તેથી તે ભાષાનાં છાંટણાં જોવામાં આવે છે એટલું જ નહિ, પણ ઉર્દુ-ફારસી શબ્દો પણ ઘણા વપરાયા જણાય છે કારણ કે કવિને દિલ્હી અને મુગલ દરબારમાં-શહેનશાહ અને તેના રાજદ્વારીઓના પ્રસંગમાં બહુ આવવું પડયું હતું તેથી અને તેમ જ ગૂજરાતમાં પણ મુસલમાની રાજ્યનો

Aho ! Shrutgyanam

અમલ કરણઘેલાના પછીના સમયથી થઈ ચૂકયો હતો તે કારણે દફતરો, અદાલત વગેરેમાં મુસલમાની ભાષાનો પ્રવેશ થઈ ચૂકયો હતો. ગૂજરાતવાસી લોકોની મૂળ ભાષા ગૂજરાતી હોવા છતાં પણ રાજ્યના વ્યવહાર માટે ઊર્દુ ભાષા ભણવી કે બોલવી પડતી; આથી ઊર્દુ-ફારસી અરબી શબ્દો કાળે કરીને આ સત્તરમા સૈકામાં ઘર કરી ગયા—રૂઢ થયા. વિશેષમાં વિક્રમ ચૌદમા શતકમાં ઇરાનથી ભાગી આવી પારસીઓ ગૂજરાતમાં વસ્યા હતા, મુસલમાનો ઊપરાંત પોર્ટુગીઝો અને તેમના હરીફ તુર્કો સોળમાં શતકમાં આવી પહોંચ્યા હતા, આ કવિના સમયમાં એટલે સત્તરમા સૈકામાં અંગ્રેજોએ પણ આવી પોતાની કોઠીઓ સુરત વગેરે સ્થળે નાંખવાના પ્રયત્નો ચાલુ રાખ્યા હતા. આ વિદેશીઓની સાથેના સંબંધ વ્યવહારથી ભાષાપર નવી અસર થઇ. આ કાળ અને સંજોગ વશાત્ ઘુસેલા શબ્દોનું ભાષામાં ભરણું થયું તેથી તે ભંડોળને ભાષાની વૃદ્ધિ સમજી આદર આપવો ઘટે. આથી ભાષાનું સૌદર્ય ખંડિત થયેલું માનવું યોગ્ય નથી. કોમળ અને કઠિન બંને જાતના શબ્દો આવશ્યક છે. મરદાનગી બતાવવામાં લલિત કોમલતાનો પ્રયોગ ન ઘટે.

કવિના નલદમયંતી રાસમાંથી બે ચાર કડી જોઇએ:—ખંડ ૬ ઢાલ ૨.

નવલરાય **તખત** બઇસારી કરી રે, વરતાવઇ આપણી આણ દાણ રે,
ખલક લોકાઇ આગઇ **ખડી** રે, આગઇ જુડયો સબલ **દીવાણ** રે.
દેસ વસ સગલો કીઉ રે, કાંઇ સાધ્યા ભરતનિ ખંડ રે,
ભૂપતિ **સલામે** લઇ ભેટણાં રે, નલનો તપ તેજ પ્રચંડ રે.

આ કવિએ જૂની શાસ્ત્રીયકથાઓનાં આખ્યાનોનો ઉપયોગ કરી પોતાની ભાષામાં-ગૂર્જર ભાષામાં આખ્યાનોનો બાગ ખીલાવ્યો છે. તેમાં પોતે પ્રાચીન આખ્યાનોમાં તદ્રૂપ બની તેને પોતાના હૃદયની અંદર પ્રવેશ કરાવી તેમાંથી તેઓનાં પાત્રોને પોતાના સમયનાં પાત્રો જેવાં કલ્પી જે કવચિત્ કવચિત્ મૂકયાં છે તે એનું દૂષણ નથી પણ ભૂષણ છે. આ રીતે પ્રાચીનમાંનું ગ્રહણ કરી તેનું રૂપાન્તર કરી પોતાના ભાષા સાહિત્યને ઉજ્જવળ બનાવ્યું છે. છૂટાં છૂટાં પદો-નાનાં નાનાં કાવ્યો રચી પોતાના હૃદયનો ઉલ્લાસ પ્રકટ કર્યો છે. કવિ પ્રેમાનંદના પુરોગામી આ કવિએ આખ્યાન કવિ તરીકે પ્રસિદ્ધતા સિદ્ધ કરી છે; અને દેશી સાહિત્યની વૃદ્ધિ કરી છે.

આવા પ્રાચીન દેશી સાહિત્યનું જ્ઞાન ઘણું વધારવાની જરૂર છે. તે જ્ઞાન વધતાં અને પ્રાચીન સાહિત્ય પરત્વેની આપણી મમત્વ બુદ્ધિ તીવ્ર થતાં તે જ્ઞાન ફલદ્રુપ નીવડશે, તેમાંથી કવિઓને નવીન ઉર્મિઓનાં સાધન, ભાવો, અને રસમય વાણી મળશે; ભાષાશાસ્ત્રીઓને ભાષાવિકાસ—રૂપાન્તર વગેરેપર અવનવો પ્રકાશ પ્રાપ્ત થશે અને સમગ્ર ભાષાનો ઇતિહાસ રચવામાં તે ઉપયોગી થશે. આ દેશી પ્રાચીન સાહિત્ય એ આપણા સાહિત્યનું પ્રબલ પોષકબળ છે, પછી તે જૈન હો વા જૈનેતર. બંને એકજ-ભારતમાતાનાં-ગૂર્જરી માતાનાં સંતાન છે, બંને સરસ્વતી દેવીના એક સરખા ઉપાસક છે, બંને સાહિત્ય શરી-

Aho ! Shrutgyanam

રનાં અંગો છે. બંનેની લાજ એક બીજાના હાથમાં છે, બંને એક બીજા સાથે એકત્રિત રહીને જ શોભશે, અને પોતાની માતાને-ભૂમિને શોભાવશે.

પરમ પ્રભુભક્ત નાગર વૈષ્ણવ શ્રી નરસિંહ મહેતા કહી ગયા છે કે: 'પક્ષાપક્ષી ત્યાં નહીં પરમેશ્વર, સમદૃષ્ટિને સર્વ સમાન'—તે સર્વેએ સ્વીકારી સાહિત્યને પક્ષાપક્ષી વગરનું રાખવાનું છે; તો જ ગૂર્જરી વાણીનો જય થશે-ઉત્કર્ષ થશે. તથાસ્તુ !

પૂરવણી

આ નિબંધ લખાઇને છપાઇ ગયા પછી સમયસુંદરજીની કેટલીક નવી કૃતિઓ જાણવામાં આવેલી હોવાથી તેનાં નામ વિગેરે આ પૂરવણીમાં આપી દેવાનું ઉચિત લાગ્યું છે.

સંસ્કૃત પ્રાકૃત-ગદ્ય પદ્ય ગ્રંથ

(૧) ચતુર્માસ પર્વ વ્યાખ્યાન પદ્ધતિ. સં. ૧૬૬૫ ચૈત્ર શુ. ૧૦ અમરસર નગરમાં.

(૨) કલ્પલતા મધ્યે ભોજનવિચ્છિત્તિ. ગદ્યમાં સાધર્મિક ભાઇઓની ભક્તિ સંબંધી વિવેચન.

ભાષા કૃતિઓ-ચોપાઇ વિગેરે

વ્યવહાર શુદ્ધિ ચોપાઇ.	સંવત્ ૧૬૯૩
દ્રુપદી સતી સંબંધ	સંવત્ ૧૭૦૦
આલોયણા છત્રીસી	અહમદપુર (અમદાવાદ) માં સં. ૧૬૯૮

સમય વગરની કવિતાઓ

૧ જંબૂ રાસ.	૨ નેમિરાજીમતી રાસ.	૩ પ્રશ્નોત્તર ચોપાઇ.
૪ શ્રી પાલ રાસ.	૫ હંસરાજ વચ્છરાજ ચોપાઇ.	૬ પ્રશ્નોત્તર સાર સંગ્રહ.
૭ પદ્માવતી સઝાય.	૮ ચ્યાર પ્રત્યેક બુદ્ધપર સ૦	૯ પાર્શ્વનાથ પંચકલ્યાણક સ્તવન.
૧૦ પ્રતિમા સ્તવન.	૧૧ મુનિસુવ્રત સ્તવન-	

નાનાં નાનાં કાવ્યો-ગીતો વિગેરે

૧ નલદવદંતી, ૨ જિનકુશલસૂરિ, ૩ ઋષભનાથ, ૪ સનત્કુમાર, ૫ અર્હન્નક, ૬ સ્થૂલભદ્રજી, ૭ ગૌતમસ્વામી, ૮ ક્રોધનિવારણ, ૯ માનનિવારણ, ૧૦ મોહનિવારણ, ૧૧ માયાનિવારણ, ૧૨ લોભ-નિવારણ, ૧૩ યતિ લોભનિવારણ, ૧૪ મનઃશુદ્ધિ, ૧૫-૧૬ જીવપ્રતિબોધ, ૧૭ આર્ત્તિનિવારણ, ૧૮ નિંદાનિવારણ, ૧૯ હુંકારનિવારણ, ૨૦ કામિની વિશ્વાસ, ૨૧ જીવનટ, ૨૨ સ્વાર્થ, ૨૩ પારકી હોડ નિવારણ, ૨૪ જીવ વ્યાપાર, ૨૫ ઘડી લાખીણી, ૨૬ ઘડિયાલા, ૨૭ ઉદ્યમભાગ્ય, ૨૮ મુક્તિ-ગમન, ૨૯ કર્મ, ૩૦ નાવ, ૩૧ જીવદયા, ૩૨ વીતરાગ સત્યવચન, ૩૩ મરણભય, ૩૪ સંદેહ, ૩૫ સૂતા જગાવણ, ૩૬ પરમેશ્વર પૃચ્છા, ૩૭ ભણન પ્રેરણ, ૩૮ ક્રિયા પ્રેરણ, ૩૯ પરમેશ્વર સ્વરૂપ દુર્લભતા, ૪૦ જીવ કર્મ સંબંધ, ૪૧ પરમેશ્વર લય, ૪૨ નિરંજન ધ્યાન, ૪૩ દુઃષમ કાલે સંયમ પાલન.

Aho ! Shrutgyanam

મુદ્રણસ્થાનઃ આદિત્યમુદ્રણાલય, રાયખડ રોડ,—અમદાવાદ.
મુદ્રકઃ પ્રાણજીવન વિશ્વનાથ પાઠક.

Aho ! Shrutgyanam

॥ अर्हम् ॥

॥ नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ॥

जैन साहित्य संशोधक

' पुरिसा ! सच्चमेव समभिजाणाहि । सच्चस्साणाए उवट्ठिए मेहावी मारं तरइ ।

' जे एगं जाणइ से सव्वं जाणइ; जे सव्वं जाणइ से एगं जाणइ ! '

' दिट्ठं, सुयं, मयं, विण्णायं जं एत्थ परिकहिज्जइ । '

—निर्ग्रन्थप्रवचन-आचारांगसूत्र ।

खंड २] गुजराती लेख विभाग [अंक ४

पुरातत्त्व संशोधननो पूर्व इतिहास

(संवत् १९७७ नी श्रावणी पूर्णिमाना दिवसे, गूजरात महाविद्यालय, अमदावादमां अपाएलुं व्याख्यान.)

પુરાતત્ત્વ એ એક સંસ્કૃત શબ્દ છે. સામાન્ય રીતે ઇંગ્રેજીમાં જેને " એન્ટીકવીટીઝ " (Antiquities) કહે છે તે અર્થમાં આ શબ્દ યોજવામાં આવ્યો છે. પુરાતત્ત્વ એટલે પુરાતન-જૂનું પુરાણું; અને સંશોધન એટલે શોધખોળ કરવી. જૂની વસ્તુઓની શોધખોળ કરવી તે પુરાતત્ત્વ સંશોધન કહેવાય. હિંદુસ્તાનની જૂની પુરાણી વસ્તુઓની શોધખોળ કરવાની શરૂઆત કયારથી થઇ અને કઇ કઈ સંસ્થાઓએ તથા કઈ કઈ વ્યક્તિઓએ આ કાર્યમાં વિશેષ ભાગ લીધો તેનું કાંઇક દિગ્દર્શન કરાવવાનો આજના આ મારા વ્યાખ્યાનનો મુખ્ય ઉદ્દેશ છે.

મનુષ્ય એક વિશિષ્ટ બુદ્ધિશાલી પ્રાણી છે. તેથી દરેક વસ્તુના સ્વરૂપને જાણવાનો અથવા જાણવાની જીજ્ઞાસા હોવાનો તેનો મુખ્ય સ્વભાવ છે. આત્માનું અમરત્વ માનનારા દરેક આસ્તિક મનુષ્યના મતે પ્રત્યેક પ્રાણીમાં તેના પૂર્વસંચિત સંસ્કારો પ્રમાણે ન્યૂનાધિક પ્રમાણમાં જ્ઞાનનો વિકાસ થયેલો હોય છે. મનુષ્ય પ્રાણી જે સર્વ પ્રાણીઓમાં શ્રેષ્ઠ મનાય છે તેનું કારણ એ છે કે બીજી જીવ-જાતિઓ કરતાં મનુષ્ય જાતિમાં જ્ઞાનનો

Aho ! Shrutgyanam

વિકાસ સર્વાધિક થયેલો છે. જ્ઞાનના વિકાસ અથવા પ્રસારનું મુખ્ય સાધન વાણી એટલે ભાષા છે; અને એ વાણીનું વ્યક્ત સ્વરૂપ સંપૂર્ણ રીતે મનુષ્યજાતિમાં જ ખીલેલું છે. તેથી બીજા બધા દેહધારી જીવાત્માઓ કરતાં મનુષ્યાત્મામાં જ્ઞાનનો વિશેષ વિકાસ થાય તે સ્વાભાવિક છે. મનુષ્ય જાતિમાં પણ વ્યક્તિગત પૂર્વસંચિતાનુસાર જ્ઞાનના વિકાસનું અપ્રમિત તારતમ્ય રહેલું છે. સંસારમાં એવા પણ મનુષ્યો દૃષ્ટિગોચર થાય છે કે જેમનામાં જ્ઞાનશક્તિનો લગભગ છેક અભાવ જ હોય છે અને જેઓ મનુષ્યરૂપમાં પણ સાક્ષાત્ અબુદ્ધ પશુ જેવા હોય છે. બીજી બાજુએ એવા પણ મનુષ્યો ઉત્પન્ન થાય છે કે જેમનામાં જ્ઞાનશક્તિ અપ્રમેયરૂપે ખીલેલી હોઈ જેઓ પૂર્ણ પ્રબુદ્ધ ગણાય છે. પ્રાચીન ભારતવાસીઓના મોટા ભાગનો તો એવો પણ પૂર્ણ વિશ્વાસ હતો, કે એ જ્ઞાનશક્તિ કોઈ કોઇ વ્યક્તિમાં એટલે સુધી સંપૂર્ણ ખીલેલી હોય છે અથવા ખીલી શકે છે કે જેથી તે જગત્‌ના સમસ્ત પદાર્થોનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મેળવી શકે છે; વિશ્વની દૃશ્ય કે અદૃશ્ય એવી એક પણ વસ્તુ કે બાબત તેનાથી અજ્ઞાત હોતી નથી. આવી વ્યક્તિને આર્યો "સર્વજ્ઞ"ના નામે ઓળખે છે. આર્યોની આ મોટા ભાગની શ્રદ્ધા પ્રમાણે આવી કોઈ યથાર્થ સર્વજ્ઞ વ્યક્તિનું અસ્તિત્વ હોઈ શકે કે નહિ એ એક પ્રાચીનકાળથી જ મોટો વિવાદગ્રસ્ત વિષય થઈ પડયો છે; અને સર્વજ્ઞના અસ્તિત્વ–નાસ્તિત્વના વિષયમાં આજ સુધીમાં અસંખ્ય વિદ્વાનોએ અનંત શંકા–સમાધાનો કર્યાં છે. પરંતુ મારે કહેવું જોઇએ કે નરી આંખે જોઇ શકાય એવા સર્વજ્ઞનું અસ્તિત્વ સાબીત કરનારૂં તો કોઈ પણ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ આજ સુધીમાં ચિકિત્સક સંસાર આગળ રજુ કરવામાં આવ્યું નથી. અસ્તુ. એ "સર્વજ્ઞ" ના વિષયમાં ગમે તેમ હો, પણ એટલી બાબત તો ચોક્કસ છે કે કોઇ કોઇ મનુષ્ય વ્યક્તિમાં જ્ઞાનશક્તિનો એટલો બધો વિકાસ અને પ્રકર્ષ થયેલો પ્રત્યક્ષ જોવાયો છે અને જોવાય છે કે જેનું માપ કાઢવું બીજાઓના માટે અશક્ય છે. શબ્દશાસ્ત્રની બીકને લીધે આપણે એવી પ્રબુદ્ધ વ્યક્તિને જો સર્વજ્ઞ ન કહી શકીએ તો પણ બહુજ્ઞ–અનલ્પજ્ઞ તો અવશ્ય કહી શકીએ છીએ. એવી એક બહુજ્ઞ વ્યક્તિની જ્ઞાનશક્તિની તુલનામાં બીજા સાધારણ એવા લાખો કરોડો મનુષ્યોની એકત્રિત જ્ઞાનશક્તિ પણ પૂરી થઈ રહે તેમ નથી.

ઇતિહાસ–અતીત કાલથી સંસારમાં આવી અસંખ્ય અનલ્પજ્ઞ વ્યક્તિઓ ઉત્પન્ન થતી આવી છે, અને જગત્‌ને તેઓ પોતાની એ અગાધ જ્ઞાનશક્તિનો અમૂલ્ય વારસો સોંપતી રહી છે. છતાં મનુષ્ય જાતિએ જગત્‌ના વિષયમાં હજી બહુ જ અલ્પ જાણ્યું છે. જગત્ અદ્યાપિ એવું ને એવું જ અગમ્ય અને અજ્ઞેય છે. જગત્‌ની બીજી અનંત વસ્તુઓને તો બાજુએ મૂકીએ પણ મનુષ્ય જાતિએ પોતાના વિષયમાં જ હજુ કેટલું જાણ્યું છે? જેવી રીતે માનવી સંસ્કૃતના પ્રથમ નિદર્શક અને સંસારના સાહિત્યના આદિમ ગ્રંથ ઋગ્વેદમાંના ઋષિઓ મનુષ્ય જાતિના ઇતિહાસને અનુલક્ષીને પૂછતા હતા કે–

को ददर्श प्रथमं जायमानम् ?

'સૌથી પ્રથમ ઉત્પન્ન થનારને કોણે જોયો છે?' તેવી જ રીતે આજે વીસમી

Aho ! Shrutgyanam

શતાબ્દીના તત્ત્વજ્ઞાનીઓ પણ હજી એ જ પ્રશ્ન પૂછી રહ્યા છે. જેવી રીતે જગત્‌ના પ્રાદુર્ભાવના વિષયમાં સત્ યુગીન નાસદીય સૂક્તનો રચયિતા મહર્ષિ જાણવા ઇચ્છતો હતો કે

को अद्धा वेद क इह प्रवोचत्
कुत आ जाताः कुत इयं विसृष्टिः ।

'આ જગત્‌નો પસાર ક્યાંથી આવ્યો છે—અને ક્યાંથી નીકળ્યો છે, એ કોઈ જાણે છે? અને કોઈ બતાવે છે?' તેવી જ રીતે આજના આ કલિયુગનો તત્ત્વજીજ્ઞાસુ પણ હજી તે જ પ્રશ્નનો ઉત્તર જાણવા તલપી રહે છે. જો કે આવી રીતે જગત્–તત્ત્વ બહુ ગૂઢ અને અગમ્ય છે; ગૂજરાતી ભક્ત કવિ અખો કહે છે તેમ એ ખરેખર "અંધારો કુઓ" છે અને એનો ભેદ પાઈ કોઈ મુઓ નથી. છતાં માનવી જીજ્ઞાસા અને જ્ઞાન-શક્તિએ એ "અંધારા કુઆ" નાચે કેટલાક ખડકો ખોળી કાઢવાનો ભગીરથ પ્રયત્ન કર્યો છે. એ કુઆના ઉંડા પાણી ઉપર ફરી વળેલી નીળી શેવાળને જ્યાં ત્યાંથી ખસેડી એના જળકણોનો આસ્વાદ મેળવવા મોટી આપત્તિઓ ઉઠાવી છે. ગૂઢતર અને ગૂઢતમ જણાતા એ જગત્‌નાંયે કંઇ કંઈ રૂપોને મનુષ્યે ઓળખ્યાં છે.

સૃષ્ટિના સ્વાભાવિક નિયમ પ્રમાણે ચોમાસાની મોસમમાં આકાશ ઉપર ચડી આવતાં વાદળાં અને તેમાં થતી ગર્જના તથા વિજળીઓને જોઇને જેમ આપણા વેદકાલીન પૂર્વજો મહા ભયભીત થતા હતા અને કુદરતના એ ઉપયોગી કાર્યને પણ મોટી આફત રૂપે માનતા હતા તેમ આજે આપણે માનતા નથી. પોતાની અસાવધાનતાને લીધે જેમતેમ પ્રજ્વાળેલા અગ્નિમાં ભસ્મ થઇ જતી પોતાની પર્ણકુટિઓને જોઇને, કોઈ રાક્ષસ કે દેવ પોતાના ઉપર કુપિત થઇ આ અગ્નિના રૂપે આવેલો છે એમ સમજી તેની આગળ દૂરથી ઉભા ઉભા હાથ જોડી જેમ તેઓ તેની પ્રાર્થના કરતા તેમ આજે આપણે કરતા નથી. વાયુના વેગથી ઉડી જતાં ઝુંપડાં અને ઘાસના ઢગલાઓને જોઇને જેમ તેઓ તેને કોઈ મોટો અદૃષ્ટ ચોર સમજી ઇંદ્ર પાસે તેને શિક્ષા કરાવવા માટે ઇન્દ્રની વિવિધ પ્રાર્થનાઓ કરતા તેમ આજે આપણે કરતા નથી. આપણા પૂર્વજો અને આપણામાં થયેલા આ ફેરફારનું કારણ શું છે? વેદકાલીન આર્યો પછી તેમની સંતતિએ કરેલી કુદરતનાં એ ગૂઢતત્ત્વોની કેટલીક શોધખોળો તે જ તેનું કારણ છે. વિશ્વના રહસ્યને સમજવા માટે જેમ જેમ પાછળના મનુષ્યો વધારે બુદ્ધિપૂર્વક વિચાર કરતા ગયા તેમ તેમ તેમને સૃષ્ટિના એ સાધારણ નિયમો સમજાતા ગયા. તેઓએ મેઘના સ્વરૂપને જાણ્યું, અગ્નિના સ્વભાવને ઓળખ્યો, વાયુની પ્રકૃતિને પહેચાણી, અને તેથી, પછી નિર્ભય અને નિશ્ચિંત થવાના ઉપાયો યોજ્યા. તેનાથી પણ આગળ વધી આધુનિક યુગના મનુષ્ય પ્રાણીએ કુદરતની એ સ્વચ્છન્દ શક્તિઓના આંતર મર્મને સમજી, તેમને કાબુમાં આણી, તેમની પાસેથી કેવાં કેવાં કામો લેવા માંડયાં છે તે આપણે પ્રત્યક્ષ જોઈ અને અનુભવી રહ્યા છીએ.

મનુષ્ય પોતાના ઇન્દ્રિય બલથી માત્ર પોતાના સમય દરમ્યાન સત્તા ધરાવતી અને

પોતાના સંસર્ગ કે અનુભવમાં આવતી બાબતોનું જ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી શકે છે. સંસર્ગાતીત કે અનુભવાતીત બાબતોનું જ્ઞાન મનુષ્યોને પોતાની ઇન્દ્રિયો દ્વારા થઈ શકતું નથી. તેમ છતાં આપણે જેટલા વિશ્વાસથી આજના બનાવોની ચર્ચા કરીએ છીએ, તેટલા જ વિશ્વાસથી હજારો લાખો વર્ષો પહેલાં બની ગયેલા બનાવોની પણ ચર્ચા કરીએ છીએ. શિવાજી કે પ્રતાપ, અકબર કે અશોકને આપણા યુગના કોઇ પણ મનુષ્યે પ્રત્યક્ષ જોયા નથી, છતાં જેમ આપણને આપણા પોતાના અસ્તિત્વની ખાતરી છે તેટલી જ તેમના અસ્તિત્વની પણ ખાતરી છે. જેમ આજે આપણે આપણી વચ્ચે વિચારતા સંસારના એક મહાત્માના આદર્શમાં પૂર્ણ શ્રદ્ધા ધરાવીએ છીએ તેમ જ આજથી અઢીહજાર વર્ષો પહેલાં થઈ ગયેલા તીર્થંકર મહાવીર કે તથાગત બુદ્ધના આદર્શમાં પણ તેટલી જ પૂર્ણ શ્રદ્ધા ધરાવીએ છીએ. જેવી રીતે આપણે ભગવદ્ગીતાના અંતિમ રહસ્યકાર લોકમાન્ય તિલકની પ્રથમ શ્રાદ્ધ તિથિ ગયા પરમ દિવસે ઉજવી છે, તેવી જ રીતે પાંચ હજાર વર્ષ પહેલાં જન્મ લેનાર અને ભગવદ્ગીતાના મૂળ ઉપદેષ્ટા ભગવાન્ શ્રી કૃષ્ણની જન્મતિથિ આવતા પરમ દિવસે ઉજવવાના છીએ. આ અનુભવાતીત અને સમયાતીત બાબતોનું જ્ઞાન કરાવનાર કોણ છે ? કયા સાધનદ્વારા આપણે એ ભૂતકાલની વાતોને જાણીએ છીએ ? કહેવાની આવશ્યક્તા નથી કે એ બાબતનું જ્ઞાન કરાવનાર ઇતિહાસ શાસ્ત્ર છે. ઐતિહાસિક સાહિત્ય દ્વારા જ આપણે ભૂતકાલની વાતોને જાણી શકીએ છીએ. ઇતિહાસ જેટલો યથાર્થ અને વિસ્તૃત હોય તેટલું જ આપણું ભૂતકાલીન જ્ઞાન પણ યથાર્થ અને વિસ્તૃત હોઇ શકે, એ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. આપણા કમનસીબે આપણા પૂર્વજોએ રચેલો આપણા દેશનો યથાર્થ કે વિસ્તૃત ઇતિહાસ ઉપલબ્ધ નથી. જગત્‌ની બીજી પ્રાચીન પ્રજાઓને તેમના દેશોના વિષયમાં જેટલો પ્રાચીન તથા વિસ્તૃત ઇતિહાસ મળી આવે છે તેટલો આપણા આ વિશ્વવૃદ્ધ આર્યાવર્તનો ઇતિહાસ મળી આવતો નથી. પ્રાચીન અને વિસ્તૃત ઇતિહાસ તો બાજુએ રહ્યો પરંતુ આપણા માટે તો આપણી પહેલાંની ત્રીજી પેઢીનો ય ઇતિહાસ બહુ દુર્લભ્ય છે. વર્તમાન શતાબ્દીનો પણ પૂરો વૃત્તાન્ત આપણે જાણતા નથી. જે રાષ્ટ્રીય શક અને સંવત્‌નો આપણા પૂર્વજો અનેક સૈકાઓથી ઉપયોગ કરતા આવ્યા છે અને જેના આધાર ઉપર આપણી આખી મધ્યકાલિન કાલગણના અવલંબિત છે, તેના પ્રવર્તક કોણ છે એ હજી પણ અજ્ઞાત કે અનિશ્ચિત છે. આવી સ્થિતિમાં પુરાતત્ત્વ-સંશોધન એ જ આપણા ઇતિહાસના નિર્માણનો પાયો છે. આપણો ઈતિહાસ જૂનીપુરાણી વસ્તુઓની શોધખોળ કરીને તેના ઉપરથી નીકળતાં પરિણામો ઉપર રચાએલો છે અને રચાવાનો છે. એમ તો સાધારણ રીતે દુનીઆના દરેક પ્રાચીન પ્રદેશની પુરાતન પરિસ્થિતિ કે જેનું દર્શન ઈતિહાસરૂપી દૂરદર્શક યંત્રથી પણ થઇ શકતું નથી, તેને જાણવા માટે જૂનીપુરાણી વસ્તુઓ જ આધારભૂત હોય છે; પરંતુ ભારતવર્ષને માટે તો આપણા જન્મદિવસથી જે લઈને ઠેઠ યુગની આદિ સુધીની પરિસ્થિતિ જાણવા માટે બધો આધાર જૂની પુરાણી વસ્તુઓ ઉપર જ રાખવો પડે છે. કારણ કે શાસ્ત્રીય પદ્ધતિથી જેને આપણે

Aho ! Shrutgyanam

ઈતિહાસ કહીએ તેવો ઈતિહાસ તો ભારતવાસીઓએ નાનો મોટો એક પણ લખ્યો નથી; અથવા તો છેવટે તે મળતો નથી. ઈતિહાસ નિર્માણના કામમાં આવે તેવી જૂની-પુરાણી વસ્તુઓમાં જૂના ગ્રન્થો, શિલાલેખો, તામ્રપત્રો, શિક્કાઓ તથા ધાતુપાત્રો, મંદિરો, મસ્જીદો, જલાશયો, કીર્તિસ્તંભો અને તેવાં બીજાં મકાનો અથવા ખંડેરો વિગેરે ગણાય છે. આપણા પૂર્વજોએ ઈતિહાસના સ્વતંત્ર ગ્રન્થો તો નિર્માણ નથી કર્યાં પરંતુ ઇતિહાસનાં સાધનો તો ઘણાં જ નિર્માણ કર્યાં છે એમાં શંકા નથી. પણ આપણે તો એ પણ જાણતા ન હતા–કે પછી જાણવાની દરકાર રાખતા ન હતા કે આ સાધનોની શી રીતે છાણવીણ કરી તેમાંથી આપણો ઇતિહાસ ઉપજાવી કાઢીએ. એ પાઠ આપણને પશ્ચિમવાસીઓએ શીખવ્યો છે. કેવળ પાઠ જ શીખવ્યો છે એમ નથી પરંતુ અનેક પ્રકારનાં કષ્ટો વેઠી અને પરિશ્રમો લઈ તેમણે આપણા માટે ઈતિહાસના અનેક અધ્યાયો પણ તૈયાર કર્યા છે. અને એ માટે આપણે હમેશાં તેમના કૃતજ્ઞ જ રહેવું જોઈએ. આટલું આનુષંગિક કહી હવે હું મારા વ્યાખ્યાનના મુખ્ય–પ્રતિપાદ્ય વિષય ઉપર આવું છું.

જેમ મેં પ્રારંભમાં જણાવ્યું છે, તેમ મનુષ્ય એ વિશિષ્ટ બુદ્ધિશાલી, જ્ઞાનવાન્ પ્રાણી છે તેથી દરેક વસ્તુના સ્વરૂપને વિશેષપણે જાણવાની જીજ્ઞાસા તેનામાં સ્વાભાવિક જ રહેલી છે. તેમાં વળી જે મનુષ્યો સાધારણ મનુષ્યો કરતાં વધારે જ્ઞાનવાન્ હોય છે તેમનામાં એ જીજ્ઞાસા ઘણા ઉત્કટ પ્રમાણમાં હોય છે. એવા મનુષ્યોને જ્યારે કોઇ અપરિચિત પ્રદેશનો અથવા માનવ સમાજનો નવીન સમાગમ થાય છે ત્યારે તેમને તેમના ધર્મ, સમાજ, ઇતિહાસ આદિના વિષયમાં જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવાની તીવ્ર ઇચ્છા ઉત્પન્ન થાય છે. આ જ્ઞાન–પિપાસાથી પ્રેરિત થઈ તે મનુષ્યો તે તે બાબતની શોધખોળમાં પડે છે. એ અપરિચિત પ્રદેશની ભાષા શીખે છે. તેના જ્ઞાનભંડારને તપાસવાનો પ્રયત્ન કરે છે, અને તેમ કરી પોતાના દેશબંધુઓને પોતે મેળવેલા નવીન જ્ઞાનનો લાભ આપવા માટે પોતાની ભાષામાં તે નવા ભંડારને ઉતારવાનો ઉપક્રમ કરે છે. ભારત વર્ષમાં વ્યાપારદ્વારા પૈસા કમાઇ પેટપૂજા કરવા અર્થે આવેલા ઈંગ્રેજો આ જ પ્રમાણે આપણા ઈતિહાસની શોધખોળમાં ઉતર્યાં હતા.

ઇ. સ. ૧૭૫૭ માં ઇસ્ટ ઇન્ડિઆ કંપનીએ, પ્લાસીના પ્રસિદ્ધ યુદ્ધ પછી ધીરે ધીરે બંગાલ ઉપર અધિકાર પ્રાપ્ત યરવાનો પ્રારંભ કરી દીધો હતો. ૧૭૬૫ માં તેણે બંગાલ, બીહાર અને ઉડીસાની દીવાની હસ્તગત કરી લીધી. ૧૭૭૨ માં બંગાલના નવાબ પાસેથી અધિકાર પડાવી લીધા; અને પછી તરત, એટલે ૧૭૭૪ માં નવાબને સમૂળગો પદચ્યુત કરી પોતાનો ગવર્નર–જનરલ નિયુક્ત કરી દીધો. અંગ્રેજોના માટે એ સ્વાભાવિક જ હતું કે તેઓ હવે આ દેશના ધર્મ, સમાજ આદિનું થોડું ઘણું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે. જે દેશની સાથે વ્યાપાર કરીને તેમણે કરોડો નહિ પણ અબજો રૂપીઆ મેળવ્યા હતા, અને હજારો નહિ પણ લાખો વર્ગ માઇલ જમીન તેઓ પચાવી પડયા હતા, તે જ દેશની અમૂલ્ય જ્ઞાનસંપત્તિ મેળવવાનો પણ પ્રશસ્ત લાભ કેટલાક વિદ્વાન્ અંગ્રેજોને થઇ

Aho ! Shrutgyanam

આવ્યો. જે કેટલાક વિદ્યાપ્રેમી અંગ્રેજો કંપની તરફથી ભારતનું શાસનકાર્ય ચલાવવા માટે નિયુક્ત થતા, ઘણું કરીને, તેઓ જ આ કાર્યમાં અગ્રેસર બનતા હતા. જો કે પાછળથી તો, ફ્રાંસ અને જર્મનીના વિદ્વાનોએ જ ભારતીય પુરાતત્ત્વમાં મહત્ત્વનાં કામો કર્યાં હતાં અને ભારતીય સાહિત્યની તેમણે જ વધારે સેવા કરી હતી, તો પણ આ કાર્યનો પ્રારંભ કરવાનો પહેલો યશ તો અંગ્રેજોને જ છે. સૌથી પહેલાં સર વીલીયમ જોન્સે આ કાર્યની મંગલમય શરૂઆત કરી હતી. આર્ય સાહિત્યના સંશોધન કાર્ય સાથે સર જોન્સનું નામ સદાને માટે જોડાયલું રહેશે. સર જોન્સ ભારતીયોના મત પ્રમાણે મ્લેચ્છ હતા; અને તેથી તેમને સંસ્કૃત શીખવવામાં ઘણી અડચણો નડી હતી. બ્રાહ્મણોના કટ્ટરપણાને લીધે તેમને પોતાનું અધ્યયન ચાલુ કરવામાં કેવી મુશ્કેલીઓ પડી હતી તેનું રમુજી વર્ણન તેમના જીવનવૃત્તાંતમાં આપેલું છે. આખરે તેઓ આ મુશ્કેલીઓમાંથી પાર થયા અને અપેક્ષિત જ્ઞાન મેળવ્યા બાદ તુરત શકુન્તલા નાટક અને મનુસ્મૃતિનો ઈંગ્રેજી અનુવાદ પ્રકટ કર્યો. તેમના આ અનુવાદો જોઈ ભારતીય સભ્યતાનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે યૂરોપના વિદ્વાનોમાં ઘણી જીજ્ઞાસા ઉત્પન્ન થઈ. જે પ્રજા આવી જાતનું ઉત્કૃષ્ટ સાહિત્ય નિર્માણ કરી શકે છે તે પ્રજાનો ભૂતકાળ કેટલો ભવ્ય હશે તે જાણવાની આકાંક્ષા ત્યાંના લોકોમાં ખૂબ જાગી. સને ૧૭૭૪ ના જાન્યુઆરીની ૧૫ મી તારીખે તત્કાલિન ગવર્નર જનરલ વૉરન હેઇસ્ટીંગની સહાયતાથી, એશિયાખંડના ઈતિહાસ, સાહિત્ય, સ્થાપત્ય, ધર્મ, સમાજ, વિજ્ઞાન આદિ બધા વિષયોની શોધખોળ કરવા માટે સર જાન્સે "એશિયાટિક સોસાયટી" નામની સંસ્થાની શુભ સ્થાપના કરી. એ સંસ્થાની સ્થાપના સાથે જ હિંદુસ્તાનના ઈતિહાસના અન્વેષણનો અમર આરંભ થયો એમ આપણે ઉપકાર સાથે સ્પષ્ટપણે કબુલ કરવું જોઈએ. તે પહેલાં આપણું ઐતિહાસિક જ્ઞાન કેટલું અલ્પ અને નિર્મૂલ હતું તે એક ભોજ-પ્રબંધ જેવા લોકપ્રિય નિબંધના વાંચનથી જ જણાઇ આવે છે. એ પ્રબંધમાં, કાલિદાસ, બાણ, માઘ આદિ ભોજથી અનેક શતાબ્દીઓ પહેલાં અને જુદા જુદા વખતે થઈ ગયેલા કવિઓને પણ ભોજના દરબારી કવિઓ તરીકે વર્ણવી બધાને એક જ દરબારમાં લાવી બેસાડયા છે; તેમ જ સિંધુરાજ કે જે વાક્પતિરાજના મૃત્યુ પછી તેના રાજ્યનો સ્વામી બન્યો હતો, તેને બદલે એ પ્રબંધ લેખકે વાક્પતિરાજને સિંધુરાજની ગાદીએ બેસાડી બાપને દીકરો બનાવી મૂકયો છે. જ્યારે ભોજ જેવા પ્રસિદ્ધ રાજાના ઈતિહાસ-લેખકને પણ તેના વંશ અને સમયના વિષયમાં આટલી બધી અજ્ઞાનતા હતી તો પછી સર્વ સાધારણની અજ્ઞાનતાના વિષયમાં તો કહેવું જ શું ? અશોક જેવા પ્રતાપી સમ્રાટ્ની તો લોકોને સામાન્ય કલ્પના પણ ન હતી. જો કે હિંદુસ્તાનના ઈતિહાસનાં ઘણાંક પુસ્તકો અને બીજાં સાધનો મુસલમાનોના જમાનામાં નષ્ટ થઇ ગયાં હતાં; તો પણ બૌદ્ધકાલીન અનેક સ્તૂપ, સ્તંભ, મંદિર, ગુફા, જલાશય આદિ સ્થાનો; ધાતુ અને પાષાણની દેવી-દેવતાઓની મૂર્તિઓ; ખડકો, શિલાઓ અને તામ્રપત્રો ઇત્યાદિ ઉપર કોતરેલા અસંખ્ય લેખો કે જે ઈતિહાસનાં ખરાં અને મુખ્ય શાધનો મનાય છે, હજીએ અસંખ્ય વિદ્યમાન હતાં; તેથી તેમના ઉપરથી જો

ઇતિહાસ તારવી કાઢવાનો પ્રયત્ન કરવામાં આવ્યો હોત તો આજની માફક તે સમયમાં પણ આપણા ઇતિહાસના ઘણાક અધ્યાયો રચી શકાયા હોત, પરંતુ તેમના તરફ કોઇની દૃષ્ટિ જ ગઈ ન હતી; અને પાછળથી તો જેમ જેમ દેશમાં અરાજકતા અને અજ્ઞાનતા વધતી ગઈ તેમ તેમ લોકો પ્રાચીન કાળની લિપિ અને તેની સાથે સ્મૃતિને પણ ભૂલતા ગયા અને એ રીતે સાધનોની હયાતી હોવા છતાં પણ તેનો કાંઇ ઉપયોગ થયો નહિ.

ઈ. સ. ૧૩૫૬ માં દિલ્હીના સુલતાન ફીરોજશા તુગલકે ટોવરા અને મેરઠથી અશોકના લેખવાળા બે મોટા સ્તંભો ઘણા ઉત્સાહ અને પરિશ્રમ સાથે દિલ્હીમાં અણાવ્યા હતા; (જેમાંનો એક ફીરોજશાહના કટરામાં અને બીજો ' કુશ્ક શિકાર ' પાસે ઉભો કરેલો છે.) એ સ્તંભો ઉપર ખોદેલા લેખોમાં શું લખેલું છે તે જાણવા માટે એ બાદશાહે ઘણી મહેનત કરી અને ઘણા ઘણા પંડિતોને બોલાવી તે વાંચવા માટે કીધું, પણ કોઇનાથી તે વાંચી શકાયા નહિ, અને તેથી અંતે તે બાદશાહને બહુ જ નિરાશા થઈ હતી. સાંભળવા પ્રમાણે અકબર બાદશાહને પણ એ લેખોના મર્મ જાણવાની બહુ જીજ્ઞાસા હતી પરંતુ કોઇપણ મનુષ્ય તે પૂરી કરી શકયો ન હતો. પ્રાચીન લિપિઓને ઓળખવાનું ભૂલી જવાને લીધે જ્યારે કયાંએ કોઈ આવા જૂના શિલાલેખો અથવા તામ્રપત્રો મળી આવતાં ત્યારે લોકો તેમના વિષયમાં વિવિધ કલ્પનાઓ કરતા. કોઇ તેને સિદ્ધિદાયક યંત્ર કહેતા, કોઇ તેને દેવતાનો લખેલો મંત્ર માનતા, અને કોઇ તેને કયાંએ જમીનમાં દાટેલા ધનની નોંધ સમજતા. આવી અજ્ઞાનતાને લીધે લોકોને એવા શિલાલેખો કે તામ્રપત્રોની કાંઈ પણ કિમ્મત જણાતી ન હતી. ભાંગેલાં તૂટેલાં જૂના મંદિરો આદિના શિલાલેખોને તોડી ફોડી કયાંક તેમને પગથીઆંઓમાં ચણી દેવામાં આવતા અને કયાંક ભાંગ અને ચટણી વાટવાના કામમાં લેવાતા. અનેક જૂના તામ્રપત્રો તાંબાના ભાવે કંસારાને ત્યાં વેચવામાં આવતાં. કંસારાઓ તેમને ગાળી–ઉકાળી તેમાંથી નવાં વાસણો તૈયાર કરતા. લોકોની એ અજ્ઞાનતા હજી પણ ચાલુ છે. મેં મારા ભ્રમણ દરમ્યાન અનેક શિલાલેખોની આવી આવી દુર્દશાઓ થયેલી જોઇ છે. અનેક જૈનમંદિરોમાંના શિલાલેખો ઉપર ચોટાડેલો ચૂનો મેં મારા હાથે ઉખાડેલો છે. ચાર વર્ષ ઉપર મુંબઇમાં એક બ્રાહ્મણ, જે ખંભાતની પાસેના એક ગામડામાં રહેતો હતો તે ત્રણ ચાર તામ્રપત્રો લઈને મારી પાસે આવ્યો હતો. તેની જમીન સંબંધે સરકારમાં કોઇ કેસ ચાલતો હતો, તેથી પોતાના ઘરમાં પડી રહેલા એ તાંબાપત્રમાં પોતાની જમીન માટે કંઇ લખેલું હશે એમ ધારી તે વંચાવવા મારી પાસે લાવ્યો હતો. તેમાંના એક પત્રાની વચ્ચોવચ્ચથી બે ઇંચિ વ્યાસ જેટલો ગોળ ટુકડો કાપી લીધેલો હતો. તેથી એ લેખનો કેટલોક મહત્વનો ભાગ જતો રહ્યો હતો. આ સંબંધમાં મેં તેને પૂછ્યું ત્યારે તેણે જવાબ આપ્યો કે થોડાક મહિના ઉપર એક લોટાનું તળીયું બનાવવા માટે એમાંથી એટલો ટુકડો કાપી લેવામાં આવ્યો હતો ! આવા તો અનેક દાખલાઓ હજીએ બને છે. આવી જ દુર્દશા આપણા જુના ગ્રન્થોની થઇ છે. યુગોના યુગો સુધી સારસંભાળ લીધા વગર અંધારી કોટડીઓમાં પડી રહેલા હજારો હસ્તલેખો ઉંદરડાઓના ઉદરમાં ગરક થયા છે, અને છાપરામાંથી

Aho ! Shrutgyanam

પડતા પાણીના ભેજથી સડી–ગળી માટીમાં મળ્યા છે. અનેક ગુરૂઓના નાલાયક ચેલાઓના હાથે પણ આપણા સાહિત્યની ઓછી વિટંબણા નથી થઈ. એક દાખલો આપું. ઇંદોરમાં એક વિદ્વાન્ ગોરજી હતો તેણે કોઈના બે છોકરાઓને ચેલા બનાવવા માટે પાળ્યાપોષ્યા હતા. એ ગોરજી મરી ગયા પછી પાછળથી એ છોકરાઓ તેનો જે વિશાળ પુસ્તકભંડાર હતો તેમાંથી રોજ ફાવે તેમ હજાર બે હજાર પાનાંઓ ફાડી હલવાઈને ત્યાં પડીકાં બાંધવા માટે આપી આવતા અને બદલામાં પાશેર ગરમાગરમ જલેબી લઈ આવી સવારમાં નાસ્તો પાણી કરી મજા માણતા. મને જ્યારે એની ખબર પડી ત્યારે તે હલવાઈ પાસે જઇ બધાં પાનાં તપાસ્યાં જેમાંથી પાંચસો વર્ષ જેટલાં જૂનાં લખેલાં બે ત્રણ જૈનસૂત્રો મને અખંડ મળી આવ્યાં હતાં. પાટણના જૈનભંડારોમાં સિદ્ધરાજ, કુમારપાળ અને તેનાથી યે પહેલાંનાં લખેલાં તાડપત્રોનો તંબાખૂના પાનના ભૂકાની માફક થયેલો ભૂકો મેં મારી આ નરી આંખે જોયો છે. આવી રીતે આપણે આપણી અજ્ઞાનતાને લીધે આપણા ઈતિહાસનાં સાધનો નષ્ટ કર્યાં છે એટલું જ નહિ પણ પરસ્પરની મતાન્ધતા અને સાંપ્રદાયિક અસહિષ્ણુતાના વિકારને વશ થઈને પણ આપણે આપણા સાહિત્યને ઘણી રીતે ખંડિત અને દૂષિત કર્યું છેઃ શૈવોએ વૈષ્ણવોના સાહિત્યનું નિકંદન કર્યું છે, વૈષ્ણવોએ જૈનોના સ્થાપત્યને દૂષિત કર્યું છે; દિગંબરોએ શ્વેતામ્બરોના લેખોને ખંડિત કર્યા છે તથા લુંકાઓએ તપાઓની નોંધો બગાડી છે. એમ પરસ્પર એક બીજાનું એકબીજાએ ઘણું જ ખોદ્યું છે. શોધખોળના વૃત્તાન્તોમાં આવાં અનેક ઉદાહરણો નોંધાયલાં મળી આવે છે. છેવટે મુસલમાન ભાઈઓએ હિન્દુઓનાં સ્વર્ગીય ભુવનોને તોડી ફોડી બેદાન મેદાન કર્યા છે, અને તેમનાંય પવિત્ર ધામોને આખરે કાળે જમીનદોસ્ત કર્યાં છે. આવી જાતની સંકટની પરંપરાઓમાંથી જે બચી રહેલા હતા તેમને સુરક્ષિત રાખવા માટે, જે અર્ધમૃત દશામાં હોય તેની પાસેથી કાંઈક છેવટનું જાણી લેવા માટે અને તેમ કરી ભારતનો ભૂતકાળ કે જે વિસ્મૃતિ અને અજ્ઞાનના પડ નીચે સજ્જડ દબાઈ રહ્યો હતો તેનો ઉદ્ધાર કરવા માટે ઉપર જણાવેલી એશિયાટિક સોસાયટીની સ્થાપના થઇ હતી. એ સોસાયટીની સ્થાપનાના દિવસથી હિન્દુસ્તાનના ઐતિહાસિક અજ્ઞાનાન્ધકારનો ધીરે ધીરે લોપ થવા લાગ્યો. અનેક અંગ્રેજો એ સંસ્થાના ઉદ્દેશને પૂર્ણ કરવા માટે જુદા જુદા વિષયોનું અધ્યયન કરવા લાગ્યા અને તે તે વિષયોના લેખો લખવા લાગ્યા. એ લેખોને પ્રગટ કરવા માટે 'એશિઆટિક રિસર્ચીજ્' નામની એક ગ્રંથમાળા ચાલુ કરવામાં આવી. સને ૧૭૮૮ માં એ માળાનો પ્રથમ ભાગ પ્રકટ થયો. ૧૭૯૭ સુધીમાં એના પાંચ ભાગો પ્રકાશિત થયા. ૧૭૯૮ માં તેનું એક નવીન સંસ્કરણ ઇંગ્લાંડમાં ચોરીથી જ છપાવી દેવામાં આવ્યું. ત્યાં એ ભાગોની એટલી બધી માગણી થઇ કે ૫–૬ વર્ષમાં જ તેની બે આવૃત્તિઓ પ્રકટ થઇ ગઈ, અને એમ. એ. લૅબૉમ નામના એક ફ્રેન્ચ વિદ્વાને, 'રિસર્ચેસ્ એશિયાટિકસ્' ના નામે તેનો ફ્રેન્ચ અનુવાદ પણ પ્રકટ કરી દીધો. સોસાઇટિની એ ગ્રન્થમાળામાં બીજા વિદ્વાનોની સાથે સર વીલીયમ જોન્સે પણ હિંદુસ્તાનના ઈતિહાસના વિષયમાં અનેક ઉપયોગી લેખો લખ્યા.

Aho ! Shrutgyanam

સૌથી પહેલાં તેમણે જ પોતાના એક લેખમાં એ વાત જાહેર કરી હતી કે મેગાસ્થનીસે વર્ણવેલો સાંડ્રોકોટસ્ અને ચંદ્રગુપ્ત મૌર્ય એ બન્ને એક જ વ્યક્તિ છે. પાટલિપુત્રનું જ અપભ્રષ્ટ રૂપ પાલીબોથ્રા છે અને તે આધુનિક પટના જ છે. કારણ કે પટનાની પાસે વહેતા શોણનદને હિરણ્યબાહુ કહેવામાં આવે છે અને મેગાસ્થનીસનું "એરાનોવાઓ" એ જ હિરણ્યબાહુનું અપભ્રષ્ટ નામ છે. આ રીતે ચન્દ્રગુપ્ત-મૌર્યનો સમય સૌથી પહેલાં જોન્સ સાહેબે જ નિશ્ચિત કીધો હતો.

જે અંગ્રેજ સૌથી પહેલાં સંસ્કૃત ભાષા શીખ્યો હતો તેનું નામ ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સ હતું. તેણે જ પ્રથમ દેવનાગરી અને બંગાળી ટાઈપો બનાવ્યા. બદાલ પાસેના સ્તંભ ઉપરનો લેખ સૌથી પ્રથમ તેણે જ ખોળી કાઢયો હતો. એ સિવાય બીજાં પણ કેટલાંક તામ્રપત્રો અને શિલાલેખો ઉપર એણે એશિયાટીક રીસર્ચીસના પ્રારંભના ભાગોમાં કેટલીક નોંધો લખી હતી. ભગવદ્ગીતાનું પહેલ વહેલું ઇંગ્રેજી ભાષાન્તર પણ એ જ અંગ્રેજે કર્યું હતું.

સને ૧૭૯૪ માં સર જોન્સનું મરણ થયું. તેમના પછી તેમના સ્થાન ઉપર હેનરી કોલબ્રુકની સ્થાપના થઇ. કોલબ્રુક અનેક વિષયોમાં પ્રવીણ હતા. તેમણે સંસ્કૃત સાહિત્યનું ઘણું પરિશીલન કર્યું. મૃત્યુના સમયે સર જોન્સ પ્રસિદ્ધ પંડિત જગન્નાથ દ્વારા સંપાદિત "હિન્દુ અને મુસલમાનોના કાયદાઓનો સાર" એ નામક સંસ્કૃત ગ્રન્થનો અનુવાદ કરતા હતા. એ અધુરા અનુવાદને પૂર્ણ કરવાનું કામ કોલબ્રુક સાહેબને સોંપવામાં આવ્યું. તેમણે કેટલાક સંસ્કૃત પંડિતોની સહાયતાથી સને ૧૭૯૭ માં એ કામ પૂરૂં કર્યું. આ પછી તેમણે 'હિન્દુઓના ધાર્મિક રીતરીવાજો' 'ભારતીય માપનું પરિમાણ' 'ભારતીય વર્ણવ્યવસ્થાની ઉત્પત્તિ' 'ભારતવાસીઓની જાતો' આદિ વિષયો ઉપર ગંભીર નિબંધો લખ્યા. એ પછી ૧૮૦૧ માં 'સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત ભાષા' 'સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત છન્દઃશાસ્ત્ર' વિગેરે લેખો લખ્યા. એ જ વર્ષમાં દિલ્હીના લોહસ્તંભ ઉપર કોતરેલી વિશળદેવની સંસ્કૃત પ્રશસ્તિનું અંગ્રેજી ભાષાન્તર પ્રકાશિત કર્યું. સને ૧૮૦૭ માં તેઓ એશિયાટિક સોસાયટીના સભાપતિ બન્યા. એ જ વર્ષમાં તેમણે હિન્દુ જ્યોતિષ એટલે ખગોળ વિદ્યા ઉપર એક ગ્રન્થ લખ્યો; જૈનધર્મ ઉપર એક વિસ્તૃત નિબંધ પ્રકટ કર્યો. કોલબ્રુકે વેદ, સાંખ્ય, ન્યાય, વૈશેષિક, વેદાન્ત, બૌદ્ધ આદિ ભારતનાં બધાં દર્શનો ઉપર મોટા મોટા નિબંધો લખ્યા હતા. તે સિવાય કૃષિ, વાણિજ્ય, સમાજવ્યવસ્થા, સાધારણ સાહિત્ય, કાનૂન, ધર્મ, ગણિત, જ્યોતિષ, વ્યાકરણ આદિ બધા વિષયો ઉપર તેમણે ખૂબ વિસ્તૃત પ્રબંધો લખ્યા હતા. તેમના એ લેખો–નિબંધો–પ્રબંધો આજે પણ તેટલા જ માનથી વંચાય છે. વેબર, બુલ્હર અને મેક્સ મૂલર આદિ વિદ્વાનોએ નિશ્ચિત કરેલા કેટલાક સિદ્ધાન્તો ભ્રમપૂર્ણ સિદ્ધ થઇ ગયા છે પરંતુ કોલબ્રુકે જાહેર કરેલા વિચારો ઘણા જ ઓછા તેમ થવા પામ્યા છે. એ એક સૌભાગ્યની જ વાત હતી કે આપણા સાહિત્યને શરૂઆતમાં જ એક એવો ઉપાસક મળી આવ્યો કે જેણે યુરોપની આગળ આપણા પ્રાચીન

Aho ! Shrutgyanam

તત્ત્વજ્ઞાન અને સાહિત્યને નિષ્પક્ષપાતપૂર્વક મૂળ સ્વરૂપમાં ઉપસ્થિત કર્યું અને જેણે દુનીયાનું ધ્યાન આપણી પ્રાચીન સંસ્કૃતિ તરફ સહાનુભૂતિપૂર્વક આકર્ષ્યું. જો તેણે આવો અપૂર્વ પરિશ્રમ ન કર્યો હોત તો આજે યુરોપમાં સંસ્કૃતનો આટલો પ્રચાર ન થયો હોત. કોલબ્રુક ભારત છોડી જ્યારે ઇંગ્લાંડમાં ગયા ત્યારે ત્યાં પણ તેમણે રૉયલ એશિયાટિક સોસાઈટિની સ્થાપના કરી અનેક વિદ્વાનોને સંસ્કૃતનું અધ્યયન કરવા માટે ઉત્સાહિત કર્યા, અને આંખે અપંગ થતા સુધી બીજા અનેક ઉપાયો દ્વારા સંસ્કૃત સાહિત્યની સતત સેવા કરતા હતા.

જ્યારે એક તરફ કોલબ્રુક સાહેબ સંસ્કૃત સાહિત્યના અધ્યયનમાં ગરક થયા હતા ત્યારે બીજી તરફ બીજા કેટલાક તેમના જાતભાઇઓ હિંદુસ્તાનના જુદા જુદા પ્રાંતોના પુરાતત્ત્વની ગવેષણા કરવામાં મચી રહ્યા હતા. સને ૧૮૦૦ માં માર્કિવસ વેલસ્લિ સાહેબે માઈસોર પ્રાન્તના કૃષિ આદિ વિભાગોની તપાસ કરવા માટે ડૉ. બુકૅનનની નેમણુંક કરી હતી. તેમણે પોતાના કૃષિવિષયક કાર્યની સાથે સાથે તે પ્રાંતની જુની પુરાણી બાબતોનું કેટલુંક જ્ઞાન મેળવ્યું. તેમના કાર્યથી સંતુષ્ટ થઇને કંપનીએ તેમને ૧૮૦૭ માં બંગાળ પ્રાંતના એક વિશિષ્ટ પદ પર યોજ્યા. સાત વર્ષ પર્યંત તેમણે બિહાર, શાહાબાદ, ભાગલપુર, ગોરખપુર, દિનાજપુર, પુરનિયા, રંગપુર અને આસામમાં કામ કીધું. જો કે તેમને પ્રાચીન સ્થાનો વિગેરેની શોધખોળનું કામ સોંપવામાં આવ્યું ન હતું તો પણ તેમણે ઈતિહાસ અને પુરાતત્ત્વની ખૂબ ગવેષણા કરી. તેમની આ ગવેષણાથી ઘણો લાભ થયો. અનેક અજ્ઞાત ઐતિહાસિક બાબતોની માહીતી મળી. આમ પૂર્વીય ભારતની પ્રાચીન વસ્તુઓની શોધખોળ સૌથી પ્રથમ એમણે જ કરી.

પાશ્ચમ ભારતની પ્રસિદ્ધ કેનેરી ગુફાઓનું વર્ણન સૌથી પ્રથમ સાલ્ટ સાહેબે અને હાથીગુફાઓનું વર્ણન રસ્કિન સાહેબે લખ્યું. આ બન્ને વર્ણનો બોમ્બે ટ્રાંઝેકશન નામના પુસ્તકના પહેલા ભાગમાં પ્રકાશિત થયાં. એ જ પુસ્તકના ત્રીજા ભાગમાં સાઈક્સ સાહેબે બીજાપુર (દક્ષિણ) નું વર્ણન લોકોની આગળ મૂકયું.

છેક દક્ષિણ હિંદુસ્તાનનું વર્ણન ટૉમસ ડેનિયલ નામના સાહેબે મેળવવું શરૂ કર્યું. તે જ વખતે દક્ષિણમાં કર્નલ મેકેન્ઝીએ પણ પુરાતત્ત્વ-વિદ્યાના અભ્યાસનો પ્રારંભ કીધો હતો. તે સર્વે ડિપાર્ટમેન્ટમાં નોકર હતા. તેમણે અનેક પ્રાચીન ગ્રન્થો અને શિલાલેખોનો સંગ્રહ કર્યો હતો. મેકેન્ઝી સાહેબ કેવળ સંગ્રહકાર હતા. તેઓ ગ્રન્થો અને લેખોને વાંચી શકયા ન હતા. પરંતુ તેમના પછીના શોધકોને તેમના આ સંગ્રહથી ઘણો લાભ થયો હતો. દક્ષિણના કેટલાક અનતિ-પ્રાચીન શિલાલેખોનાં ભાષાન્તરો ડૉ. મિલે કીધાં હતાં. આવી જ રીતે રાજપુતાના અને મધ્ય ભારતના કેટલાક ભાગોનું જ્ઞાન કર્નલ ટૉડે મેળવ્યું અને એ પ્રદેશોમાંની અનેક જુની પુરાણી વસ્તુઓની શોધખોળ તેમણે કરી.

આ પ્રમાણે જુદા જુદા વિદ્વાનો દ્વારા ભારતના ભિન્ન ભિન્ન પ્રાંતોના વિષયમાં ઘણુંક જ્ઞાન મેળવવામાં આવ્યું ને ઘણીક વસ્તુઓ જાણવામાં આવી; પરંતુ પ્રાચીન લિપિ-

Aho ! Shrutgyanam

નું સ્પષ્ટ જ્ઞાન હજી કોઈને મળેલું ન હોવાથી ભારતનાં પ્રાચીન ઐતિહાસિક સાધનોના ભંડાર ઉપર હજી તેવો ને તેવો જ અંધકારનો પડદો પડેલો હતો. જુદા જુદા વિદ્વાનોએ અનેક પુરાતન સિક્કાઓ અને શિલાલેખોનો ઘણો સારો સંગ્રહ મેળવી લીધો હતો ખરો, પણ લિપિજ્ઞાનના અભાવે તેમનો ત્યાં સુધી કાંઈ ઉપયોગ થયો ન હતો.

ભારતવર્ષના પ્રાચીન ઇતિહાસના પ્રથમ અધ્યાયનો ખરો પ્રારંભ ઈ. સ. ૧૮૩૭થી થાય છે. એ વર્ષમાં એક નવીન નક્ષત્રનો ઉદય થાય છે કે જે ભારતીય પુરાતત્ત્વ વિદ્યા ઉપર પડેલા પડદાને દૂર ખસેડે છે. એશિયાટિક સોસાઇટિની સ્થાપનાના દિવસથી તે ૧૮૩૪ સુધીમાં પુરાતત્ત્વ સંબંધી ખઇ કામ બહુ જ ઓછું થયું હતું. ત્યાં સુધી વિશેષ કરીને જુના ગ્રંથોના અનુવાદો જ થતા રહ્યા હતા. શિલાલેખો કે જે ભારતના ઇતિહાસના એક માત્ર ખરા સાધન તરીકે ગણાય છે તેમના સંબંધમાં ઘણું જ ઓછું કાર્ય થયું હતું. કારણ એ હતું કે પ્રાચીન લિપિનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મેળવવું અદ્યાપિ બાકી હતું.

મેં ઉપર એક ઠેકાણે જણાવ્યું છે તેમ પહેલ વહેલાં સંસ્કૃત ભાષા શીખનાર અંગ્રેજ ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સ હતો, અને સૌથી પ્રથમ શિલાલેખ તરફ ધ્યાન આપનાર પણ તે જ હતો. તેણે ઈ. સ. ૧૭૮૫ માં દીનાજપુર જીલ્લાના બદાલ નામક સ્થાન પાસે મળેલા એક સ્તંભ ઉપરનો લેખ વાંચ્યો હતો જે બંગાળના રાજા નારાયણ પાલના સમયનો લખેલો હતો. તે જ વર્ષમાં એક હિંદુસ્થાની પંડિત નામે રાધાકાન્ત શર્માએ ટોમરાવાળા દિલ્હીના અશોક સ્તંભ ઉપર ખોદેલા અજમેરના ચૌહાણ રાજા અનલદેવના પુત્ર વીસલદેવના ત્રણ લેખો વાંચ્યા જેમાંના એકની મિતિ 'સંવત્ ૧૨૨૦ વૈશાખ સુદી ૫' છે. આ લેખોની લિપિ બહુ જુની ન હોવાથી સરલતાની સાથે તે વાંચી શકાયા હતા. પરંતુ તે જ વર્ષમાં જે. એચ. હેરિંગ્ટને બુદ્ધગયા પાસે આવેલી નાગાર્જુની અને બારાબાર ગુફાઓમાં, ઉપરના લેખો કરતાં વધારે જુના એવા મૌખરી વંશના રાજા અનંતવર્માના ત્રણ લેખો ખોળી કાઢયા હતા કે જેમની લિપિ ગુપ્તકાલીન લિપિથી ઘણે અંશે મળતી હોવાથી તેમનું વાચન કઠિણ થઇ પડયું હતું. પણ ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સે ચાર વર્ષ સુધી સતત પરિશ્રમ લઇ તે ત્રણે લેખોને વાંચી લીધા અને તેમ કરી તેણે ગુપ્તલિપિની લગભગ અડધી વર્ણમાળાનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લીધું.

ગુપ્તલિપિ એટલે શું એની તમને ખબર નહિ હોય તેથી તેનો સહજ ખુલાસો અહિં કરી દઉં. હાલમાં જે લિપિને આપણે દેવનાગરી (અથવા બાળબોધ)ના નામે ઓળખીએ છીએ, તે સાધારણ રીતે ત્રણ અવસ્થાઓમાંથી પસાર થયેલી છે. આ ચાલુ આકૃતિ પૂર્વે તેની જે આકૃતિ હતી તેને કુટિલ લિપિના નામે ઓળખવામાં આવે છે. એ આકૃતિનો સમય સાધારણ સમજવાની ખાતર ઈ. સ. ના ૬ ઠ્ઠા સૈકાથી તે ૧૦ મા સૈકા સુધીનો માની લેવો જોઇએ. તેની પહેલાંની આકૃતિને ગુપ્તલિપિના નામે ઓળખવામાં આવે છે, જેનો સામાન્ય સમય ગુપ્તવંશનો રાજત્વકાળ ગણાય છે. તે પહેલાંની આકૃતિવાળી લિપિ બ્રાહ્મીલિપિ કહેવાય છે. અશોકના લેખો આ જ લિપિમાં લખાયલા છે. એનો સમય ઈ. સ. પૂ. ૫૦૦ થી ઈ. સ. ૩૫૦ સુધીનો મનાય છે.

Aho ! Shrutgyanam

સન ૧૮૧૮ થી ૧૮૨૩ લગી કર્નલ જેમ્સ ટૉડે રાજપુતાનાના ઇતિહાસની શોધખોળ કરતાં રાજપુતાના અને કાઠિયાવાડમાંથી કેટલાક પ્રાચીન લેખોનો પત્તો મેળવ્યો હતો. જેમાંના ૭ મી શતાબ્દીથી લઈ ૧૫ મી શતાબ્દી સુધીના અનેક લેખો તે કર્નલના ગુરૂ યતિ જ્ઞાનચંદ્રજીએ વાંચ્યા હતા, અને જેનો સારાંશ યા અનુવાદ ઉક્ત સાહેબે પોતાના "રાજસ્થાન" નામક પ્રસિદ્ધ ઇતિહાસમાં આપ્યો છે,

ઈ. સ. ૧૮૨૮ માં બી. જી. બેબીંગ્ટને મામલ્લપુરના કેટલાક સંસ્કૃત અને તામીલ લેખો વાંચી તેમની વર્ણમાલાઓ તૈયાર કીધી. તેવીજ રીતે વૉલ્ટર ઇલિયટે પ્રાચીન કાનડી અક્ષરોનું જ્ઞાન મેળવી તેમની વિસ્તૃત વર્ણમાળાઓ પ્રકાશિત કરી.

ઇ. સ. ૧૮૩૪ માં કેપ્ટન ટ્રૉયરે પ્રયાગના અશોકસ્તંભ ઉપર ખોદેલા ગુપ્તવંશી રાજા સમુદ્રગુપ્તના લેખનો કેટલોક ભાગ વાંચ્યો, અને પાછળથી તે જ વર્ષમાં ડૉ. મિલે તે લેખને સંપૂર્ણ વાંચી ૧૮૩૭ માં ભિટારીના સ્તંભ ઉપરનો સ્કંદગુપ્તનો લેખ પણ ઉકેલી લીધો.

૧૮૩૫ માં ડબલ્યુ. એચ. વૉથને વલ્લભીનાં કેટલાંક દાનપત્રો ઉકેલ્યાં.

૧૮૩૭-૩૮ માં જેમ્સ પ્રિન્સેપે દીલ્હી, કમાઉ અને એરણના સ્તંભો ઉપરના, સાંચી અને અમરાવતીના સ્તૂપો ઉપરના, તેમ જ ગિરનારના ખડક ઉપરના ગુપ્તલિપિના બધા લેખો વાંચી કાઢયા.

સાંચી સ્તૂપના ચંદ્રગુપ્તવાળા મહત્ત્વના લેખ સંબંધે જે પ્રિન્સેપે ૧૮૩૪ માં લખ્યું હતું કે 'પુરાતત્ત્વના અભ્યાસીઓ હજી સુધી સાંચીના શિલાલેખોમાં શું લખ્યું છે એ કાંઇ પણ જાણી શકયા નથી.' તેજ પ્રિન્સેપ ૧૮૩૭ માં એ બધા લેખોને યથાર્થ અનુવાદ સાથે પ્રકટ કરવાની સંપૂર્ણ સફળતા મેળવી શકયા હતા.

આ રીતે કેપ્ટન ટ્રોયર, ડૉ. મિલ અને જેમ્સ પ્રિન્સેપના સતત પરિશ્રમથી ચાર્લ્સ વિલ્કીન્સે જે ગુપ્તલિપિની અપૂર્ણ વર્ણમાળા તૈયાર કરી હતી તે સંપૂર્ણ થઇ અને તેથી ગુપ્તવંશી રાજાઓના સમય સુધીના શિલાલેખો, તામ્રપત્રો, શિક્કાઓ વિગેરે વાંચવામાં પૂરેપૂરી સફળતા અને સરળતા મળી.

હવે બધી લિપિઓની જે આદિજનની બ્રાહ્મી લિપિ તેનો વારો આવ્યો. તે લિપિ ગુપ્ત લિપિથી પ્રાચીન હોવાના સબબે તેનું એકદમ ઉકેલવું કઠિણ હતું. એ લિપિનાં દર્શન તો ઈ. સ. ૧૭૯૫ માંજ શોધકોને થઈ ગયાં હતાં. એ સાલમાં સર ચાર્લ્સ મૅલેટે ઇલોરાની ગુફાઓમાંના કેટલાક નાના નાના બ્રાહ્મી લેખોની નકલો સર વિલિયમ જોન્સ પર મોકલી હતી. તેમણે એ નકલોને મેજર વિલ્ફોર્ડ કે જે તે વખતે કાશીમાં હતો તેના તરફ, ત્યાંના કોઇ પંડિત મારફત, ઉકેલવા માટે રવાના કરી. પ્રથમ તો ત્યાં તે ઉકેલનાર કોઇ મળ્યો નહિ પણ પાછળથી એક ચાલાક બ્રાહ્મણે કેટલીક પ્રાચીન વર્ણમાળાઓનું એક કૃત્રિમ પુસ્તક તે બિચારા જીજ્ઞાસુ મેજરને બતાવી તે લેખોને પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે ખોટી રીતે વાંચી બતાવ્યા અને બદલામાં ખૂબ દક્ષિણા મેળવી. વિલ્ફોર્ડ સાહેબે આવી

Aho ! Shrutgyanam

કલ્પિત રીતે વાંચેલા લેખો ઉપર પૂર્ણ વિશ્વાસ આણી તે બ્રાહ્મણના સમજાવ્યા પ્રમાણે તે લેખોનું ઇંગ્રેજી ભાષાન્તર પણ કરી લીધું અને પછી લેખોની નકલો સાથે તે ભાષાન્તર સર જોન્સ ઉપર મોકલી આપ્યું. આ સંબંધમાં મેજર વિલ્ફોર્ડે સર જોન્સ ઉપર જે પત્ર લખ્યો હતો તેમાં તે બહુ ઉત્સાહ પૂર્વક લખે છે કે—" આ સાથે કેટલાક લેખોની નકલો તેના ખુલાસા સાથે મોકલવાની રજા લઉં છું. પ્રથમ તો મેં એ લેખોને કોઇ દિવસે પણ ઉકેલી શકવાની આશા સમૂળગી છોડી દીધી હતી, કારણ કે હિંદુસ્તાનના આ ભાગમાં (બનારસ તરફ) જુના લેખો મળતા નથી, તેથી તે ઉકેલવાની કળાની બુદ્ધિની અજમાયશ કરવાની કે શોધ કરવાની તક જ મળી ન હતી. તેમ છતાં, અને મારા ઘણા પ્રયત્નો નિષ્ફળ ગયા પછી, આખરે સદ્ભાગ્યે, એક વૃદ્ધ ગુરૂ મને મળી આવ્યો જેણે એ લખોને વાંચવાની કુંચી બતાવી અને જુના જમાનામાં હિંદુસ્તાનના જુદા જુદા ભાગોમાં જે લિપિઓ ચાલતી હતી તેનું એક સંસ્કૃત પુસ્તક તેણે મારી પાસે રજુ કર્યું. આ એક ખરેખર સૌભાગ્યસૂચક શોધ થઈ છે, જે આપણને ભવિષ્યમાં ઘણી ઉપયોગી થઈ પડશે." મે. વિલ્ફોર્ડની આ " શોધ " માટે ઘણાં વર્ષો સુધી કોઈને શંકા સુદ્ધાં થઈ નહિ. કારણ કે સને ૧૮૨૦ ના અરસામાં, ખંડગિરિના ખડક ઉપરના એજ લિપિવાળા લેખના સંબંધમાં લખતાં મી. સ્ટર્લિંગ લખે છે કેઃ—" જૂના લેખો ઉકેલવાની કુંચી એક વિદ્વાન્ બ્રાહ્મણ પાસેથી મેળવી મે. વિલ્ફોર્ડનો વિદ્વત્તા અને બુદ્ધિએ ઈલોરા અને સાલ્સેટના લેખો કે જે આ જ લિપિમાં લખાયલા છે તેનો કેટલાક ભાગ ઉકેલ્યો હતો. ત્યાર પછી દિલ્હી અને બીજાં સ્થળોના તેવા લેખો ઉકેલવામાં તે કુંચીનો કાંઇ પણ ઉપયોગ કરવામાં આવ્યો નથી તે દિલગીર થવા જેવું છે. " મી. પ્રિન્સેપને ૧૮૩૩ માં ખરી કુંચી જડી, તે પહેલાં આસરે એક વર્ષ ઉપર તેમણે પણ આવી જ રીતે મે. વિલ્ફોર્ડની કુંચીનો ઉપયોગ ન કરવા બાબત પોતાની દિલગીરી પ્રકટ કરેલી છે. એક શોધક અને જીજ્ઞાસુ વિદ્વાનૂને આવી દીલગીરી થવી સ્વાભાવિક છે. પણ વિદ્વાન્ બ્રાહ્મણની બતાવેલી કુંચીનો વધારે ઉપયોગ ન કરવામાં આવ્યો તેમાં આશ્ચર્ય માનવા જેવું કશું ન હતું. કારણ કે જેમ પુરાતત્ત્વની બીજી શોધખોળોમાં મે. વિલ્ફોર્ડની શ્રધ્ધાનું શ્રાધ્ધ કરનારા યુક્તિબાજ બ્રાહ્મણોની ચાલાકીનો તે બીચારો ભોગ થઇ પડયો હતો તેમ આ બાબતમાં પણ બન્યું હતું. એ ગમે તેમ હો, પરંતુ એટલું તો ચોક્કસ છે કે મે. વિલ્ફોર્ડની કહેવાતી શોધ એક સંપૂર્ણ ભ્રમણા હતી. કારણ કે તેમણે વાંચેલો લેખપાઠ તદ્દન કલ્પિત હતો અને તેનો તેમણે કરેલો તરજુમો પણ તેવો જ નિર્મૂળ હતો,—યુધિષ્ઠિર અને પાંડવોના વનવાસ અને નિર્જન જંગલોમાં પરિભ્રમણની ગાથાઓનો તે ન સમજાય તેવો બ્રહ્મગોટાળો હતો. એ ધૂર્ત બ્રાહ્મણે બતાવેલા અગડં બગડં અર્થનું અનુસન્ધાન કરવા માટે વિલ્ફોર્ડે કલ્પના કરી હતી કે પાંડવો વનવાસ દરમ્યાન મનુષ્યોના સંસર્ગમાં ન આવવાના કરારથી બંધાયલા હતા. તેથી તેમના વિદુર અને વ્યાસ જેવા સ્નેહી અને સંબંધિયોએ તેમને સાવધાન રહેવાની સૂચના આપવા માટે આ યુક્તિઓ કરી હતી. તેઓ જંગલોમાં ખડકો

Aho ! Shrutgyanam

અને શિલાઓ ઉપર ટુંકા ટુંકા અને સહેલાઇથી ન સમજાય તેવાં વાક્યો, પહેલેથી જ સંકેત કરી રાખેલી લિપિમાં લખી, પોતાનો હેતુ પાર પાડતા રહેતા હતા. અંગ્રેજો પોતાને બહુ જ બુદ્ધિમાન્ અને ચાલાક માને છે અને હસતે મુખે તેઓ દુનીઆના બીજા ભોળા લોકોને ઠગવાની પૂરી કળા જાણે છે, પરંતુ તેઓ પણ ભારતવર્ષની સ્વર્ગપુરી ગણાતી કાશીના "વૃદ્ધ ગુરૂ" ની ઝોળીમાં એક વખત આવી રીતે મૂકાઈ જતા હતા. અસ્તુ.

એશિયાટિક સોસાયટિની પાસે દિલ્લી અને અલાહાબાદના સ્તંભો તથા ખંડગિરિના ખડકો ઉપરના લેખોની નકલો એકઠી થએલી હતી, પરંતુ વિલ્ફોર્ડ સાહેબની 'શોધ' નિષ્ફળ જવાથી કેટલાંએ વર્ષો સુધી તે લેખોને ઉકેલવાનો પ્રયત્ન થયો નહિ. એ લેખોના મર્મને જાણવાની ઉત્કટ જિજ્ઞાસા રહેવાને લીધે મી. જેમ્સ પ્રિંસેપે ઇ. સ. ૧૮૩૪–૩૫ માં અલાહાબાદ, રધિઆ અને મથિઆના સ્તંભો ઉપરના લેખોની છાપો મંગાવી, અને તેમને દિલ્લીના લેખની સાથે મુકી–એ જાણવાની કોશીશ કીધી કે તેમાં કોઈ શબ્દ એક સરખો છે કે નહિ. આ પ્રમાણે ચારે લેખોને પાસે પાસે મુકવાથી તુરત તેમને જણાયું કે એ ચારે લેખો એક જ જાતના છે. આથી પ્રિંસેપનો ઉત્સાહ વધ્યો અને પોતાની જિજ્ઞાસા પૂર્ણ થવાની તેમને આશા બંધાઈ. પછી તેમણે અલાહાબાદ–સ્તંભ ઉપરના લેખના ભિન્ન ભિન્ન આકૃતિવાળા અક્ષરો જુદા તાર્વ્યા, જેથી તેમને સમજાયું કે ગુપ્ત લિપિના અક્ષરોની માફક તેના પણ કેટલાક અક્ષરો સાથે સ્વરોની માત્રાઓનાં જુદાં જુદાં પાંચ ચિન્હો લાગેલાં છે. પછી તેમણે એ પાંચે ચિન્હોને એકત્ર કરી પ્રકટ કર્યા. આથી કેટલાક વિદ્વાનોને એ અક્ષરોની બાબતમાં ગ્રુનાની હોવાનો જે ભ્રમ હતો તે દૂર થઈ ગયો.

અશોકના લેખોની લિપિ સાધારણ રીતે જોનારને ઇંગ્રેજી અથવા ગ્રીક લિપિની ભ્રાંતિ ઉત્પન્ન કરી શકે છે. ટૉમ કોરિએટ નામના મુસાફરે અશોકના દિલ્લીવાળા સ્તંભના લેખને જોઈ એલ્. વ્હીટરને એક પત્રમાં લખ્યું હતું કે "હું આ દેશના દિલ્લી નામના શહેરમાં આવ્યો છું કે જ્યાં આગળ મહાન્ અલેકઝાંડરે હિન્દુસ્થાનના રાજા પોરસને હરાવ્યો હતો, અને પોતાના વિજયની સ્મૃતિમાં તેણે એક મોટો સ્તંભ ઉભો કરાવ્યો હતો જે અદ્યાપિ અહિં મૌજુદ છે." પાદરી એડવર્ડ ટેરીએ લખ્યું છે કે— "ટૉમ કોરિએટે મને કીધું હતું કે તેણે દિલ્લીમાં ગ્રીક લેખવાળો એક સ્થંભ જોયો છે જે મહાન્ અલેકઝાંડરની સ્મૃતિ માટે ત્યાં સ્થાપિત કરવામાં આવ્યો હતો." આવી રીતે બીજા પણ લેખકોએ એ લેખને ગ્રીક લેખ માન્યો હતો.

ઉક્ત રીતે સ્વરોનાં ચિન્હોને ઓળખી લીધા પછી મી. પ્રિંસેપે અક્ષરોને ઓળખવાનો ઉદ્યોગ શરૂ કર્યો. તેમણે પ્રથમ પ્રત્યેક અક્ષરને ગુપ્ત લિપિના અક્ષર સાથે મેળવવવાનો અને જે તેની સાથે બરાબર મળતો થાય તેને ક્રમથી વર્ણમાળામાં દાખલ કરવાનો ક્રમ લીધો. આ રીતે ઘણાક અક્ષરો તેમની જાણમાં આવી ગયા.

Aho ! Shrutgyanam

પાદરી જેમ્સ સ્ટીવન્સને પણ પ્રિંસેપની માફક આ જ શોધમાં અનુરક્ત થઈ 'क', 'ज', 'थ', 'प', અને 'व' એટલા અક્ષરો ઓળખી કાઢયા, અને આ અક્ષરોની સહાયતાથી તેમણે લેખોને પુરા વાંચી તેનો અનુવાદ કરવાનો મનોરથ કીધો. પરંતુ કાંઈક તો અક્ષરોને ઓળખવામાં ભૂલ થઈ જવાથી, કાંઇક વર્ણમાળાની અપૂર્ણતાથી અને કાંઇક એ લેખોની ભાષાને સંસ્કૃત સમજવાથી તેમનો એ ઉદ્યોગ પૂરેપૂરો સફળ થયો નહિ. આથી પ્રિંસેપને નિરાશા થઇ નહિ. ઈ. સ. ૧૮૩૫ માં પ્રસિદ્ધ પુરાતત્ત્વજ્ઞ પ્રો. લૅસ્સને એક બાક્ટ્રિઅન ગ્રીક શિક્કા પર આ જ અક્ષરોમાં લખેલું ઍગૅથૅક્લિસનું નામ વાંચ્યું, પરંતુ ૧૮૩૭ ની શરૂઆતમાં જ મી. પ્રિંસેપે પોતાના અલૌકિક સ્ફુરણદ્વારા એક નાનો સરખો **दान** શબ્દ શોધી કાઢયો હતો જેણે એકદમ આ સઘળી ગૂઢ બાબતોનો નિકાલ કરી દીધો. હકીકત આ પ્રમાણે છેઃ–ઈ. સ. ૧૮૩૭ માં મિ. પ્રિંસેપે સાંચીસ્તૂપના સ્તંભો આદિ ઉપર ખોદેલા કેટલાક નાના લેખોની છાપોને એકત્ર કરીને જોઇ તો તે બધામાં અંતે બે અક્ષરો એક જ સરખા જણાયા અને તેની પહેલાં **स** અક્ષર લખેલો દેખાયો જેને પ્રાકૃતભાષાનો છટ્ઠી વિભક્તિનો પ્રત્યય (સંસ્કૃત **स्य** ના બદલે) માની એ અનુમાન કર્યું કે બધા લેખો જુદા જુદા મનુષ્યો દ્વારા કરાએલા દાનનું સૂચન કરતા હોવા જોઇએ. છેલ્લા બધે એક સરખા જણાતા બે અક્ષરો કે જે ઓળખાતા ન હતા, તેમાંથી પહેલા અક્ષરની સાથે **'ा' आ** ની માત્રા અને બીજાની સાથે અનુસ્વારનું ચિન્હ લાગેલું હોવાથી પહેલો અક્ષર તે **दा** અને બીજો તે **नं** હોઈ એમ એ શબ્દ **दानं** જ હોવો જોઇએ એમ તેમણે નિશ્ચય કીધો. આ અનુમાનાનુસાર **द** અને **न** ને ઓળખવાથી એ આખી વર્ણમાળા પૂરી થઇ અને તેના આધારે દિલ્હી, આલાહાબાદ, સાંચી, મથિયા, રધિયા, ગિરનાર, ધૌલી આદિના અશોકના બધા લેખો સરલતા પૂર્વક વાંચી લેવાયા. એ વાંચનથી એ પણ નિશ્ચય થઈ ગયો કે એ લેખોની ભાષા જેમ અત્યારસુધી સંસ્કૃત સમજવામાં આવતી હતી તે ન હતી, પરંતુ તે ઉક્ત સ્થાનોની પ્રચલિત પ્રાચીન દેશભાષા હતી (જેને તે વખતે સાધારણ રીતે પ્રાકૃતના નામે ઓળખવામાં આવતી.)

આવી રીતે બ્રાહ્મી લિપિનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મેળવવામાં આવ્યું અને તેના યોગે ભારતના જૂનામાં જૂના લેખો વાંચવામાં સંપૂર્ણ સફળતા મળી.

હવે એક તેવી જ બીજી જૂની લિપિની શોધના વિષયમાં કાંઈક જણાવું છું કે જેનું જ્ઞાન પણ એ જ સમયમાં મેળવવામાં આવ્યું હતું. એ લિપિનું નામ ખરોષ્ઠી છે. ખરોષ્ઠી લિપિ એ આર્ય લિપિ નથી પણ અનાર્ય લિપિ છે. તેને સેમેટિક્ લિપિના કુટુંબની અરમઈક લિપિમાંથી નિકળેલી માનવામાં આવે છે. એ લિપિની લખવાની પદ્ધતિ ફારસી લિપિ જેવી છે, અર્થાત્ ડાબી બાજુથી જમણી બાજુ તરફ લખતા જવાની છે. એ લિપિ ઇ. સ. પૂર્વે ત્રીજી–ચોથી શતાબ્દીમાં માત્ર પંજાબના જ કેટલાક ભાગમાં પ્રચલિત હતી. શાહબાજગઢી અને મન્સેરાના ખડકો ઉપરના અશોકના લેખો આ લિપિમાં ખોદેલા છે. તે સિવાય શક, ક્ષત્રપ, પાર્થિઅન અને કુશાનવંશી રાજાઓના સમયના કેટલાક બૌદ્ધ

Aho ! Shrutgyanam

લેખો તથા બાક્ટ્રિઅન, ગ્રીક, શક, ક્ષત્રપ વિગેરે રાજવંશોના કેટલાક શિક્કાઓ ઉપરના લેખો આ લિપિમાં કોતરેલા મળી આવે છે. તેથી ભરતીય પુરાતત્ત્વજ્ઞોને આ લિપિના જ્ઞાનની પણ ખાસ આવશ્યકતા હતી.

કર્નલ જેમ્સ ટૉડે બાક્ટ્રિઅન, ગ્રીક, શક, પાર્થિઅન અને કુશાનવંશી રાજાઓના શિક્કાઓનો મોટો સંગ્રહ કર્યો હતો, જેની એક બાજુએ ગ્રીક અને બીજી બાજુએ ખરોષ્ઠી અક્ષરોના લેખો કોતરેલા હતા. જનરલ વેંટુરાએ સને ૧૮૩૦ માં માનિકિઆલ સ્તૂપ ખોદાવ્યો તો તેમાંથી ખરોષ્ઠી લિપિના કેટલાએક શિક્કાઓ અને બે લેખો મળી આવ્યા. આ શિવાય સર અલેકઝેંડર બર્ન્સ આદિ પ્રાચીન શોધકોએ પણ એવા અનેક શિક્કાઓ એકત્ર કર્યા હતા જેની એક બાજુના ગ્રીક અક્ષરો તો વાંચી શકાતા હતા પરંતુ બીજી બાજુના ખરોષ્ઠી અક્ષરોને ઉકેલવાનું કાંઈ પણ સાધન ન હતું. એ અક્ષરો માટે ભિન્ન ભિન્ન કલ્પનાઓ થવા લાગી હતી. સને ૧૮૨૪ માં કર્નલ ટૉડે કડફિસેસના શિક્કા ઉપરના આ અક્ષરોને 'સસેનીઅન્' અક્ષરો જાહેર કર્યાં. ૧૮૩૩ માં ઍપોલોડોંટસ્ના શિક્કા ઉપરના આ જ અક્ષરોને પ્રિંસેપે "પહલવી" અક્ષરો માન્યા. એક બીજા શિક્કા ઉપરની આજ લિપિને તથા માનિકિઆલ સ્તૂપના લેખની લિપિને પણ પાલી એટલે બ્રાહ્મી લિપિ માની, અને એની આકૃતિ જરા વાંકી હોવાથી એ અનુમાન કર્યું કે છાપેલી અને ચોપડામાં લખેલી ગુજરાતી લિપિમાં જેમ અંતર હોય છે તેમ જ અશોકની દિલ્લી આદિ સ્તંભોવાળી અને આ લિપિમાં અંતર છે. પરંતુ પાછળથી સ્વયં પ્રિન્સેપને જ આ અનુમાન અનુચિત લાગવા માંડયું. ૧૮૩૪ માં કેપ્ટન કોર્ટને એક સ્તૂપમાંથી આ જ લિપિનો લેખ મળ્યો જેને જોઇને પ્રિંસેપે ફરી આ અક્ષરોને "પહલવી" અક્ષરો કલ્પ્યા. પરંતુ એ જ વર્ષમાં શોધક મી. મેસનને કાબૂલની ઘાટીમાં શોધખોળ કરતાં અનેક એવા શિક્કાઓ મળી આવ્યા જેના ઉપર ખરોષ્ઠી અને ગ્રીક બન્ને લિપિમાં રાજાઓનાં નામો લખેલાં હતાં. મેસન સાહેબે જ સૌથી પ્રથમ મિનેંડો, અપોલડૌટો, અરમાઈઓ, બાસિલિઓ અને સોટિરો વગેરે નામો વાંચ્યાં. પરંતુ આ તેમની માત્ર કલ્પના હતી. તેમણે આ નામો પ્રિંસેપ સાહેબને લખી મોકલ્યાં. આ કલ્પનાને સત્ય કરવાનો યશ પ્રિન્સેપ સાહેબના ભાગ્યમાં જ હતો. તેમણે મેસન સાહેબના સંકેતો અનુસાર શિક્કાઓ વાંચવા માંડયા તો તેમાંથી બાર રાજાઓનાં તથા છ પદ્બવીઓનાં નામો તેમને મળી આવ્યાં.

આવી રીતે ખરોષ્ઠી લિપિના ઘણાક અક્ષરોનો બોધ થયો, અને સાથે એ પણ જ્ઞાન થયું કે આ લિપિ ડાબી બાજુથી જમણી બાજુએ વંચાય છે. તેથી એ પણ નિશ્ચય થયો કે આ લિપિ સેમેટિક વર્ગની છે, પણ તે સાથે તેની ભાષા કે જે વાસ્તવમાં બ્રાહ્મી લેખોની ભાષા માફક પ્રાકૃત જ હતી, તેને પહલવી માની લેવાની ભૂલ કરવામાં આવી. આ પ્રકારે ગ્રીક લેખોની સહાયતાથી ખરોષ્ઠી લિપિના ઘણાક અક્ષરો તો જણાઇ ગયા પણ ભાષાના વિષયમાં ભ્રાન્તિ થવાથી, પહલવીના નિયમો તરફ ધ્યાન રાખી લેખોને વાંચવાનો ઉદ્યોગ કરવાથી અક્ષરોને ઓળખવાની અશુદ્ધતા આવવા લાગી, જેથી થોડાક સમય પર્યંત તેનું

Aho ! Shrutgyanam

કાર્ય અટકી પડયું. પરંતુ ૧૮૩૮ માં બે બાક્ટ્રીઅન ગ્રીક શિક્કાઓ ઉપર પાલી લેખો જોતાં જ બીજા શિક્કાઓની ભાષા પણ તે જ હશે એમ માની તેના નિયમાનુસાર તે લેખો વાંચવાથી પ્રિંસેપનું કામ આગળ ચાલ્યું; અને એકંદર ૧૭ અક્ષરો તેમણે તેના ખોળી કાઢયા. પ્રિંસેપની માફક મી. નૉરિસે પણ આ વિષયમાં કેટલીક શોધ કરી એ લિપિના બીજા છ અક્ષરો નવા શોધી કાઢયા. બાકી રહેલા થોડાક અક્ષરો જનરલ કનિંગહામે ઓળખી લીધા, અને તેમ કરી ખરોષ્ઠીની સંપૂર્ણ વર્ણમાળા તૈયાર કરી લેવામાં આવી.

ભારતવર્ષની જૂનામાં જૂની લિપિઓનું જ્ઞાન મેળવવાનો સામાન્ય ઇતિહાસ આ પ્રમાણે છે. ઉપરોકત વર્ણનથી આપણને જણાય છે કે લિપિ વિષયક શોધખોળમાં મી. પ્રિંસેપની કામગિરી ઘણી મોટી છે. એશિયાટિક સોસાઇટી તરફથી બહાર પડેલા "સેન્ટેનરી રિવ્યુ" નામના પુસ્તકમાં "એન્શ્યેન્ટ ઇન્ડીઅન અલ્ફાબેટ" વાળા આર્ટિકલના પ્રારંભમાં જ આ બાબત વિષે ડૉ. હૉર્નેલ લખે છે કે:—

'જૂના શિલાલેખોને ઉકેલવાનું અને તેનું ભાષાંતર કરવાનું સોસાઈટિનું અત્યુપયોગી કાર્ય સને ૧૮૩૪ થી ૧૮૩૯ સુધીમાં ચાલ્યું હતું. એ કાર્યની સાથે મી. જેમ્સ પ્રિંસેપ, કે જે તે વખતે સોસાઈટિના સેક્રેટરી હતા તેમનું નામ સદાને માટે જોડાઈ રહેશે. કારણ કે હિન્દુસ્તાન વિષયક જૂની લેખનકલા, ભાષા અને ઈતિહાસ સાથે સંબંધ ધરાવનારી અને આપણા આધુનિક જ્ઞાનના આધારભૂત એવી મોટી શોધો તે એક જ મનુષ્યના પુરૂષાર્થને લઇને અને તે પણ વળી આટલા અલ્પ સમયમાં થઈ હતી."

પ્રિન્સેપના પછી લગભગ ત્રીસ વર્ષ સુધી પુરાતત્ત્વ સંશોધનનાં સૂત્રો જેમ્સ ફરગ્યુસન, મેજર કિટ્ટો, એડવર્ડ ટૉમસ, અલેકઝાંડર કનિંગહામ, વાલ્ટર ઇલિયટ, મેડોઝ ટેલર, સ્ટીવન્સન, ડૉ. ભાઉ દાજી વિગેરેના હાથમાં રહ્યાં. આમાંના પહેલા ચાર વિદ્વાનોએ ઉત્તર હિંદુસ્તાનમાં, ઇલિયટ સાહેબે દક્ષિણ હિંદુસ્તાનમાં, અને પાછળના ત્રણે પશ્ચિમ હિંદુસ્તાનમાં કામ કર્યું હતું. ફર્ગ્યુસન સાહેબે પુરાતન વાસ્તુવિદ્યા (Architecture) નું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવામાં ઘણી મહેનત લીધી હતી; અને તેમણે આ વિષય ઉપર અનેક ગ્રંથો લખ્યા હતા. આ વિષયનો તેમનો અભ્યાસ એટલો બધો આગળ વધી ગયો હતો કે તેઓ કોઇપણ ઇમારતને આંખેથી જોઇને જ સાધારણ રીતે તેનો સમય નિશ્ચિત કરી લેતા હતા. મેજર કિટ્ટો બહુ વિદ્વાન્ તો ન હતો પણ તેની શોધક બુદ્ધિ બહુ તીક્ષ્ણ હતી. જ્યાં બીજા અનેક વિદ્વાનોને કાંઇ પણ જડયું ન હતું, ત્યાં જ તેણે પોતાની ગીધ જેવી ઝીણી દૃષ્ટિના બળે કેટલી યે ચીજો ખોળી કાઢી હતી. તે ચિત્રકલામાં પણ નિપુણ હતો. તેણે પોતાના હાથથી કેટલાં યે સ્થાનોનાં ચિત્ર કાઢયાં હતાં અને તે પ્રકાશિત કર્યાં હતાં. તેની આવી શિલ્પકળા વિષયક ઉંડી કુશળતા જોઇ સરકારે તેને બનારસ સંસ્કૃત કૉલેજનું મકાન તૈયાર કરાવવાનું કામ સોંપ્યું હતું. તેણે આ કામમાં ઘણો પારશ્રમ ઉઠાવ્યો હતો. આ પરિશ્રમને કારણે તેની તબીયત બગડી ગઈ અને આખરે ઇંગ્લાંડમાં જઇ તે સ્વર્ગસ્થ

Aho ! Shrutgyanam

થયો. ટૉમસ સાહેબે ખાસ કરીને પોતાનું લક્ષ્ય શિક્કાઓ તથા શિલાલેખો તરફ ખેંચ્યું. તેણે ઘણા પરિશ્રમ સાથે ઇ. સ. પૂર્વે ૨૪૬ થી લઇ ૧૫૫૪ સુધીનો ૧૮૦૦ વર્ષોનો પ્રાચીન ઇતિહાસ તારવી કાઢયો હતો. જનરલ કનિંગહામે પ્રિંસેપનું જ બાકી રહેલું કામ હાથમાં લીધું. તેમણે બ્રાહ્મી તથા ખરોષ્ઠી લિપિના સઘળા પ્રકારોનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું. દક્ષિણના ચાલુકય વંશનું વિસ્તૃત જ્ઞાન લોકોની આગળ તેમણે જ પ્રથમ મૂકયું. ટેલર સાહેબે ભારતની ભૂમિનિર્માણવિદ્યાનું જ્ઞાન મેળવ્યું અને સ્ટિવન્સને શિકકાઓની શોધખોળ કરી. પુરાતત્ત્વ સંશોધનના કામમાં પહેલવહેલી પ્રવીણતા જે ભારતવાસી વિદ્વાને મેળવી હતી તેમનું નામ ડૉ. ભાઉ દાજી હતું. તેમણે અનેક શિલાલેખો ઉકેલ્યા અને પ્રાચીન ભારતના ઈતિહાસના જ્ઞાનમાં ખૂબ વૃદ્ધિ કરી. એ વિષયમાં બીજા નામાંકિત ભારતના વિદ્વાન્ તરીકે કાઠિયાવાડના વતની પંડિત ભગવાનલાલ ઇંદ્રિજીનું નામ લેવું જોઇએ. તેમણે પશ્ચિમ ભારતના ઇતિહાસમાં ઘણી અમૂલ્ય વૃદ્ધિ કરી છે. અનેક શિલાલેખો અને તામ્રપત્રો ઉકેલ્યાં હતાં. તેમની વિદ્વત્તાનું ખરૂં સ્મારક તો તેમણે ઉડીસાના ખંડગિરિ–ઉદયગિરિ વાળી હાથીગુફામાંના સમ્રાટ્ ખારવેલના લેખને શુદ્ધ રીતે ઉકેલ્યો તે છે. બંગાલના વિદ્વાન્ ડૉ. રાજેન્દ્રલાલ મિત્રનું નામ પણ આ વિષયમાં ખાસ ઉલ્લેખ કરવા યોગ્ય છે. તેમણે નેપાલના સાહિત્ય અને ઈતિહાસ વિષયમાં આપણને ઘણું જ્ઞાન આપ્યું છે.

આ બધું કામ વિદ્વાનોએ ખાસ પોતાના શોખથી જ કીધું હતું. ત્યાં સુધી સરકાર તરફથી એ વિષય માટે કોઇ ખાસ પ્રબંધ કરવામાં આવ્યો ન હતો. પરંતુ એ કામ એટલું બધું મહાભારત છે કે સરકારની ખાસ મદદ વગર સંપૂર્ણ થવું અશકય છે. સને ૧૮૪૪ માં લંડનની રૉયલ એશીઆટિક સોસાઈટીએ ઇસ્ટ ઈન્ડીઆ કંપનીને વિનંતિ કરી કે આ કામમાં સરકારે ખાસ મદદ કરવી જોઇએ અને સરકાર મારફત જ આ કામ થવું જોઈએ. તેથી ૧૮૪૭ માં લોર્ડ હાર્ડિંજના પ્રસ્તાવથી બોર્ડ ઑફ ડાયરેકટર્સે આ કામમાં ખર્ચ કરવાની મંજુરી આપી. પણ સન્ ૧૮૫૦ સુધીમાં તેનું વાસ્તવિક પરિણામ કાંઇ પણ ન આવ્યું. ૧૮૫૧ માં સંયુક્ત પ્રાંતના ચીફ એન્જીનીઅર કર્નલ કનિંગહામે એક યોજના ઘડીને સરકાર ઉપર મોકલી અને સાથે એ પણ સૂચવ્યું કે જો ગવર્નમેંટ આ કામ તરફ લક્ષ્ય નહિ આપશે તો કદાચિત્ ફ્રેંચ અને જર્મન લોકો આ કામ ઉપાડી લેશે; અને તેમ થશે તો તેમાં અંગ્રેજોના યશની હાનિ થશે. ક. કનિંગહામની આ સૂચનાનુસાર અને ગવર્નર જનરલની ભલામણથી ૧૮૫૨ માં આર્કિઓલૉજીકલ સર્વ્હે નામનું એક ડિપાર્ટમેન્ટ કાયમ કરવામાં આવ્યું અને ૨૫૦ રુપીઆ માસિક પગારે કનિંગહામ સાહેબની જ આ ડિપાર્ટમેન્ટના ડાયરેકટર તરીકે નેમણુંક કરવામાં આવી. આ યોજના સ્થાયી રૂપે ન હતી. સરકારની ધારણા એમ હતી કે મોટાં મોટાં મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાનોનું યથાતથ વર્ણન, તત્સંબંધી ઇતિહાસ અને કિંવદન્તીઓનો સંગ્રહ કરવામાં આવે. નવ વર્ષ સુધી સરકારની આ જ નીતિ ચાલૂ રહી હતી. તે દરમ્યાન કનિંગહામ સાહેબે પણ પોતાના નવ રિપોર્ટો બહાર પાડયા.

Aho ! Shrutgyanam

૧૮૭૧ થી સરકારની આ ધારણામાં કાંઈક ફેરફાર થયો. કનિંગહામના રિપોર્ટોથી સરકારની ખાત્રી થઈ કે આખું હિન્દુસ્તાન મહત્ત્વપૂર્ણ સ્થાનોથી ભરેલું છે અને તે બધાંની શોધખોળ થવાની આવશ્યકતા છે. એટલા માટે આખા હિન્દુસ્તાનની શોધખોળ કરવા માટે કનિંગહામ સાહેબને ડાયરેકટરને બદલે ડાયરેકટર–જનરલ બનાવ્યા અને તેમની મદદ માટે બીજા વિદ્વાનોની નેમણુંકો કરી. પરંતુ ૧૮૭૪ સુધી એકલા કનિંગહામ સાહેબ જ ઉત્તર હિંદુસ્થાનમાં શોધખોળનું કામ કરતા હતા. ૧૮૭૪ માં દક્ષિણ ભાગની ગવેષણા કરવા માટે ડૉ. બર્જેસની યોજના કરવામાં આવી.

આ ડિપાર્ટમેન્ટનું કામ કેવળ પ્રાચીન સ્થાનોની શોધ કરવાનું હતું; તેમનું રક્ષણ કરવાનું કામ પ્રાંતિક સરકારોને સ્વાધીન હતું. પણ પ્રાંતિક સરકારોએ આ તરફ લક્ષ્ય ન આપવાથી અનેક પ્રાચીન સ્થાનો, સંરક્ષણના અભાવે, નષ્ટ થવા લાગ્યાં. આ દુર્દશા જોઈ લૉર્ડ લિટને ૧૮૭૮ માં "કયુરેટર ઑફ એન્શ્યેન્ટ મોન્યુમેન્ટસ્" નામના એક અધિકારીની નેમણુંક કરવાનો વિચાર કીધો. તે અધિકારી માટે દરેક પ્રાન્તનાં સંરક્ષણીય સ્થાનોની યાદી તૈયાર કરી, તેમાં કયાં કયાં સ્થાનો સુરક્ષિત રહી શકે છે, કયાં કયાં સ્થાનો મરામત કરવા લાયક તો નથી પણ હજી પૂર્ણ નષ્ટ થયાં નથી, અને કયાં કયાં મહત્વપૂર્ણ સ્થાનો તદ્દન નષ્ટ થઈ ગયાં છે; એ સઘળી વિગતો લખવાનું કામ નિશ્ચિત કરવામાં આવ્યું. આ યોજનાના સંબંધમાં 'સેક્રેટરી ઑફ સ્ટેટ' ને લખવામાં આવ્યું પણ તેણે લૉર્ડ લિટનની યોજનાનો અસ્વિકાર કર્યો અને આ કામ કરવાનો ભાર ડાયરેકટર ઉપર નાંખવા જણાવ્યું. પરંતુ ૧૮૮૦ માં હિન્દી સરકારે ભારતમંત્રીને લખ્યું કે ડાયરેકટર–જનરલને આ કામ કરવા જેટલી ફુરસદ નથી, અને બીજો કોઈ ઉચિત પ્રબંધ કર્યા સિવાય ઘણાં મહત્વનાં સ્થાનો નષ્ટ થતાં જાય છે. ત્યારે ૧૮૮૧ થી લઈને ૧૮૮૩ સુધી મેજર કોલ. આ. ઈ. ની કયુરેટર તરીકે નેમણુંક કરવામાં આવી. આ ત્રણ વર્ષમાં એ કયુરેટરે "પ્રીઝર્વેશન ઑફ નેશનલ મોન્યુમેન્ટ્સ ઓફ ઇન્ડીઆ" નામના ત્રણ રિપોર્ટો પ્રકટ કર્યા. તે પછી એ કયુરેટરનું પદ કાઢી નાંખવામાં આવ્યુ.

સને ૧૮૮૫ માં જનરલ કનિંગહામ સાહેબ પોતાના પદથી રિટાયર્ડ થયા. ૧૮૬૨ થી ૧૮૮૫ સુધીમાં તેમણે ૨૪ રિપોર્ટો બહાર પાડયા હતા. આ રિપોર્ટો જોવાથી કનિંગહામ સાહેબના અલૌકિક પરિશ્રમનો ખ્યાલ આવી શકે છે. આટલી યોગ્યતા સાથે આટલું બધું કામ ઘણા થોડા જ માણસોએ કર્યું હશે. તેમના પછી ડાયરેકટર–જનરલ તરીકે ડૉ. બર્જેસની નેમણુંક કરવામાં આવી. ત્યારથી અન્વેષણની સાથે સંરક્ષણનું કામ પણ આ ખાતાને સોંપવામાં આવ્યું. સર્વે કરવા માટે હિન્દુસ્તાનના પાંચ ભાગો કરવામાં આવ્યા; અને દરેક ભાગ માટે એક સર્વેયરની યોજના કરવામાં આવી. મુંબઇ; મદ્રાસ; રાજપુતાના અને સિંધ સાથે પંજાબ; મધ્ય પ્રદેશ અને વાયવ્ય પ્રાંત સાથે મધ્ય ભારત; અને આસામ સાથે બંગાલ; એમ પાંચ ભાગો નિયત કરવામાં આવ્યા. પરંતુ સર્વેયર કેવળ ઉત્તર

Aho ! Shrutgyanam

ભારતના ત્રણ ભાગો માટે જ નિયત થયા. મુંબઈ અને મદ્રાસ પ્રાન્તોનું કામ ડૉ. બર્જેસના હાથમાં જ રહ્યું.

આ સમય સુધી પણ સરકારની ઇચ્છા એ ખાતાને સ્થાયી કરવાની ન હતી. સરકારની સમજ એવી હતી કે પાંચ વરસમાં આ કામ પુરૂં થઇ જશે. એટલા માટે પ્રાચીન લેખોને ઉકેલવા સારૂ એક યુરોપીઅન પંડિતની નેમણુંક કરી અને સાથે દેશી વિદ્વાનોની પણ મદદ લેવાનો નિશ્ચય કર્યો.

૧૮૮૯ માં ડૉ. બર્જેસ પણ પોતાના હોદ્દાથી ફારેગ થયા. આથી એ ખાતાની હાલત ઉતરતી થવા લાગી. આ ખાતાના હિસાબની તપાસ કરવા માટે સરકારે કમિશન નીમ્યું. તેણે પોતાના રિપોર્ટમાં ખર્ચની બાબતમાં કેટલીક કાપકૂપ કરવાની સીફારસ કરી. હિન્દુસ્તાનના લાભ માટે થતા ખર્ચમાં કાપકૂપ કરવાની સીફારસને સ્વીકારવા સરકાર હમ્મેશાં તૈયાર જ હોય છે એ કહેવાની ખાસ આવશ્યકતા નથી. ડૉ. બર્જેસ પછી ડાયરેકટર જનરલનું સ્થાન ખાલી રાખવામાં આવ્યું. બંગાલ અને પંજાબના સર્વેયરોને પણ રજા આપી. આટલું ઓછું કરીને પણ સરકારે ચાલૂ યોજનાને ફકત પાંચ જ વર્ષ સુધી જારી રાખવાનું જાહેર કર્યું. પણ સરકારી હુકમ માત્રથી જ કામ એકદમ કેમ થઇ શકે ? ૧૮૯૦ થી ૧૮૯૫ સુધીનાં પાંચ વરસ આ ખાતા માટે ઘણી જ દીનદશામાં વીત્યાં, અને કામ પણ પૂરૂં ન થયું. ૧૮૯૫ થી ૧૮૯૮ સુધી સરકાર વિચાર જ કરતી રહી કે આ વિષયમાં શું કરવું જોઇએ. ૧૮૯૮ માં તેનો એવો વિચાર થયો કે શોધખોળનું કામ બંધ કરીને હવે તો આ ખાતા પાસેથી ફક્ત સંરક્ષણનું જ કામ લેવું જોઈએ. આ નવા વિચાર પ્રમાણે નીચે મુજબ પાંચ ક્ષેત્રો નક્કી કરવામાં આવ્યાં.

(૧) મદ્રાસ અને કુર્ગ (૨) મુંબઇ, સિંધ અને બરાર
(૩) સંયુકત પ્રાંત અને મધ્યપ્રદેશ (૪) પંજાબ, બ્રિટિશ બલુચિસ્તાન અને અજમેર
(૫) બંગાલ અને આસામ

૧૮૯૯ ના ફેબ્રુઆરી માસની ૧ લી તારીખે એશિઆટિક સોસાયટિના સમારંભમાં લૉર્ડ કર્ઝને આ ખાતાને ખૂબ ઉન્નત કરવા માટેનો પોતાનો વિચાર જાહેર કર્યો. ત્યારબાદ ૧૯૦૧ માં વાર્ષિક એક લાખ રૂપીઆ ખર્ચ કરવાની આ ખાતાને મંજુરી આપવામાં આવી, અને ડાયરેકટર–જનરલની ફરીથી નેમણુંક કરવામાં આવી. સન ૧૯૦૨ માં નવા ડાયરેકટર–જનરલ માર્શલ સાહેબ હિંદુસ્તાનમાં આવ્યા, ત્યારથી આ ખાતાનો નવો ઇતિહાસ શરૂ થાય છે. તે આજે કહેવાનું કામ મારૂં નથી. જ્યારે એ ખાતા ઉપર આપણી સત્તા થશે ત્યારે એના ઇતિહાસનું આપણે અવલોકન કરીશું.

ઇંગ્રેજ સરકારના આ કામનું ઉદાહરણ લઈ કેટલાંક દેશી રાજ્યોએ પણ પોતાનાં રાજ્યોમાં આ વિષયના ડિપાર્ટમેંટો ખોલ્યાં છે. ભાવનગર સંસ્થાને કેટલાક પંડિતોદ્વારા કાઠિયાવાડ, ગૂજરાત અને રજપુતાનના અનેક શિલાલેખો અને દાન પત્રોની નકલો મેળવી "ભાવનગર પ્રાચીન શોધ સંગ્રહ" ના નામે એક પુસ્તક દ્વારા તેમને પ્રકાશિત કરી છે.

Aho ! Shrutgyanam

કાઠિયાવાડના આગળના પૉલિટિકલ એજન્ટ કર્નલ વૉટસનને પ્રાચીન વસ્તુઓ ઉપર બહુ પ્રેમ હતો; તેથી કાઠિયાવાડના કેટલાક રાજાઓએ મળીને રાજકોટમાં "વૉટસન મ્યુઝીઅમ" નામનું પરાણુ-વસ્તુ-સંગ્રહાલય સ્થાપ્યું જેમાં કેટલાક લેખો, તામ્રપત્રો, પુસ્તકો, શિક્કાઓ આદિનો સારો સંગ્રહ થયેલો છે. માઇસોર રાજ્યે પણ આવું એક સંગ્રહાલય સ્થાપ્યું છે; અને સાથે આર્કિઑલૉજીકલ ડિપાર્ટમેંટ પણ સ્વતંત્ર રીતે ઉઘાડયું છે, જે દ્વારા આજ સુધીમાં અનેક રિપોર્ટો, પુસ્તકો અને લેખસંગ્રહો છપાઈ પ્રસિદ્ધ થયા છે. ત્યાંથી એપિગ્રાફિઆ કર્નાટિકા નામની એક સીરિઝ નીકળે છે જેની અંદર હજારો શિલાલેખો-તામ્રપત્રો ઇત્યાદિ પ્રસિદ્ધ થયાં છે. ત્રાવણકોર, હૈદરાબાદ અને કાશ્મીરનાં રાજ્યોએ પણ આ કામ સ્વતંત્ર રીતે કરવા માંડયું છે. એ સિવાય, ઉદયપુર, ઝાલાવાડ, ગ્વાલીઅર, ભોપાળ, વડોદરા, જુનાગઢ, ભાવનગર, આદિ રાજ્યોમાં પણ સ્થાનિક સંગ્રહાલયો થતાં જાય છે.

બ્રીટિશ રાજ્યમાં સરકાર અને બીજી સંસ્થાઓ અથવા સ્વતંત્ર વ્યક્તિઓ દ્વારા થયેલા પુરાણુ-વસ્તુ-સંગ્રહને મુંબઇ, મદ્રાસ, કલકત્તા, નાગપુર, અજમેર, લાહોર, લખનૌ, મથુરા, સારનાથ, પેશાવર, આદિ સ્થળોનાં પદાર્થ-સંગ્રહાલયોમાં સુરક્ષિત રાખવામાં આવે છે; તેમ જ ઘણીક વસ્તુઓને લંડનના બ્રીટિશ મ્યુઝિઅમમાં મોકલવામાં આવે છે. એ બધી વસ્તુઓનાં તે તે સંસ્થા દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવતા રિપોર્ટો અને કેટલૉગોમાં વર્ણન આપેલાં હોય છે. શિલાલેખો, તામ્રપત્રો અને શિક્કાઓ એ વિષયનાં ખાસ જુદાં પુસ્તકો અને ગ્રંથમાળાઓ પણ પ્રકટ થાય છે.

જેવી રીતે હિંદુસ્તાનમાં આ પ્રમાણે પુરાતત્ત્વની ગવેષણાનું કામ ચાલ્યું છે, તેવી રીતે યુરોપમાં પણ ચાલ્યું છે. ફ્રાંસ, જર્મની, ઑસ્ટ્રિયા, ઇટલિ, રશીયા આદિ રાજ્યોએ પોતપોતાનાં રાજ્યોમાં એ વિષય માટે સ્વતંત્ર સોસાઇટિયો, ઍકેડૅમીઓ, વીગેરે સ્થાપેલી છે અને ત્યાંના પણ અનેક વિદ્વાનોએ હિન્દુસ્તાનના સાહિત્ય અને ઇતિહાસને પ્રકાશમાં આણવા ઘણો પરિશ્રમ ઉઠાવ્યો છે. નષ્ટપ્રાય થતા આપણા હજારો ગ્રંથોને તેમણે ઉદ્ધર્યા છે અને સંગ્રહ્યા છે, વાંચ્યા છે અને છપાવ્યા છે. સંસ્કૃત અને પ્રાકૃત સાહિત્યને પ્રકાશમાં આણવાનું જેટલું કામ જર્મન વિદ્વાનોએ કર્યું છે તેટલું બીજા કોઇએ કર્યું નથી. તુલનાત્મક ભાષાશાસ્ત્રને જેટલું જર્મનોએ ખીલવ્યું છે તેનો શતાંશ પણ બીજાઓએ ખીલવ્યું નથી. બીજી પણ બધી મૌલિક શોધો મોટે ભાગે જર્મન વિદ્વાનોના હાથે જ થયેલી છે. અંગ્રેજોનો હિંદુસ્તાન સાથે ખાસ સંબંધ હોવાથી જ તેઓ આ વિષયમાં થોડું ઘણું કરવાનો ડોળ કરે છે એટલું જ. અસ્તુ.

આ પ્રમાણે દેશ અને વિદેશમાં વ્યક્તિ અને સંસ્થાએ કરેલા પુરાતત્ત્વાનુસંધાનથી આપણી પ્રાચીન સંસ્કૃતિના ઘણાક અજ્ઞાત અધ્યાયો લખાયા છે, અને લખાય છે. શિશુનાગ, નંદ, મૌર્ય, ગ્રીક, શાતકર્ણી, શક, પાર્થીઅન, કુશાન, ક્ષત્રપ, આભીર, ગુપ્ત, હૂણ,

Aho ! Shrutgyanam

યૌધેય, ઐસ, લિચ્છવી, પરિવ્રાજક, વાકાટક, મૌખરી, મૈત્રક, ગુહિલ, ચાવડા, ચાલુક્ય, પ્રતિહાર, પરમાર, ચાહમાન, રાષ્ટ્રકૂટ, કચ્છવાહા, તોમર, કલચૂરી, ત્રૈકુટક, ચંદેલા, યાદવ, ગુર્જર, મિહિર, પાલ, સેન, પલ્લવ, ચોલ, કદંબ, શિલાર, સેંદ્રક, કાકતીય, નાગ, નિકુંભ, બાણ, મત્સ્ય, શાલંકાયન, શૈલ, ભૂષક આદિ અનેક પ્રાચીન રાજવંશો કે જેમના વિષયમાં એક અક્ષર જેટલું પણ આપણે જાણતા ન હતા તેમના વિસ્તૃત ઇતિહાસો જાણવામાં આવ્યા છે. અનેક જાતિ, ધર્મ, સંપ્રદાય, ધર્માચાર્ય, વિદ્વાન્, ધનવાન્, દાની અને વીર પુરૂષોના વૃત્તાન્તોનો પરિચય થયો છે; અને અસંખ્ય પ્રાચીન નગર, મંદિર, સ્તૂપ, અને જળાશયોની હકીકતો મળી છે. સો વર્ષ પહેલાં આપણે આમાંનું કંઈ પણ જાણતા ન હતા.

આ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજી શકાય એમ છે કે પુરાતત્ત્વના સંશોધનનું કેટલું બધું મહત્ત્વ છે. તે દેશના ઇતિહાસને શુધ્ધ અને સંપૂર્ણ બનાવે છે. તેનાથી પ્રજાના ભૂતકાળનું યથાર્થ જ્ઞાન થાય છે; અને ભવિષ્યકાળમાં કયે માર્ગે જવું તેનું ખરૂં સૂચન મળે છે.

વિદ્વાનોનો અભિપ્રાય છે કે પુરાતત્ત્વ સંબંધી જે કામ અદ્યાપિ થયું છે તે ભારતવર્ષની વિશાલતા અને વિવિધતા તરફ લક્ષ્ય કરતાં હજી બાળપોથીનું પહેલુંજ પાનું ઉઘાડવામાં આવ્યું છે એમ કહેવામાં કોઈ પણ જાતની અત્યુક્તિ થતી નથી. આ દેશમાં એટલી બધી વસ્તુઓ છુપાયલી, દટાયલી, ખોવાયલી પડી છે કે જ્યારે સેંકડો વિદ્વાનો સૈકાઓ સુધી પરિશ્રમ કર્યા કરશે ત્યારે જ તેમને પ્રકાશમાં લાવી શકશે.

ભારતના રાષ્ટ્રીય જીવનના નવીન ઇતિહાસ માટે બંધાયેલા કોરા પુસ્તકમાં “ ॐ **નમઃ** ” લખવાનું મોટું માન ગૂજરાતને મળે એવો ઈશ્વરીય સંકેત દેખાય છે. તેથી રાષ્ટ્રીય ઇતિહાસના દરેક અધ્યાયમાં ગૂજરાતનો આદિ ઉલ્લેખ આવે એમ જો આપણે ઇચ્છીએ તો દરેક વિષયમાં આપણે પ્રગતિ કરવી જોઇએ; અને એવા જ કોઈ અજ્ઞાત સંકેતથી આપણે રાષ્ટ્રીય શિક્ષણ મંદિરની સાથે **પુરાતત્ત્વ મંદિર**ની પણ સ્થાપના કરી છે. એને સફળ બનાવવાનું લક્ષ્ય આપણા દરેક વિદ્યાર્થીમાં પ્રભુ ઉત્પન્ન કરે એમ ઇચ્છી હું મારૂં વ્યાખ્યાન સમાપ્ત કરૂં છું.*

*પુરાતત્ત્વ મંદિર ગ્રંથાવલીમાં પ્રકટ થએલ “ આર્યવિદ્યા વ્યાખ્યાનમાળા ” નામના પુસ્તકમાંથી આ વ્યાખ્યાન અત્ર ઉધ્ધૃત કરવામાં આવ્યું છે.

Aho ! Shrutgyanam

વૈશાલીના ગણસત્તાક રાજ્યનો નાયક
રાજા ચેટક.

જૈન સાહિત્યમાં વૈશાલીનો રાજા ચેટક ઘણી રીતે પ્રસિદ્ધ છે. શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરે પ્રચારેલા ધર્મના એક મહાન્ ઉપાસક તરીકે તો તેની ખ્યાતિ છે જ, પરંતુ બીજી રીતે વ્યાવહારિક પ્રસંગોથી પણ તેની તેટલી જ પ્રસિધ્ધિ છે. એ પ્રસિદ્ધિનું પહેલું કારણ તો એ છે કે જૈન ધર્મના છેલ્લા તીર્થંકર નિર્ગ્રન્થ જ્ઞાતપુત્ર શ્રી મહાવીરના ઘરાણા સાથે તેનો બેવડો સંબંધ હતો. શ્રી મહાવીરની માતા ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણી એ ચેટકની સગી બ્હેન થતી હતી અને એ ત્રિશાલાના મોટા પુત્ર અને મહાવીરના મોટા ભાઈ નન્દિવર્ધન સાથે એની વચલી પુત્રી નામે જેષ્ઠાએ લગ્ન કર્યાં હતાં. બીજું કારણ, જેવી રીતે મહાવીરના ઘરાણા સાથે એનો કૌટુંબિક સંબંધ હતો તેવી જ રીતે તત્કાલીન ભારતના બીજા કેટલાક પ્રધાન રાજવંશો સાથે પણ એનો સગપણનો સંબંધ બંધાએલો હતો. સિંધુસૌવીરનો રાજા ઉદ્રાયણ, અવંતીનો રાજા પ્રદ્યોત, કૌશાંબીનો રાજા શતાનિક, ચંપાનો રાજા દધિવાહન અને મગધનો રાજા બિંબિસાર એ બધા એના જામાત થતા હતા. જૈન સાહિત્યમાં કુણિક અથવા કોણિકના અને બૌદ્ધસાહિત્યમાં અજાતશત્રુના નામે પ્રસિદ્ધ પામેલો મગધનો સમર્થ સમ્રાટ્; તથા સામાન્ય રીતે જૈન, બૌદ્ધ અને બ્રાહ્મણ–ત્રણે સંપ્રદાયના કથાસાહિત્યમાં વ્યાપક થએલો ઉદયન વત્સરાજ; એ ચેટકના સગા દૌહિત્ર થતા હતા. ત્રીજું તે વખતે હયાતી ધરાવતા ભારતના ગણસત્તાક રાજ્યોમાંના એક પ્રધાન રાજ્યતંત્રનો તે વિશિષ્ટ નાયક કહેવાતો હતો. અને છેલ્લું, જૈન પરંપરા પ્રમાણે આખા આર્યાવર્તમાં ક્યારે યે નહી થએલી એવી એક ભયંકર જનનાશક લડાઇ એને લડવી પડી હતી, જેમાં એનો પ્રતિપક્ષી, એનો પોતાનો જ સગો દૌહિત્ર મગધરાજ અજાતશત્રુ હતો !

જૈન પરંપરામાં આટલી બધી પ્રસિદ્ધિ મેળવનાર અને ઉક્ત રીતે તાત્કાલીન ભારતમાં એક મહત્ત્વનું સ્થાન પ્રાપ્ત કરનાર એ રાજાના વિષયમાં જૈન સાહિત્ય સિવાય અન્યત્ર ક્યાંયે ઉલ્લેખ મળી આવતો ન હોવાથી ઐતિહાસિકોની દૃષ્ટિમાં અદ્યાપિ એનું અસ્તિત્વ ધ્યાન ખેંચવા લાયક રીતે અંકિત થયું નથી. બ્રાહ્મણ સંપ્રદાયના સાહિત્ય તરફ નજર કરિએ છીએ ત્યારે તેમાં, એ સમયના ભારતના મગધ, કોસલ, કૌશાંબી અને અવન્તી જેવા રાજસત્તાક રાજ્યોની તો નાની મોટી નોંધો લેવાએલી મળી આવે છે ખરી, પણ વૈશાલી જેવું સ્થાન કે જેમાં ગણસત્તાક રાજ્યપદ્ધતિ ચાલતી હતી તેનો નામનિર્દેશ પણ તેમાં ભાગ્યે જ જડી આવે છે.

બૌધ્ધ સાહિત્યમાં વૈશાલી અને ત્યાં આધિપત્ય ભોગવતી લિચ્છવી નામની ક્ષત્રિય જાતિનાં સંબંધમાં ઘણી ઘણી વાતો લખેલી મળી આવે છે, પરંતુ એ સ્થાન અને એ

Aho ! Shrutgyanam

સમાજ ઉપર સર્વોપરિ અધિકાર ચલાવનાર કોણ હતો તેનો ઉલ્લેખ બૌદ્ધ લેખકો પણ કાંઈ કરતા નથી.

હિન્દુસ્થાનના ઐતિહાસિક યુગના ઉદ્દગમકાલ તરીકે ગણાતા એ સમયના ઈતિહાસના અભ્યાસિઓનું ધ્યાન ખેંચવા માટે, આ લેખમાં હું જૈન મતે વૈશાલીના ગણસત્તાક રાજ્યના રાજા મનાતા એ ચેટક અને તેની સાથે સંબંધ ધરાવનારા રાજાઓના સંબંધમાં જેટલી પરંપરા જૈન ગ્રન્થકારોએ નોંધી રાખી છે તેનાં સાર અને સંકલના કરવા પ્રયત્ન કરૂં છું.

૧. તીર્થંકર શ્રી મહાવીરના ઘરાણા સાથે ચેટકનો સંબંધ.

ઉપર મેં સૂચવ્યું છે કે તીર્થંકર શ્રી મહાવીરની માતા ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણી ચેટક રાજાની સગી બ્હેન થતી હતી. તેનો પુરાવો જૈન આગમોમાં જૂનામાં જૂના આગમ તરીકે મનાતા આવશ્યક સૂત્રની ચૂર્ણિમાં મળે છે. એ ચૂર્ણિ ક્યારે રચાઇ તેનો નિશ્ચય અદ્યાપિ જોઇએ તેવો થઈ શકયો નથી, પરંતુ વિક્રમના આઠમા સૈકા કરતાં અર્વાચીન નથી તેટલું તો ચોક્કસ જણાય છે. આવશ્યક સૂત્રની સંસ્કૃત ટીકા કરનાર આચાર્ય હરિભદ્રનો સમય મેં વિક્રમ સંવત્ ૮૦૦ ની આસપાસ નિર્ણીત કર્યો છે. (જુઓ **જૈન સાહિત્ય સંશોધક**, ખંડ ૧, પૃષ્ઠ ૫૩). આચાર્ય હરિભદ્રે પોતાની એ સંસ્કૃત ટીકામાં ઉક્ત પ્રાચીન ચૂર્ણિમાંથી સેંકડો અવતરણો લીધાં છે, તેથી હરિભદ્ર પહેલાં ચૂર્ણિકારનો સમય સ્વતઃ સિદ્ધ છે. એ ચૂર્ણિમાં શ્રી મહાવીરની માતા ત્રિશલાને સ્પષ્ટ રૂપે ચેટકની ભગિની લખી છે અને તે જ ઠેકાણે ત્રિશલાના મોટા પુત્ર નંદિવર્ધનની ભાર્યા–શ્રી મહાવીરની ભોજાઈ–ને ચેટકની પુત્રી જણાવી છે. પાઠ આ પ્રમાણે છેઃ–

भगवतो माया चेडगस्स भगिणी; भो (जा) यी चेडगस्स धूया।

'ભગવાન મહાવીરની માતા, ચેટકની ભગિની;[૧] ભોજાઈ ચેટકની પુત્રી' આ ઉલ્લેખને ધ્યાનમાં રાખી પાછળના બીજા ગ્રન્થકારોએ પણ કેટલાંક ઠેકાણે ચેટકને મહાવીરના માતુલ (મામા) તરીકે ઉલ્લેખ્યો છે. મહાવીરના જીવનવૃત્તાંતની નોંધ જૈન આગમોમાં સૌથી પ્રાચીન અને પ્રથમ ગણાતા આગમ આચારાંગ સૂત્રમાં લેવાએલી છે. તેમાં મહાવીરની માતાનું એક **विदेहदिन्ना** નામ પણ લખેલું છે. જેમકે—

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स अम्मा वासिट्ठस्सगुत्ता तीसेणं तिनि नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तं जहा तिसला इवा विदेहदिन्ना इवा पियकारिणो इ वा।

(આચારાંગ, આગમોદય સમિતિ દ્વારા પ્રકાશિત, પૃ. ૪૨૨)

---

૧. જૂઓ કલ્પસૂત્રની ધર્મસાગર ગણિકૃત કિરણાવલી નામે ટીકા પૃષ્ઠ ૧૨૪ '**चेटकमहाराजस्य भगवन्मातुलस्य**–'ભાવનગરની આત્માનંદ જૈન સભાએ પ્રકટ કરેલ, ધર્મસાગર ગણિ કૃત ટીકા કિરણાવલી પૃ. ૯૩; તથા વિનયવિજયોપાધ્યાય કૃત ટીકા સુબોધિકા, પૃ. ૧૪૪.

Aho ! Shrutgyanam

'શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરની માતા—જેનું વાસિષ્ઠ ગોત્ર હતું, તેનાં ત્રણ નામ હતાં એમ કહેવાય છે: જેમ કે ૧ ત્રિશલા, ૨ વિદેહદિન્ના, અને ૩ પ્રિયકારિણી.' 'વિદેહદિન્ના' ના વ્યુત્પત્યર્થ ઉપરથી જણાય છે કે તેનો જન્મ વિદેહના રાજકુળમાં થયો હતો. માતાના આ કુળ સૂચક નામ ઉપરથી મહાવીરનું પણ એક નામ વૈદેહદિન્ન હતું જેનો ઉલ્લેખ આચારાંગ સૂત્રમાં ઉપર્યુકત સૂત્ર પછી તરત જ કરવામાં આવેલો છે. જેમકે—

समणे भगवं महावीरे नाए नायपुत्ते नायकुलनिव्वत्ते विदेहे विदेहदिन्ने विदेहजच्चे विदेहसूमाले. (પૃ. ૪૨૨)

આ બંને અવતરણો કલ્પસૂત્રમાં પણ અવિકલરૂપે ઉદ્ધૃત થએલાં છે. ત્યાં ટીકાકારો विदेहदिन्नની વ્યાખ્યા આ પ્રમાણે કરે છે: विदेहदिन्ना त्रिशला तस्या अपत्यं वैदेहदिन्नः। આગળ ઉપર આપણે જોઇશું કે વૈશાલી એ એક વિદેહનો જ ભાગ હતો અને તેથી ચેટકનું ઘરાણું વિદેહ રાજકુળ તરીકે લેખાય એ સ્પષ્ટ જ છે. આ રીતે મહાવીરની માતા ત્રિશલા વિદેહ રાજકુળના ચેટકની બ્હેન થતી હતી તે ઉક્ત આવશ્યકચૂર્ણિ અને આચારાંગના ઉલ્લેખ ઉપરથી સ્પષ્ટ થઈ જાય છે.

ત્રિશલાના મોટા પુત્ર અને મહાવીરના મોટા ભાઇ નંદિવર્ધનની સ્ત્રી ચેટકની પુત્રી થતી હતી તેનો એક ઉલ્લેખ તો ઉપર આવી ગયો છે. બીજો ઉલ્લેખ પણ એજ આવશ્યકચૂર્ણિમાં આગળ ઉપર થએલો છે જેમાં ચેટકની કઇ પુત્રીએ કોની સાથે લગ્ન કર્યાં તેની નોંધ લેવામાં આવી છે. એ નોંધ પ્રમાણે ચેટકને એકંદર સાત પુત્રીઓ હતી જેમાંથી છનાં લગ્ન થયાં હતાં અને એક કુમારિકા જ રહી હતી. એ સાત પુત્રીઓમાંથી પાંચમી પુત્રી જેનું નામ જયેષ્ઠા હતું તેનું લગ્ન નન્દિવર્ધન સાથે થયું હતું. ઉલ્લેખ આ પ્રમાણે છે:

'जेट्ठा कुंडग्गामे वद्धमाणसामिणो जेट्ठस्स नन्दिवद्धणस्स दिन्ना'

જયેષ્ઠા [નામે કન્યા] કુંડગ્રામમાં વર્દ્ધમાન (મહાવીરનું મૂળ નામ) સ્વામિના જયેષ્ઠ [બંધુ] નન્દિવર્ધનને આપી હતી.' આ ઉલ્લેખ આચાર્ય હેમચંદ્રે પોતાના મહાવીરચરિત્રમાં પણ કરેલો છે:-

कुण्डग्रामाधिनाथस्य नन्दिवर्धनभूभुजः ।
श्रीवीरनाथज्येष्ठस्य, ज्येष्ठा दत्ता यथारुचि ॥[१]

શ્રી મહાવીરના મોટા ભાઈનું નામ નન્દિવર્ધન હતું તેનો સ્પષ્ટ ઉલ્લેખ તો આચારાંગ અને કલ્પસૂત્ર—એમ બંને મૂળ સૂત્રોમાં આવેલો છે,—યથા

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स जिट्ठे भाया नंदिवद्धणे कासवगुत्तेणं । (આચારાંગ પૃ૦ ૪૨૨, કલ્પસૂત્રમાં પણ આજ પાઠ છે.)

૧. ભાવનગરની જૈન ધર્મ પ્રસારક સભાએ છપાવેલ 'ત્રિષષ્ઠીશલાકાપુરુષચરિત્ર'ના ૧૦ પર્વનું પૃષ્ઠ ૭૭.

Aho ! Shrutgyanam

[કેટલાક દેશો અને કેટલીક જાતોમાં મામાની કન્યા ઉપર ભાણેજનો પ્રથમ હક્ક હોય એમ પ્રચલિત રીવાજ અને જૂનાં પ્રમાણો ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાઈ આવે છે. મહારાષ્ટ્રમાંની મરાઠા જાતિમાં ખાસ કરીને આજે પણ એ રીવાજ ચાલૂ છે. આવશ્યક સૂત્રની ટીકામાં હરિભદ્રસૂરિએ એક ઠેકાણે 'દેશકથા' નું વર્ણન કરતાં જૂની ગાથા ઉતારી છે જેમાં જણાવ્યું છે કે દેશ દેશના રીત રીવાજો જુદા જુદા હોઈ, કોઇ દેશમાં જ્યારે એક વસ્તુ ગમ્ય કે સ્વીકાર્ય હોય છે ત્યારે બીજા દેશમાં તે જ બાબત અગમ્ય કે અસ્વીકાર્ય હોય છે. ઉદાહરણાર્થ–જેમ અંગ અને લાટ દેશના લોકોને માતુલદુહિતા એટલે મામાની છોકરી ગમ્ય હોય છે ત્યારે ગૌડ દેશના લોકો માટે તે ભગિની હોઈ અગમ્ય છે. ગાથા આ પ્રમાણે–

छंदो गम्मागम्मं जह माउलदुहियमंग-लाडाणं।
अण्णेसिं सा भगिणी गोलाइणं अगम्मा उ॥

જેમ મહાવીરની મામાની પુત્રીએ પોતાની ફૈઈના પુત્ર નન્દિવર્ધન સાથે લગ્ન કર્યાં હતાં તેમ ખુદ મહાવીરની પુત્રી પ્રિયદર્શનાનાં લગ્ન પણ તેની સગી ફૈઈ સુદર્શનાના પુત્ર જમાલિ નામના ક્ષત્રિય કુમાર સાથે થયાં હતાં જેનો ઉલ્લેખ ઘણા પ્રાચીન અર્વાચીન ગ્રંથોમાં થએલો છે. આવશ્યક સૂત્રના ભાષ્ય, ચૂર્ણિ, ટીકા આદિમાં પણ એ બાબતની સ્પષ્ટ નોંધ છે. યથા—

कुण्डपुरनगरं तत्थ जमाली सामिस्स भाइणिज्जो...तस्स भज्जा सामिस्स दुहिता।
(હરિભદ્ર કૃત આવશ્યક સૂત્ર ટીકા, પૃષ્ઠ, ૩૧૨)]

૨. ભારતનાં બીજાં કેટલાંક પ્રધાન રાજ્યો સાથે ચેટકનો કૌટુંબિક સંબંધ.

ઉપરના ભાગમાં જણાવ્યા પ્રમાણે ચેટકને એકંદર સાત પુત્રીઓ હતી જેમાં એક તો કુમારિકા જ રહી હતી અને બાકીની છનાં, ભારતના તે વખતના જુદા જુદા નામાંકિત રાજાઓ સાથે લગ્ન થયાં હતાં. એ પુત્રીઓ અને જેમની સાથે તેમનાં લગ્ન થયાં તે રાજાઓ વિગેરેનો ટુંક ઉલ્લેખ આવશ્યક ચૂર્ણિમાં નીચે પ્રમાણે કરેલો છે.

एतो य वेसालीए नगरीए चेडओ राया हेहयकुलसंभूतो। तस्स देवीणं अण्णमण्णाणं सत्त धूताओ। पभावती, पउमावती, मिगावती, सिवा, जेट्ठा, सुजेट्ठा, चेलण त्ति। सो चेडओ सावओ परवीवाहकरणस्स पच्चक्खातं। धूताओ ण देति कस्स त्ति। ताओ माति मिस्सगाओ रायं आपुच्छित्ता अण्णेसिं अच्छितकाणं सरिसगाणं देन्ति। पभावती वीतिभए उद्दायणस्स दिण्णा, पउमावती चंपाए दहिवाहणस्स, मिगावती कोसंबीए सताणियस्स, सिवा उज्जेणीए पज्जोतस्स, जेट्ठा कुंडग्गामे वद्धमाणसामिणो जेट्ठस्स नन्दिवद्धणस्स दिण्णा। सुजेट्ठा चेल्लणा य देवकारिओ अच्छंति।[1]

અર્થાત્—'વૈશાલી નગરીમાં હૈહયવંશમાં જન્મેલો ચેડગ (ચેટક) નામે રાજા તેને

૧ થોડા અક્ષરોના ફેરફાર સાથે આનો આ જ ઉલ્લેખ હરિભદ્રવાળી આવશ્યક ટીકામાં પણ આવેલો છે. જુઓ આગમોદય સમિતિદ્વારા પ્રકાશિત એ ટીકા, પૃષ્ઠ ૬૭૬–૭.

Aho ! Shrutgyanam

જુદી જુદી રાણીઓથી સાત પુત્રીઓ થઈઃ–૧ પ્રભાવતી, ૨ પદ્માવતી, ૩ મૃગાવતી, ૪ શિવા, ૫ જ્યેષ્ઠા, ૬ સુજ્યેષ્ઠા, અને ૭ ચેલ્લણા. તે ચેટગ શ્રાવક હોવાથી તેણે કોઇનાં પણ લગ્ન ન કરવાની પ્રતિજ્ઞા લીધેલી હતી, તેથી તે પોતાની પુત્રીઓનાં લગ્ન નથી કરતો, આથી તે પુત્રીઓની માતાઓએ રાજાની સંમતિ મેળવી પોતાને ઇચ્છિત અને પુત્રીઓને સદૃશ એવા રાજાઓને તે કન્યાઓ આપી. જેમાં ૧ પ્રભાવતી વીતિભયના ઉદાયનને, ૨ પદ્માવતી ચંપાના દધિવાહનને, ૩ મૃગાવતી કૌશાંબીના શતાનીકને, ૪ શિવા ઉજ્જયિનીના પ્રદ્યોતને, અને ૫ જ્યેષ્ઠા કુંડગામમાં વર્દ્ધમાન સ્વામિના મોટા ભાઈ નંદિવર્દ્ધનને પરણાવી હતા. સુજ્યેષ્ઠા અને ચેલ્લણા [ત્યાં સુધી] કુમારિકા જ હતી.' આની આ જ હકીકત આચાર્ય હેમચંદ્રે પણ મહાવીર ચરિત્રમાં, પોતાના શબ્દોમાં આ પ્રમાણે નોંધી છે–

इतश्च वसुधावध्वा मौलिमाणिक्यसन्निभा ।
वैशालीति श्रीविशाला नगर्यस्त्यगरीयसी ॥
आखंडल इवाखण्डशासनः पृथिवीपतिः ।
चेटीकृतारिभूपालस्तत्र चेटक इत्यभूत् ॥
पृथग्राज्ञीभवास्तस्य बभूवुः सप्त कन्यकाः ।
सप्तानामपि तद्राज्यांगानां सप्तेव देवताः ॥
प्रभावती पद्मावती मृगावती शिवापि च ।
ज्येष्ठा तथैव सुज्येष्ठा चिल्लणा चेति ताः क्रमात् ॥
चेटकस्तु श्रावकोऽन्यविवाहनियमं वहन् ।
ददौ कन्या न कस्मैचिदुदासीन इव स्थितः ॥
तन्मातर उदासीनमपि ह्यापृच्छ्य चेटकम् ।
वराणामनुरूपाणां प्रददुः पञ्च कन्यकाः ॥
प्रभावती वीतभयेश्वरोदायनभूपतेः ।
पद्मावती तु चंपेशदधिवाहनभूभुजः ॥
कौशाम्बीशशतानीकनृपस्य तु मृगावती ।
शिवा तूज्जयिनीशस्य प्रद्योतपृथिवीपतेः ॥
कुण्डग्रामाधिनाथस्य नन्दिवर्धनभूभुजः ।
श्रीवीरनाथज्येष्ठस्य ज्येष्ठा दत्ता यथारुचि ॥
सुज्येष्ठा चिल्लणा चापि कुमार्यावेव तस्थतुः ॥
रूपश्रियोपमाभूते ते द्वे एव परस्परम् ॥[1]

આ છેલ્લી બન્ને પુત્રીઓ જે કુમારિકા રહેલી છે તેમાંથી ચેલ્લણા મગધના રાજા શ્રેણિક સાથે કેમ પરણે છે અને સુજ્યેષ્ઠા કુમારિકાવસ્થામાં જ જૈન ભિક્ષુણી કેમ થઈ જાય છે તેની હકીકત આગળ ઉપર જોઇશું. એ પહેલાં પાંચે પરિણીત પુત્રીઓના વિષયમાં જરા વધારે વિસ્તારથી તપાસ કરિએ. આ પાંચમાંથીયે વયથી કનિષ્ઠા પણ નામથી જ્યે-

૧ **મહાવીરચરિત્ર,** પૃ૪–૭૭.

Aho ! Shrutgyanam

ષ્ઠાના વિષયમાં તો ઉપર જે નોંધ લીધી છે તે કરતાં વધારે કાંઇ હકીકત જૈનગ્રંથકારો આપતા નથી. તેથી હવે ચાર જ પુત્રીઓની હકીકત આપણે જાણવાની રહી.

પ્રભાવતી.

ઉપર આપેલા ઉતારા પ્રમાણે ચેટકની પ્રથમ પુત્રીનું નામ પ્રભાવતી હતું અને તે વીતિભયના ઉદ્દાયન વેરે પરણી હતી. આ ઉદ્દાયનનો ઉલ્લેખ ઘણા જૈન ગ્રંથોમાં થએલો છે. સૌથી જૂનો ઉલ્લેખ ખાસ ભગવતી નામના સુપ્રસિદ્ધ સૂત્રમાંથી મળી આવે છે. એ સૂત્રના ૧૩ મા શતકના, ૬ ઠા ઉદ્દેશકમાં, એના દેશસ્થાનાદિની નોંધ આ પ્રમાણે લેવાએલી છેઃ

तेणं कालेणं तेणं समयेणं सिंधुसोवीरेसु जणवएसु वीतीभए नामं नगरे होत्था। तस्स णं वीतीभयस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं मियवणं नामं उज्जाणे होत्था। तत्थ णं वीतीभए नगरे उदायणे नामं राया होत्था...तस्स...रन्नो पभावती नामं देवी होत्था...तस्स णं उदायणस्स रन्नो पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए अभीतिनामं कुमारे होत्था।...तस्स णं उदायणस्स रन्नो नियए भायणेज्जे केसी नामं कुमारे होत्था।...से णं उदायणे राया सिंधुसोवीरप्पामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं वीतीभयप्पामोक्खाणं तिण्हं तेसट्ठीणं नगरागरसयाणं महासेणप्पामोक्खाणं दसण्हं राइणं बद्धमउडाणं विदिन्नछत्तचामरवालवीयणाणं अन्नेसिं च बहूणं राईसरतलवर जाव सत्थवाहप्पभिईणं आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे समणोवासए अभिगय जीवाजीवे जाव विहरइ।[1]

તાત્પર્યાર્થ—તે કાલ અને તે સમયમાં, સિંધુસૌવાર નામના દેશમાં વીતિભય નામે એક શહેર હતું. તે શહેરની ઉત્તર-પૂર્વ બાજૂએ મૃગવન નામે નગરોદ્યાન હતું. તે વીતિભય શહેરમાં ઉદ્દાયન નામે રાજા હતો, તે રાજાની પ્રભાવતી નામે પટરાણી હતી. તેને અભીતિ નામે પુત્ર હતો. તે ઉદ્દાયન રાજાને કેસી નામે એક કુમાર ભાણેજ હતો. એ ઉદ્દાયન રાજા સિંધુસૌવીર આદિ સોળ જનપદ, વીતિભય આદિ ત્રણસો ત્રેંસઠ નગર અને આકર (ખાણ) તથા મહાસેન પ્રમુખ દશ મોટા મુકુટબદ્ધ રાજાઓનો, તેમ જ બીજા અનેક નગરરક્ષક, દણ્ડનાયક, શેઠ, સાર્થવાહ આદિ જનસમૂહનો સ્વામી હતો. એ શ્રમણોપાસક અર્થાત્ જૈનશ્રમણોનો ઉપાસક હતો અને જૈનશાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત જીવ અજીવ આદિ તત્ત્વ–પદાર્થનો જાણકાર હતો. ઇત્યાદિ.

આ સૂત્રપાઠ ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ચેટકની મોટી પુત્રી પ્રભાવતીનાં લગ્ન વીતિભયના ઉદ્દાયન સાથે થએલાંનો જે ઉલ્લેખ આવશ્યક ચૂર્ણિમાં કરેલો છે તે પરંપરાને બરાબર અનુસરતો છે. આ સૂત્ર પાઠમાં ઉદ્દાયનને જે મહાસેન પ્રમુખ દશ મુકુટબદ્ધ રાજાઓનો સ્વામી જણાવ્યો છે તે હકીકત ખાસ વિચારવા જેવી છે. મહાસેન સિવાયના બીજા કયા નવ રાજા એના આજ્ઞાંકિત હતા તેની નોંધ તો કોઇ પણ જૈન ગ્રંથમાં મારા જોવામાં આવી નથી. પણ મહાસેન શી રીતે એનો આજ્ઞાંકિત થયો તેની કથા ઘણા

૧. આગમોદયસમિતિદ્વારા પ્રકાશિત ભગવતી સૂત્ર, પૃષ્ઠ ૬૧૮.

Aho ! Shrutgyanam

ગ્રંથોમાં આપેલી છે. આ મહાસેન, તે ઇતિહાસપ્રસિદ્ધ અવન્તીનો રાજા તે જ મહાસેન છે જેનું વધારે પ્રખ્યાતિ પામેલું નામ પ્રદ્યોત અથવા ચંડપ્રદ્યોત છે. અવંતીના એ મહાસેન ઉપર ઉદ્દાયને જે નિમિત્તથી ચઢાઈ કરી એને પરાજિત કર્યો તેનું વર્ણન, આવશ્યક ચૂર્ણિ અને ટીકા બંનેમાં દશપુરનગરની ઉત્પત્તિ બતાવતાં કરેલું હોઈ તેનો સારાર્થ આ પ્રમાણે છે:—

એક વખતે કેટલાક મુસાફરો સમુદ્રની યાત્રા કરતા હતા. સમુદ્રમાં ખૂબ તોફાન થવાથી તેમનું વહાણ ખરાબે ચઢયું અને કોઈ પણ રીતે તે આગળ વધતું ન હતું. તેથી લોકો બહુ ગભરાયા. તેમની આ દશા એક દેવના જોવામાં આવી અને તેથી પોતાની શક્તિ વડે તે વહાણને ખરાબામાંથી બહાર કાઢી રસ્તે પાડયું અને વળી તે લોકોને મહાવીર તીર્થંકરની ચંદનકાષ્ઠની બનાવેલી એક મૂર્તિ–જે તે દેવે જાતે જ બનાવી હતી—લાકડાની પેટીમાં બંધ કરીને આપી અને કહ્યું કે આમાં દેવાધિદેવની મૂર્તિ મુકેલી છે. એના પ્રભાવથી તમે સહિસલામત રીતે સમુદ્રપાર જઇ શકશો. થોડા જ દિવસોમાં એ વહાણ સિંધુસૌવીરના કાંઠે આવી લાગ્યું. પછી તે લોકોએ દેવે આપેલી તે મૂર્તિને વીતભયમાં ઉતારી દીધી. તેને ત્યાંના રાજા ઉદ્દાયનની રાણી પ્રભાવતીએ પોતાના મહેલમાં એક ચૈત્યગૃહ બનાવી તેમાં સ્થાપી અને હંમેશાં તેની પૂજા કરવા લાગી. રાજા જો કે પહેલાં તો તાપસધર્મિઓનો ભકત હતો પણ પાછળથી ધીમે ધીમે તે એ મૂર્તિ ઉપર શ્રદ્ધાવાળો થવા લાગ્યો. એક દિવસે રાણી પ્રભાવતી નાચ કરતી હતી અને રાજા વીણા વગાડતો હતો. તે વખતે રાજાની દૃષ્ટિમાં રાણીનું માથું નહીં દેખાવાથી તે અધીરો થયો અને તેથી તેના હાથમાંથી વીણા વગાડવાનો ગજ સરી પડયો. રાણી આ જોઇ ગુસ્સે થઈ અને બોલી કે "સ્વામિન્! શું મ્હેં ખરાબ નાચ કર્યો છે, જેથી તમે વીણા વગાડવી બંધ કરી દીધી?" વધુ આગ્રહ કરતાં રાજાએ ખરી હકીકત કીધી અને તેથી રાણી સમજી ગઈ કે હવે મારૂં આયુષ્ય થોડું જ બાકી રહ્યું છે. તેથી જીવનનું શ્રેયઃ સાધવા સંસારનો ત્યાગ કરી ભિક્ષુણી થવું જોઈએ. ભિક્ષુણી થવા માટે રાજાની અનુમતિ માંગતાં, ઘણા વિરોધ પછી, રાજાએ એવી સરતે તેને અનુમતિ આપી કે "જો તું મરીને સ્વર્ગમાં દેવતા થાય તો પછી અહીં આવીને મને તારે સદ્બોધ આપવો." રાણીએ તે સરત કબૂલ કરી અને ભિક્ષુણી થઈ. થોડા જ દિવસમાં કાલ કરી તે સ્વર્ગમાં દેવતા રૂપે ઉત્પન્ન થઇ. પૂર્વે આપેલા વચન પ્રમાણે તેણે સ્વર્ગમાંથી આવીને રાજાને સદ્બોધ કર્યો અને તેથી રાજા પણ દિવસે દિવસે વધારે ધર્મિષ્ઠ થયો.

રાણીના મરી ગયા પછી તે મહાવીરની મૂર્તિની, રાણીની એક વિશ્વાસુ પણ શરીરે કૂબડી એવી એક દાસી હતી તે હમેશાં ભક્તિપૂર્વક પૂજા કર્યા કરતી હતી. એક વખતે ગાંધાર દેશનો એક શ્રાવક એ પ્રભાવશાલી મૂર્તિનાં દર્શન કરવા માટે ત્યાં આવ્યો. દાસીએ તે શ્રાવકની ખૂબ પરિચર્યા કરી તેથી તે ખુશી થઈને જતી વખતે પોતાની પાસે એક પ્રકારની દૈવી પ્રભાવવાળી ગોળિઓ હતી તે તેને આપતો ગયો. એ ગોળીઓના ભક્ષણથી

Aho ! Shrutgyanam

દાસીનું કૂબડાપણું મટી જઈ તેને બદલે અપ્સરા જેવું રૂપસૌંદર્ય પ્રાપ્ત થયું. એની એ સુવર્ણ જેવી શરીરકાંતિને લીધે લોકો તેને હવે સુવર્ણગુલિકાના નામે ઓળખવા લાગ્યા. તેના એવા દૈવી સૌંદર્યની ખબર જ્યારે ઉજ્જયિનીના ચંડપ્રદ્યોતના સાંભળવામાં આવી ત્યારે તે એના ઉપર મોહિત થયો અને એને મેળવવાનો પ્રયત્ન કરવા લાગ્યો. ગુપ્તચરો દ્વારા પ્રદ્યોતનો મનોભાવ દાસીના જાણવામાં અવતાં તે પણ એના ઉપર અનુરક્ત થઈ. આખરે એક રાત્રિએ પોતાના નલગિરિ નામે દેશપ્રસિદ્ધ હાથી ઉપર બેસીને ચંડ-પ્રદ્યોત જાતે ત્યાં આવ્યો અને દાસીને ઉપાડી ગયો. જતી વખતે દાસી પોતાની સાથે તે મહાવીરની ચમત્કારિક મૂર્તિ પણ લેતી ગઈ અને તેને ઠેકાણે, ઉદાયન રાજાને તરત ખબર ન પડે તેટલા માટે પહેલાંથી જ પ્રદ્યોત પાસે તૈયાર કરાવી મંગાવેલી તેના જેવી બીજી મૂર્તિ સ્થાપિત કરતી ગઈ. બીજે દિવસે સવાર થતાં ઉદાયનને એ બધી હકીકતની ખબર પડી. ચંડપ્રદ્યોત તરફ તેણે તરત એક દૂત મોકલી તેના એ કૃત્ય પ્રત્યે પોતાનો ખૂબ તિરસ્કાર અને ક્રોધ બતાવ્યો અને છેવટે જણાવ્યું કે જો દાસી તેને રાખવી હોય તો ભલે રાખે, પણ તેની સાથે લઈ જવામાં આવેલી મહાવીરની મૂર્તિને પાછી મોકલી આપવી. ચંડપ્રદ્યોતે આનો કાંઈ જવાબ ન આપ્યો અને તેથી ઉદાયન પોતાના મોટા દળબળ સાથે અવંતી ઉપર ચઢાઈ કરવા ચાલી નીકળ્યો. એ વખતે જેઠ મહિનો ચાલતો હોવાથી મરુભૂમિ પસાર કરતાં તેના સૈન્યને પાણી વિના ઘણી પીડા ભોગવવી પડી હતી અને છેક જ્યારે પુષ્કરના પ્રદેશમાં આવ્યો ત્યારે કાંઈક શાંતિ મળી. ત્યાં થોડોક સમય થોભી તે ઉજ્જયિની પહોંચ્યો. ત્યાં આગળ પ્રદ્યોત પણ એનો ભેટો કરવા સામે તૈયાર થઈ ઉભો હતો. યુદ્ધની વાટાઘાટ ચાલી ત્યારે ઉદાયને જણાવ્યું કે 'જો તારી મરજી હોય તો આપણે બંને જાતે જ યુદ્ધ કરી એક બીજાના ભાગ્યનો નિર્ણય કરી લઈએ. વિના કારણ આ બીજા માણસોનો સંહાર કરવા કરાવવામાં શો લાભ છે?' પ્રદ્યોત ઉદાયનના આ વિચાર સાથે સમ્મત થયો અને બંનેયે રથવડે યુદ્ધ કરવાનું નિશ્ચિત કર્યું. પરંતુ પ્રદ્યોત કપટથી પાછળથી પોતાના જગપ્રસિદ્ધ નલગિરિ હાથી ઉપર ચઢી બેસી ઉદાયન ઉપર ધસી ચાલ્યો. ઉદાયન પ્રદ્યોતની આ ધૂર્તતા જોઈ સ્હેજ આશ્ચર્ય પામ્યો અને છેવટે પોતાની બાણ ચલાવવાની કુશળ કળાથી પ્રદ્યોતના હાથીના પગોને વીંધી નાંખી તેને ભોંય ભેગો કર્યો અને પછી પ્રદ્યોતને પકડી પોતાના શિબિરમાં કેદ કર્યો. આ રીતે પ્રદ્યોતનો પરાજય કરી તેને પોતાનો બંદી બનાવ્યો અને ઉદાયન ત્યાંથી તુરત પોતાના રાજ્ય તરફ રવાના થયો. ઉજ્જયિનીથી કેટલેક છેટે જતાં ચોમાસાનું જોર વધ્યું તેથી વચ્ચે એક ઠેકાણે સારૂં મેદાન જોઈ ઉદાયનના સૈન્યે ચોમાસું વિતાડવા વ્યવસ્થિત રીતે પડાવ નાખ્યો. એ આખું સૈન્ય ૧૦ વિભાગોમાં ગોઠવાયું અને દરેક વિભાગની આસપાસ કામચલાઉ માટીની દીવાલો બાંધી લેવામાં આવી. ભર ચોમાસામાં જ્યારે પર્યૂષણા (પજુસણ) નું પર્વ આવ્યું ત્યારે ઉદાયને પોતાની સાથેનાં બધાં માણસો સાથે વૈરવિરોધની ક્ષમા માંગી. પ્રદ્યોત પણ તેની સાથે જ હતો તેથી તેની પણ ક્ષમા માંગવાની તેને ધર્મદૃષ્ટિએ ફરજ જણાઈ. એટલે

Aho ! Shrutgyanam

તેણે પ્રદ્યોતને બંધનમુક્ત કીધો અને સ્વસ્થાનમાં જવા માટે વિસર્જિત કર્યો. ચોમાસું ઉતર્યા બાદ ઉદાયન પોતાના નગરમાં આવ્યો.

જે ઠેકાણે ઉદાયનનું સૈન્ય દસ વિભાગમાં કિલ્લેબંધી કરી ચોમાસું વિતાડવા રહ્યું હતું. ત્યાં સૈન્યના આશ્રયને લઇને બીજા પણ કેટલાક વ્યાપારી વગેરે લોકો આવી વશ્યા હતા કે જેઓ સૈન્યના ચાલ્યા ગયા પછી પણ ત્યાં જ સ્થિર થઈ ગયા હતા. તેથી તે સ્થાનને લોકો દશપુરના નામે ઓળખવા લાગ્યા*

---

*આવશ્યકસૂત્ર ટીકા, પા. ૨૯૬–૩૦૦.

માળવામાં આવેલા મન્દસોર શહેરને દશપુર કહેવામાં આવે છે. જૂના લેખોમાં એનું નામ દશપુર એવું જ લખેલું મળી આવે છે. 'દશપુર' નું નામ 'મંદસોર' કેમ થયું તે બાબતમાં ડો. ફ્લીટે Corpus Inscriptionum Indicarum ના ૩ જા ભાગમાં પાન ૭૯ ઉપર એક નોટ લખી છે તેમાં જણાવે છે કે—

"એ ગામને, ત્યાંના તથા ઇંદોર સુધીના આજુબાજુના ગામડીયા અને ખેડુતો, મન્દસોરને બદલે દસોરના નામથી વ્યવહારે છે. લગભગ દોઢેક સૈકા પહેલાંની દ્વૈભાષિક સનદોમાં અત્રત્ય ભાષામાં લખેલા લેખોમાં દસોર, તથા ફારસી ભાષામાં લખેલા લેખમાં મન્દસોર એમ લખેલું જોવામાં આવે છે. વળી, જેમ બેલગામ જિલ્લામાં સંપગામ અને ઉગરગોળને સ્થાને પંડિત લોકો અનુક્રમે અહિપુર અને નખપુરનો પ્રયોગ કરે છે, તેમ અહીં પણ પંડિતો પોતાના વ્યવહારમાં એને માટે સામાન્ય રીતે 'દશપુર' નામ વાપરે છે, પરંતુ, આ સંસ્કૃત નામો મૂળ અસ્તિત્વમાં હતાં, અગર તો મૂળ ગ્રામીણ શબ્દોનાં પંડિતોએ કરેલાં સંસ્કૃત ભાષાંતરિત નામો છે એ વિષે શંકાને પૂરતું સ્થાન રહે છે. પૂર્વે, એ સ્થળે પૌરાણિક રાજા દશરથનું નગર હતું એમ સ્થાનિક લોકો સમજાવે છે, એ સમજણ ખરી માનવામાં આવે, તો એ ગામનું નામ 'દસરથોર' થવું જોઇએ. હવે એનો ખરો અર્થ આ પ્રમાણે હોય એમ લાગે છેઃ—જેમ હાલમાં આજુબાજુ આવેલાં ખિલચીપુર, જંકુપુરા, રામપુરિયા, ચંદ્રપુરા, બાલાગંજ વગેરે બાર–પંદર ગામડાંનો સમાવેશ એ નગરમાં થાય છે. તેમ પૂર્વે પણ તેમાં 'દશ' ગામડાં ('પુર') નો સમાવેશ થતો હશે. પરંતુ, મન્દસોર એવું જે આખું નામ સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ છે તથા નકશામાં લખવામાં આવે છે તેના મૂળ વિષે હાલમાં કાંઇપણ સમજુતી આપી શકાય તેમ નથી. તેનું નામ 'મન્દ–દશપુર' પડ્યું હશે એમ ડા. ભગવાનલાલ ઇંદ્રજીએ મને એક વખત સૂચવ્યું હતું. મન્દ એટલે દુઃખી થયેલું કારણ કે મુસલમાનોના હાથે તેની તથા હિંદુ દેવાલયોની અત્યંત ખરાબી કરવામાં આવી હતી, અને જેને લીધે હાલમાં પણ નાગર બ્રાહ્મણો ત્યાંનું પાણી પીતા નથી. આ સૂચનાના સમર્થનમાં મારે જણાવવાનું કે જ્યારે હું એ સ્થળે ઉભો હતો, ત્યારે મેં એક પંડિતને એ વિષે પ્રશ્ન કર્યો અને તેના ઉત્તરમાં તેણે એ ગામનું 'મન્નસોર' એવું એક ત્રીજું નામ પણ જણાવ્યું. એ વિષે બીજી એક સૂચના મી. એફ. એસ. ગ્રાઉઝની છે. તે જણાવે છે કે એ નામમાં 'મદ્દ' અને 'દશપુર' એમ બે નામો ભળેલાં છે, આમાનું પહેલું મદ્દ (જુઓ. ઇં. એ. પુ. ૧૫, પા. ૧૯૫) એક ગામનું નામ છે, જેને અફઝલપુર પણ કહે છે, તથા મન્દસોરથી દક્ષિણ–પૂર્વમાં લગભગ ૧૧ મૈલ દૂર છે. એમ કહેવાય છે કે આ 'મદ્દ' નાં ભાગેલાં હિંદુ દેવાલયો પત્થરો વડે મન્દસોરનો મુસલમાની કિલ્લો બાંધવામાં આવ્યો હતો. હું ધારૂં છું કે ગમે તેવી સત્ય હકીકત 'દશપુર–મહાત્મ્ય' માંથી મળી શકશે. પરંતુ તે પુસ્તક

Aho ! Shrutgyanam

આ રીતે, જૈનપરંપરામાં મહાસેન પ્રદ્યોત વીતિભયના ઉદાયનનો આજ્ઞાંકિત થએલો માનવામાં આવે છે.

ઉદાયનનું પાછલું જીવન.

ઉદાયનના રાજકીય જીવન સંબંધમાં આટલી હકીકત પાછળના જૈન ગ્રંથોમાં મળે છે, મૂળ ભગવતી સૂત્ર કે જેનો ઉલ્લેખ ઉપર કરવામાં આવ્યો છે તેમાં ફક્ત એટલી જ બાબત વર્ણવી છે, કે જ્યારે શ્રી મહાવીર વીતિભયમાં આવ્યા ત્યારે ઉદાયન તેમનો ધર્મોપદેશ સાંભળી તેમની પાસે દીક્ષા લઈ તેમનો શિષ્ય બન્યો. આ દીક્ષા લેતી વખતે તેણે પોતાનું રાજ્ય કોને સોંપવું એ માટે એક વિલક્ષણ વિચાર કર્યો. રાજ્યનો ખરો હક્કદાર એનો પુત્ર અભીતિકુમાર થતો હતો. પણ, રાજ્યાધિકાર ચલાવનાર મનુષ્યો ઘણા ભાગે દુર્વ્યસની અને દુરાચારી થઇ જાય છે અને એવા વ્યસની અને આચારહીન મનુષ્યો મરીને દુર્ગતિમાં જાય છે, તેથી પોતાનો પુત્ર રખેને રાજ્યસત્તાના યોગે દુર્વ્યસની બની દુર્ગતિમાં જઇ પડે એવી બ્હીકથી પુત્રને રાજ્ય ઉપર ન બેસાડતાં પોતાનો ભાણેજ જે કેશીકુમાર કરીને હતો તેને બેસાડયો. પિતાના આ કૃત્યથી અભીતિકુમાર બહુ નારાજ થયો અને તેથી પોતાની બધી માલમત્તા લઇ તે ત્યાંથી ચાલ્યો ગયો અને ચંપાના રાજા કુણિક પાસે (કે જે તેનો માસિયાંઈ ભાઈ થતો હતો) જઇ રહ્યો. આ પ્રમાણે આખી જીંદગી તે પિતા ઉપર વૈરભાવ રાખતો થકો ત્યાંનો ત્યાં જ મરી ગયો. નમુના ખાતર સૂત્રકારનાં કેટલાંક વચનો અહિં આપું છું—

तए णं से उदायणे राया समणस्य भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए। उट्ठेइत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी 'एवमेयं भंते! तहमेयं! जहेयं तुब्भे वदह' त्ति......अहं देवाणुपियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामि।'...तए णं तस्स उदायणस्स रन्नो अयमेयारूवे अब्भत्थिए...समुप्पज्जित्था–' एवं खलु अभीयीकुमारे ममं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंगे पुण पासणयाए, तं जइ णं अहं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामि; ता णं अभीयीकुमारे रज्जे य रट्ठे य जाव जणवए माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे

મને જોવા મળી શક્યું નથી. આ લેખ ઉપરાંત, ઉષવદાતના નાસિકના એક પ્રાચીન લેખમાં બીજી લીટીમાં દશપુર એ સંસ્કૃત નામ વાપરવામાં આવેલું છે. (જુઓ **આર્કો. સર્વે. વેસ્ટ.** ઈં. પુ. ૪ પા. ૯૯, પ્લે, ૫૨ નં. ૫); તથા મન્દસોરના જ એક બીજા લેખમાં એ નામ વપરાયેલું જોવામાં આવે છે. મિતિ (વિક્રમ) સંવત્ ૧૩૨૧ (ઇ. સ. ૧૨૬૪-૬૫) ગુરુવાર ભાદ્રપદ શુક્લ પંચમી છે; તથા એ લેખ કિલ્લાના પૂર્વ તરફના પ્રવેશદ્વારના અંદરના દરવાજાની ડાબી બાજુએ ભીંત પર ચણી લીધેલા એક શ્વેત પત્થર પર લખેલો છે. વળી, બૃહત્સંહિતા ૧૪, ૧૧-૧૬ (જુઓ કર્નનો અહેવાલ **જર્ન. રૉ. એ. સો. નૉ. સ.** પુ. ૫. પા, ૮૪) માં પણ અવંતિ સાથે આ સ્થળનો પણ એ જ નામથી ઉલ્લેખ કરેલો છે.

Aho ! Shrutgyanam

गड्ढिए अज्झोववन्ने अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरन्तसंसार कन्तारं अणुपरियट्टिस्सइ। तं नो खलु मे सेयं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता...पव्वइत्तए। से यं खलु मे णियगं भाइणेज्जं केसिं कुमारं रज्जे ठावेत्ता...पव्वइत्तए।...तए णं से केसी कुमारे राया जाए ...।...तए णं से उदायणे राया सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ...जाव सव्वदुक्खप्पहीणे।

तए णं तस्स अभीयिस्स कुमारस्स अन्नदा कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-' एवं खलु अहं उदायणस्स पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए, तए णं से उदायणे राया ममं अवहाय नियगं भाइणिज्जं केसिकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स महावीरस्स अन्तिए पव्वइए।' इमेणं एयारूवेणं महया अप्पत्तिएणं मणो माणसिएणं दुक्खेणं अभिभूए समाणे अंतेपुरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवगरणमायाए वीतीभयाओ नयराओ पडिनिग्गच्छंति। पडिनि० २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे जेणेव चंपानयरी जेणेव कूणिए राया तेणेव उवागच्छइ...कूणियं रायं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तत्थ वि णं से विउलभोगसमिद्धिसमन्नागए यावि होत्था। तए णं से अभीयीकुमारे समणोवासए यावि होत्था। अभिगयजीवाजीवे...उदायणंमि रायरिसिंमि समणुबद्धवेरे कालमासे कालं किच्चा...। (भगवती, पृष्ठ ६१८-२०)

ઉદાયનના મરણની હકીકત.

આવશ્યકચૂર્ણિ, ટીકા આદિ ગ્રન્થોમાં ઉદાયનના મૃત્યુની નોંધ આ પ્રમાણે લીધેલી મળી આવે છેઃ-ઉદાયન રાજાએ દીક્ષા લીધા પછી લૂખા-સૂકા મળેલા ભિક્ષાહારને લીધે તેના શરીરમાં વ્યાધિ ઉત્પન્ન થયો. વૈદ્યોએ તેને દહીં ખાવાનું જણાવ્યું. તેના માટે તે વ્રજમાં રહેતો. એક વખતે વીતભયમાં ગયો. ત્યાં તેનો ભાણેજ કેશી રાજા રાજ્ય કરતો હતો કે જેને તેણે જ રાજ્ય ઉપર બેસાડયો હતો. કેશીકુમારને તેના દુષ્ટ મંત્રિઓએ ભરમાવ્યો કે 'આ ઉદાયન ભિક્ષુજીવનના કષ્ટથી કંટાળ્યો છે અને રાજ્ય મેળવવા ચાહે છે.' તેણે કહ્યું-'આપી દઈશ.' મંત્રિઓએ કહ્યું કે 'એ રાજધર્મ નથી. મળેલું રાજ્ય તે કોઈ આપી દેતું હશે?' લાંબાકાળે મંત્રિઓએ તેને સમજાવી પટાવી રાજ્ય ન આપવા માટે પાકો કર્યો. ત્યારે તેણે પૂછયું કે-'તો પછી શું કરવું જોઇએ?' મંત્રી કહે-'વિષ અપાવવું જોઈએ.' પછી તેની વ્યવસ્થા કરવામાં આવી. એક ગોવાળણના હાથે દહીંમાં ઝેર નંખાવી તે મુનિને અપાવ્યું અને એ રીતે તેના જીવનનો અંત અણાવ્યો. આ વૃત્તાંત જાણી નગરની દેવતાને ભારે ક્રોધ થયો અને તેથી તેણે આખા નગર ઉપર ધૂળની વૃષ્ટિ કરવી શરૂ કરી. ઉદાયન મુનિ ત્યાં એક કુંભારના ઘરમાં ઉતર્યા હતા અને તે કુંભાર એમની પરિચર્યા કરતો હતો તેથી તેને અનપરાધ જાણી દેવતાએ ત્યાંથી ઉપાડી સિનવલ્લી નામના પ્રદેશમાં મુક્યો કે જ્યાં તેના નામથી બીજું નગર વસ્યું. વીતભય પત્તન દેવ-

તાએ વર્ષાવેલા ધૂળના વર્ષાદથી આખું તેની અંદર દટાઇ ગયું. આજે પણ ત્યાં ધૂળનો ઢગલો મોજુદ છે.[1]

---

૧ **आवश्यकसूत्रटीका,** પૃષ્ઠ ૫૩૭-૩૮. ઉદાયન સંબંધી આ બધી હકીકતવાળી કથા, પુરાતત્ત્વ મંદિર તરફથી પ્રકટ થએલ **प्राकृत कथासंग्रह**માં પણ આવેલી છે.

આચાર્ય હેમચંદ્રની બીજી નવી હકીકત.

આચાર્ય હેમચંદ્રે પોતાના મહાવીરચરિત્રમાં, મહાવીરના સમયને લગતી જેટલી હકીકતો-કથાઓ વિગેરે પ્રાચીન જૈન ગ્રંથોમાં મળી આવી છે તે બધીનો તેમણે ઉપયોગ કર્યો છે. અને જ્યાં ત્યાં પ્રસંગ લઇ એ હકીકતોને બંધ બેસતી બનાવી છે. ઉદાયનની ઉપર આપેલી બધી કથા પણ તેમણે પોતાના એ ચરિત્રમાં સંપૂર્ણ રીતે ગોઠવી છે અને તેમાં બીજી પણ કેટલીક વધારે વાતો મુકી છે જે જૂના ગ્રંથોમાં જોવામાં આવતી નથી. પણ વધારે ધ્યાન ખેંચવા લાયક નોંધ તો તેમણે એક એ કરી છે કે-વીતભયપત્તન જ્યારે ઉક્ત રીતે, ઉદાયનના મૃત્યુને લીધે, દેવતાના કોપથી નષ્ટ થઇ ગયું ત્યારે તેમાં મહાવીરની તે ચંદનની મૂર્તિ પણ દટાઇ ગઇ હતી. એ મૂર્તિને ગુજરાતના ચાલુક્યરાજા કુમારપાળે. પોતાના કહેવાથી, જમીનમાંથી ખોદી કાઢી હતી અને એક રથમાં બેસાડી તેને પાટણમાં લાવવામાં આવી હતી. પછી તેના માટે કુમારપાળે એક ભવ્ય મંદિર બંધાવ્યું અને હેમચંદ્રના હાથે તે મૂર્તિની એ મંદિરમાં ઘણા મહોત્સવ પૂર્વક પ્રતિષ્ઠા કરાવી. હેમચંદ્રે આ બાબતનું બધું વૃત્તાંત, ભવિષ્ય પુરાણની માફક, મહાવીરના મુખથી કહેવડાવ્યું છે. રાજા શ્રેણિકનો પુત્ર અભયકુમાર મહાવીરને પૂછે છે : અને મહાવીર તેનો ઉત્તર આપે છે. ભવિષ્યની ભાષાને છોડી દઇને આપણે જો હેમચંદ્રના કથન ઉપર વિશ્વાસ કરી શકિએ તો તેમાંથી આટલું ઐતિહાસિક તથ્ય આપણે જરૂર કાઢી શકિએ કે-વીતભયનું ઉધ્વસ્ત થએલું પ્રાચીન સ્થાન આચાર્ય હેમચંદ્રને જાણીતું હતું અને ત્યાંથી એક પ્રાચીન તીર્થંકરની મૂર્તિ પણ તેમને મળી આવી હતી જે રાજા કુમારપાળ પાસેથી તેમણે પાટણમાં અણાવી હતી અને તેના માટે એક નવીન મંદિર તૈયાર કરાવી તેમાં તેને સ્થાપન કરવામાં આવી હતી. આ મૂર્તિનો પ્રસંગ લઇ હેમચંદ્રસૂરિએ ગુજરાતની ગૌરવશાલી રાજધાની પાટણ અને તેના રાજા કુમારપાળનું, કાંઇક આલંકારિક પણ ઘણે ભાગે સત્ય એવું જે વર્ણન એમણે પોતાની કલમથી કરેલું છે તે લાંબૂ હોવા છતાં પણ ભાષાંતર રૂપમાં બધું અહીં આપી દેવાનો મને લોભ થાય છે. પુરાતત્ત્વના વાંચકોને એ અવશ્ય ઉપયોગી થઈ પડશે. વર્ણન આ પ્રમાણે શરૂ થાય છેઃ-“ અભયકુમારે પુનઃ પૂછ્યું, ‘ હે પ્રભુ! તમે કહ્યું કે એ પ્રતિમા પૃથ્વીમાં દટાઇ જશે, તે પછી કયારે પ્રકટ થશે ?’ પ્રભુ બોલ્યા કે-સૌરાષ્ટ્ર, લાટ, અને ગુર્જર દેશના સીમાડામાં અણહિલપુર પાટણ નામે એક નગર વસશે, તે નગર આર્યભૂમિનું શિરોમણિ, કલ્યાણોનું સ્થાન અને અર્હત ધર્મનું એક છત્રરૂપ તીર્થ થશે. ત્યાં ચૈત્યોને વિષે રહેલી રત્નમયી નિર્મળ અર્હત પ્રતિમાઓ નંદીશ્વર વિગેરે સ્થાનોની પ્રતિમાની સત્યતા બતાવી આપશે, પ્રકાશમાન, સુવર્ણ કળશોની શ્રેણિથી જેમનાં શિખરો અલંકૃત છે એવાં તે ચૈત્યોથી જાણે સૂર્ય ત્યાં આવીને વિશ્રાંત થયો હોય તેવી શોભાને ધારણ કરશે. ત્યાં પ્રાયઃ સર્વજનો શ્રાવક થશે, અને તેઓ અતિથિસંવિભાગ કરીને જ ભોજન કરશે. બીજાની સંપત્તિમાં ઇર્ષ્યારહિત, સ્વસંપત્તિથી સંતુષ્ટ અને પાત્રમાં દાન આપનાર એવી ત્યાંની પ્રજા થશે. અલકાપુરીમાં યક્ષની જેમ ત્યાં ઘણા ધનાઢ્ય શ્રાવકો થશે. તેઓ અરિહંતભક્ત બની સાતે ક્ષેત્રોમાં દ્રવ્યનો વ્યય કરશે. સુષમા કાળની જેમ ત્યાંના સર્વ લોકો પરધન અને પરસ્ત્રીથી વિમુખ થશે. હે અભયકુમાર ! અમારા નિર્વાણ પછી સોળસો ને ઓગણોતેર વર્ષ જશે, ત્યારે એ નગરમાં ચૌલુક્ય

ઉદાયનના મરણની આ કથા–પરંપરા ઘણી પ્રાચીન હોય તેમ જણાય છે, કારણ કે આ હકીકતનું મૂળ સૂચન ખાસ આવશ્યક સૂત્ર–નિર્યુક્તિમાં કરવામાં આવ્યું છે. એ સૂત્ર–નિર્યુક્તિ ભદ્રબાહુની રચેલી કહેવાય છે અને પરંપરા તેનો સમય મહાવીર નિર્વાણ પછીની બીજી શતાબ્દી જણાવે છે. ઐતિહાસિક દૃષ્ટિએ જોતાં નિર્યુક્તિના કર્તા ભદ્રબાહુ એટલા પ્રાચીન હોય તેમ લાગતું નથી. તેમનો સમય અપેક્ષાકૃત અર્વાચીન છે, પણ ટીકાકારો કરતાં તે સમય ઘણો જ આગળ જાય તેમ છે. તેથી ટીકાકારોએ નોંધેલી ઉદાયનની એ હકીકત ઘણા જૂના સમયથી ચાલતી આવી છે એટલું તો ચોક્કસ કહી શકાય તેમ છે,

---

કુળમાં ચંદ્રસમાન, પ્રચંડ પરાક્રમી અને અખંડ શાસનવાળો કુમારપાળ નામે ધર્મવીર, દાનવીર અને યુદ્ધવીર રાજા થશે. તે મહાત્મા પોતાની પ્રજાને પિતાની જેમ પાલન કરીને મોટી સમૃદ્ધિવાન્ કરશે, સરલ છતાં અતિ ચતુર, શાન્ત છતાં આજ્ઞામાં ઇંદ્ર જેવો અને ક્ષમાવાન્ છતાં અધૃષ્ય એવો તે ચિરકાળ આ પૃથ્વી પર રાજ્ય કરશે. ઉપાધ્યાય જેમ પોતાના શિષ્યોને વિદ્યાપૂર્ણ કરે તેમ તે પોતાની પ્રજાને પોતાના જેવી ધર્મનિષ્ઠ કરશે. શરણેચ્છુઓને શરણ કરવા લાયક અને પરનારીસહોદર તે રાજા પ્રાણથી અને ધનથી પણ ધર્મને બહુ માનશે. પરાક્રમ, ધર્મ, દયા, આજ્ઞા અને બીજા પુરુષગુણોથી તે અદ્વિતીય થશે. તે રાજા ઉત્તર દિશામાં તુરુષ્ક (તુર્કસ્થાન) સુધી, પૂર્વમાં ગંગાનદી સુધી, દક્ષિણમાં વિંધ્યગિરિ સુધી અને પશ્ચિમમાં સમુદ્ર સુધી પૃથ્વીને સાધશે. એક વખતે વજ્રશાખા અને ચાંદ્રકુળમાં થયેલા આચાર્ય હેમચંદ્ર તે રાજાના જોવામાં આવશે. તે ભદ્રિક રાજા મેઘના દર્શનથી મયૂરની જેમ તે આચાર્યના દર્શનથી હર્ષિત થઇ તેમને વંદના કરવાની ત્વરા કરશે. સૂરિ જિનચૈત્યમાં ધર્મદેશના દેતા હતા, ત્યાં તેમને વંદના કરવાને માટે તે રાજા પોતાના શ્રાવક મંત્રીઓની સાથે આવશે; ત્યાં પ્રથમ દેવને નમસ્કાર કરીને પછી તત્ત્વને નહી જાણતા છતાં પણ તે રાજા શુદ્ધ ભાવથી આચાર્યને વાંદશે. પછી તેમના મુખથી શુદ્ધ ધર્મદેશના પ્રીતિપૂર્વક સાંભળીને તે રાજા સમકૃત્વ પૂર્વક અણુવ્રત (શ્રાવકનાં વ્રત) સ્વીકારશે. પછી સારી રીતે બોધને પ્રાપ્ત કરીને તે રાજા શ્રાવકના આચારનો પારગામી થશે અને રાજસભામાં બેઠો સતો પણ તે ધર્મગોષ્ઠિથી પોતાના આત્માને રમાડશે, અર્થાત્ ધર્મચર્ચા કરશે. પ્રાયઃ નિરંતર બ્રહ્મચર્યને પાળનાર તે રાજા અન્ન, શાક અને ફળાદિ સંબંધી અનેક નિયમો વિશેષ પ્રકારે ગ્રહણ કરશે. સદ્બુદ્ધિવાન્ તે રાજા અન્ય સાધારણ સ્ત્રીઓને ત્યજી દેશે, એટલુંજ નહિ, પોતાની ધર્મપત્નીઓને પણ બ્રહ્મચર્ય પાળવાનો પ્રતિબોધ કરશે. સૂરિના ઉપદેશથી જીવ, અજીવ વગેરે તત્ત્વોને જાણનાર તે રાજા આચાર્યની જેમ બીજાઓને પણ બોધ (સમ્યક્ત્વ) પ્રાપ્ત કરાવશે. અર્હત ધર્મના દ્વેષી એવા પાંડુરોગી બ્રાહ્મણો પણ તેની આજ્ઞાથી ગર્ભશ્રાવક જેવા થઇ જશે. પરમ શ્રાવકપણાને પ્રાપ્ત કરનાર અને ધર્મ જાણનાર તે રાજા દેવપૂજા અને ગુરુવંદન કર્યા વગર ભોજન કરશે નહિ. તે રાજા અપુત્ર મૃત્યુ પામેલાઓનું દ્રવ્ય લેશે નહીં. વિવેકનું ફળ એ જ છે, અને વિવેકીઓ સદા તૃપ્ત જ હોય છે. પાંડુ જેવા રાજાઓએ પણ જે મૃગયા (શિકાર) છોડેલ નહીં તેને એ રાજા છોડી દેશે, અને તેની આજ્ઞાથી બીજા સર્વ પણ છોડી દેશે. હિંસાનો નિષેધ કરનાર એ રાજા રાજ કરતે સતે મૃગયાની વાત તો દૂર રહી, પણ માંકણ કે જુ જેવા ક્ષુદ્ર પ્રાણીઓને અંત્યજ પણ મારી શકશે નહીં. પાપર્દ્ધિ (મૃગયા) નો નિષેધ કરનારા એ મહાન્ રાજાના રાજ્યમાં અરણ્યમાં રહેતી સર્વ મૃગજાતિઓ ગોષ્ઠની ગાયોની જેમ સદા નિર્વિઘ્ને વાગોળશે. શાસનમાં પાકશાસન (ઇંદ્ર) જેવો તે રાજા સર્વ જળચર, સ્થળચર અને ખેચર પ્રાણીઓની રક્ષા કરવાને માટે કાયમની અમારી ઘોષણા કરાવશે. જેઓ જન્મથી જ

Aho ! Shrutgyanam

મૂર્તિ વિગેરેની હકીકત સંબંધે ગમે તેમ હોય પણ એકંદરે જૈન કથા અને સૂત્રના આધારે આપણે આટલું તો માની શકિએ કે મહાવીરના સમયમાં સિંધુસૌવીરમાં કોઇ વીતિભય કરીને નગર હતું અને ત્યાં ઉદાયન નામે રાજા રાજ્ય કરતો હતો. તેની એક સ્ત્રી પ્રભાવતી હતી જે વૈશાલીના ચેટકની પુત્રી થતી હતી. તેને અભીઈ નામે પુત્ર હતો જેને પિતાએ ગમે તે કારણે પોતાનું રાજ્ય સોંપ્યું ન હતું, અને તેટલા માટે તે ચંપામાં

માંસના ખાનારા હતા તેઓ પણ તેની આજ્ઞાથી દુઃસ્વપ્નની જેમ માંસની વાર્તા પણ ભૂલી જશે. પૂર્વે દેશની રીતિથી શ્રાવકોએ પણ જેને પૂરેપૂરૂં છોડયું નહોતું તેવા મદ્યને આ નિર્દોષ રાજા સર્વત્ર છોડાવી દેશે. તે રાજા આ પૃથ્વીપર મદ્યને એવું રૂંધી દેશે કે જેથી કુંભકાર પણ મદ્યનાં પાત્રને ઘડવાં છોડી દેશે. મદ્યપાનના વ્યસનથી જેમની સંપત્તિ ક્ષીણ થઇ ગઈ છે એવા પુરુષોએ મહારાજાની આજ્ઞાથી મદ્યને છોડી દેવા વડે સંપત્તિવાન્ થશે. પૂર્વે નળ વગેરે રાજાઓએ પણ જે દ્યુતક્રીડાને છોડી નથી, તે દ્યુતનું નામ પણ શત્રુના નામની જેમ તે ઉન્મૂલન કરી દેશે. તેનું ઉદયવાળું શાસન ચાલતાં આ પૃથ્વીપર પારેવાની પણ ક્રીડા અને કૂકડાનાં યુદ્ધ પણ થશે નહિ. નિઃસીમ વૈભવવાળો તે રાજા પ્રાયઃ પ્રત્યેક ગ્રામે જિનમંદિર કરાવવાથી બધી પૃથ્વીને જિનમંદિરોથી મંડિત કરશે, અને સમુદ્રપર્યંત પ્રત્યેક માર્ગે તથા પ્રત્યેક નગરે અર્હત પ્રતિમાની રથયાત્રાનો મહોત્સવ કરાવશે. દ્રવ્યના પુષ્કળ દાન વડે જગતને ઋણમુક્ત કરીને તે રાજા આ પૃથ્વી ઉપર પોતાનો સંવત્સર ચલાવશે.

આવો મહાન્ પ્રતાપી કુમારપાળ રાજા એક વખતે કથાપ્રસંગમાં ગુરુમુખથી કપિલમુનિએ પ્રતિષ્ઠિત કરેલી અને રજમાં ગુપ્ત થયેલી તે પ્રતિમાની વાત સાંભળશે; જેથી તત્કાળ તે ધૂળિનું સ્થાન ખોદાવી એ વિશ્વપાવની પ્રતિમાને બહાર કાઢી લઇ આવવાનો મનોરથ કરશે. તે વખતે મનનો ઉત્સાહ અને બીજાં શુભ નિમિત્તો વડે એ રાજા પ્રતિમાને હસ્તગામી થવાનો સંભવ માનશે. પછી ગુરુની આજ્ઞા લઇ યોગ્ય પુરુષોની યોજના કરીને વીતભય નગરના તે સ્થળને ખોદાવવાનો આરંભ કરશે. તે વખતે પરમ અર્હત એવા તે રાજાના સત્ત્વથી શાસનદેવતા ત્યાં આવીને સાન્નિધ્ય કરશે. કુમારપાળ રાજાના ઘણા પુણ્યથી ખોદાવવા માંડેલા સ્થળમાં જ તત્કાળ તે પ્રતિમા પ્રકટ થશે. રાજાએ નીમેલા પુરુષો પ્રાપ્ત થયેલી તે પ્રતિમાને નવીન હોય તેમ યથાવિધિ પૂજા કરીને રથમાં બેસારશે. માર્ગમાં તેની અનેક પ્રકારે પૂજાઓ થશે, તેની પાસે અહોરાત્રિ સંગીત થયા કરશે, તેની સમીપે ગામડાની સ્ત્રીઓ તાળીઓ દઇને રાસડા લેશે, પંચશબ્દ વાજીંત્રો હર્ષપૂર્વક વાગશે, અને તેની બન્ને બાજુ ચામરો વીંજાતા જશે. એવી રીતે મોટી ધામધૂમ સાથે એ પ્રતિમાને રક્ષકજનો પાટણના સીમાડામાં લાવશે. તે હકીકત સાંભળીને અંતઃપુર પરિવાર સહિત ચતુરંગ સેનાથી પરવરેલો કુમારપાળ રાજા સર્વસંઘની સાથે તે પ્રતિમાની સામે જશે. ત્યાં જઇ તે પ્રતિમાને પોતાને હાથે રથમાંથી ઉતારી હાથી ઉપર બેસારીને મોટા ઉત્સવ સાથે પોતાના નગરમાં પ્રવેશ કરાવશે. અને પોતાના રાજભવનની પાસેના ક્રીડા ભવનમાં રાખીને તેની વિધિપૂર્વક ત્રિકાળ પૂજા કરશે. પછી તે પ્રતિમાને અર્થે ઉદાયન રાજાએ જે આજ્ઞા લેખ લખી આપ્યો હતો, તે વાંચીને કુમારપાળ તેને પ્રમાણ કરશે. નિષ્કપટી કુમારપાળ રાજા તે પ્રતિમાને સ્થાપન કરવા માટે એક સ્ફટિકમય પ્રાસાદ કરાવશે. જાણે અષ્ટાપદ પર રહેલા પ્રાસાદનો યુવરાજ હોય તેવો તે પ્રાસાદ જોવાથી જગતને વિસ્મય પમાડશે. પછી તે પ્રાસાદમાં તે પ્રતિમાનું સ્થાપન કરશે- એ પ્રમાણે સ્થાપિત કરેલી તે પ્રતિમાના પ્રભાવથી કુમારપાળ રાજા પ્રતિદિન પ્રતાપ, સમૃદ્ધિ અને આત્મકલ્યાણમાં વૃદ્ધિ પામ્યા કરશે. હે અભયકુમાર ! દેવ અને ગુરુની ભક્તિ વડે એ કુમારપાળ રાજા આ ભારતવર્ષમાં

Aho ! Shrutgyanam

અજાતશત્રુના આશ્રયે જઈને રહ્યો હતો. તેમ જ મહાસેન રાજા સાથે ઉદાયનને લડાઈનો પ્રસંગ બન્યો હશે, અને તેમાં ઉદાયનને વિજય મળ્યો હશે.[૧]

એક વિલક્ષણ પરંપરાસામ્ય.

જૈન ગ્રંથોમાં જેમ વીતભયના ઉદાયન સાથે ચંદનકાષ્ઠની બનાવેલી જૈન મૂર્તિનો આ પ્રમાણે સંબંધ લખેલો મળી આવે છે તેવો જ એક સંબંધ કૌશાંબીના ઉદયન સાથે બૌદ્ધ ગ્રંથોમાં જોડેલો મળી આવે છે. પ્રસિદ્ધ ચીની પ્રવાસી બૌદ્ધશ્રમણ યવનચંગ (કે હ્વેનત્સંગ) જ્યારે હિન્દુસ્થાનમાં આવ્યો ત્યારે બૌદ્ધ લોકોમાં એ વાત ઘણી જાણીતી હોય તેમ લાગે છે. તેણે પોતાના પ્રવાસવૃત્તાંતમાં, કૌશાંબીનું વર્ણન લખતાં નોંધ કરી છે કે–"કૌશાંબી શહેરમાં એક જૂનો મહેલ છે જેની અંદર ૬૦૦ ફીટ ઉંચો મોટો વિહાર છે. એ વિહારમાં ચંદનના લાકડામાંથી કોરી કાઢેલી એવી બુદ્ધની મૂર્તિ છે જેના ઉપર પત્થરનું છત્ર કરેલું છે. આ કૃતિ ઉદાયન રાજાની કરેલી કહેવાય છે. આ મૂર્તિ ઘણી ચમત્કારિક છે અને એની અંદર દૈવી તેજ રહેલું છે જે વખતે વખતે ઝબકી

તારા પિતાની જેવો થશે." [ભાવનગરની જૈન ધર્મ પ્રસારક સભા મારફત પ્રકટ થએલ, મહાવીરચરિત્ર ભાષાંતર, પાન ૨૬૯–૨૭૨ (બીજી આવૃત્તિ).]

૧. કદાચિત્, સુવર્ણગુલિકા નિમિત્તે ચંડપ્રદ્યોત સાથે થએલા યુદ્ધની કિંવદન્તીમાં પણ પ્રાચીનતાનો પુરાવો હોય એમ એક બીજા સૂત્રના સૂચન ઉપરથી અનુમાન થાય છે. ભગવતી જેટલા જ પ્રાચીન સૂત્ર નામે પ્રશ્ન વ્યાકરણમાં, એક ઠેકાણે જેમના નિમિત્તે મોટાં યુદ્ધો થયાં હતાં એવી કેટલીક સ્ત્રીઓનાં નામો ગણાવ્યાં છે જેમાં **सुवर्णगुलिका** નું નામ પણ લખેલું છે. સૂત્રપાઠ આ પ્રમાણે છેઃ—

'मेहुणमूलं च सुव्वए तत्थ तत्थ वत्तपुव्वा संगामा जणक्खयकरा–सीयाए, दोवईए कए, रुप्पिणीए, पउमावईए, ताराए, कंचणाए, रत्तसुभद्दाए, अहिन्नियाए, सुवन्नगुलियाए, किन्नरीए, सुरूवविज्जुमतीए, रोहिणीए य; अन्नेसु य एवमादिएसु बहवो महिलाकएसु सुव्वंति अइक्कंता संगामा । [આગમોદય સમિતિદ્વારા પ્રકાશિત પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્ર (અભયદેવસૂરિની ટીકા સાથે) પૃષ્ઠ ૮૫.]

"સ્ત્રીસંસર્ગના મૂળે પ્રાચીનકાલમાં ત્યાં ત્યાં થએલા સંગ્રામો સાંભળીએ છીએ; જેમકે સીતા અને દ્રૌપદીના માટે, તથા રુકિમણી, પદ્માવતી, તારા, કંચના, રક્તસુભદ્રા, અહિન્નિકા, સુવર્ણગુલિકા, કિન્નરી, સુરૂપ–વિદ્યુન્મતી, રોહિણી, આદિ અને બીજી પણ અનેક સ્ત્રીઓ નિમિત્તે સંગ્રામો થએલા છે."

મૂળ સૂત્રમાં આપેલા આ ઉદાહરણોની વ્યાખ્યા સમજાવતાં ટીકાકારે સંક્ષેપમાં તે બધી કથાઓ લખી છે જે એ સ્ત્રીઓના વિષયમાં બીજા બીજા ગ્રંથો પુરાણો આદિમાં પ્રસિદ્ધ છે. એમાં સુવર્ણગુલિકાની જે હકીકત આપી છે તે, ઉપર આપેલી હકીકતને અક્ષરે અક્ષર મળતી છે અને તેથી સાબીત થાય છે કે સુવર્ણગુલિકા નિમિત્તે ઉદાયનના ચંડપ્રદ્યોત સાથે થએલા સંગ્રામની પરંપરા ઘણી પ્રાચીન છે. (સૂત્રકારે ગણાવેલાં સ્ત્રીઓનાં નામોમાંથી અહિન્નિકા, કિન્નરી અને સુરૂપવિદ્યુન્મતીની હકીકત ટીકાકાર અભયદેવસૂરિની જાણમાં ન આવવાથી તેમણે એમની કશી હકીકત લખી નથી, ફક્ત **'अप्रतीता'** (અજ્ઞાત) એટલીજ નોંધ કરી છે. એ ઉપરથી ટીકાકારની ચોક્કસાઈનો પુરાવો નોંધવા જેવો.)

Aho ! Shrutgyanam

ઉઠે છે. આ મૂર્તિને ઉપાડી જવા માટે જુદા જુદા દેશના અનેક રાજાઓએ પોતાની શક્તિ વાપરી છે અને ઘણા માણસોએ ભેગા થઇને એને ખસેડવાનો પ્રયત્ન કર્યો છે પણ તેઓ એને જરા પણ હલાવી શક્યા નથી. તેઓ એ મૂર્તિની પ્રતિકૃતિ બનાવીને તેની પૂજા કરે છે* અને તેમ કરી, મૂળ મૂર્તિની જ તેઓ પૂજા કરે છે એમ શ્રધ્ધા રાખે છે. (જુઓઃ-Beal's Buddhist Records of the Western Countries, Book I. p. 234) આવી જ એક મૂર્તિની બીજી નોંધ, એ મુસાફરે ખોતાન પ્રદેશના પિમા શહેરના વૃત્તાતમાં લીધી છે. તે લખે છે કે-" અહીં (પિમા શહેરમાં) ચંદનના લાકડામાંથી બનાવેલી બુદ્ધની એક ઉભી આકૃતિની મૂર્તિ છે. આ મૂર્તિ લગભગ ૨૦ ફીટ ઉંચી છે. આ મૂર્તિ ઘણી ચમત્કારિક છે અને એમાંથી તેજ સ્ફુર્યા કરે છે. જેમને કોઈ પણ પ્રકારનો રોગ થાય છે તેઓ આ મૂર્તિની સોનાના વરખથી પૂજા કરે છે અને તેમ કરવાથી તેઓ સાજા થઈ જાય છે-એવી અહીંના લોકોની માન્યતા છે. જેઓ અંતઃકરણપૂર્વક આ મૂર્તિની પ્રાર્થના કરે છે તેમનું ઇચ્છેલું સફળ થઈ જાય છે. અહીંના લોકો કહે છે કે, આ મૂર્તિ, એ જૂના જમાનામાં કે જ્યારે બુદ્ધ જીવતા હતા ત્યારે, કૌશાંબીના ઉદાયન રાજાએ બનાવી હતી; બુદ્ધ જ્યારે નિર્વાણ પામ્યા ત્યારે એ મૂર્તિ પોતાની મેળે ત્યાંથી આકાશમાં ઉડીને આ રાજ્યના ઉત્તરે આવેલા હો-લો-લો-કિ-અ નામના શહેરમાં આવીને રહી. આ નગરના લોકો શ્રીમાન્ અને વૈભવશાલી હતા, તેમ જ મિથ્યામતના અનુરાગી હતા. તેમને કોઇપણ બીજા પ્રકારના ધર્મને માટે માન ન હતું. જે દિવસથી એ મૂર્તિ ત્યાં આવી હતી ત્યારથી તેની દૈવી ચમત્કૃતિ પ્રકટ થવા લાગી. પણ લોકોએ તેના તરફ જરાએ આદર દેખાડયો નહીં.

ત્યાર પછી એક અર્હતે ત્યાં આવીને તેને નમસ્કાર કરી તેની પૂજા કરી. તે દેશના લોકો એ અર્હતનો આકાર અને વેશ જોઇને ભયભીત થયા અને રાજાને જઇને તરત તેની ખબર આપી. રાજાએ એવું ફર્માન કાઢયું કે એ આગંતુક મનુષ્યને રેતી અને ધૂળથી ઢાંકી દેવો. તેથી લોકોએ તેને તેવી રીતે હેરાન કર્યો અને કોઇએ અન્નપાણી આપ્યાં નહિ. તેની આ સ્થિતિ જોઇને એક માણસ કે જે હંમેશાં એ મૂર્તિની પૂજા કરતો હતો તેને ક્રોધ થયો અને તેથી છાની રીતે આવી તેણે એ અર્હતને ખોરાક આપ્યો. જતી વખતે તે અર્હતે એ માણસને બોલાવીને કહ્યું કે આજથી સાત દિવસ પછી અહીં રેતી અને ધૂળની ભયંકર વૃષ્ટિ થશે જેથી આ આખું નગર દટાઇ જશે અને કોઇપણ જીવવા પામશે નહીં; એટલા માટે તારે પોતાનો જીવ બચાવવો હોય તો અહીંથી તરત ચાલ્યા જવું જોઈએ. ગામના લોકોએ મને જે રેતી અને ધૂળથી ઢાંકી દઇ હેરાન કર્યો છે તેનું આ ફળ મળનાર છે. આવી રીતે કહીને તે અર્હત્ બીજી ક્ષણે અદૃશ્ય થઇ ગયો. પછી તે માણસે શહેરમાં આવીને પોતાના સગા સંબંધીઓને આ વાત જણાવી પણ

*આવી જાતની એ મૂર્તિની એક પ્રતિકૃતિ યવનચંગ પોતાની સાથે ચીનમાં લઇ ગયો હતો તેની નોંધ પણ એ જ પુસ્તકમાં, પ્રસ્તાવના, પાન ૨૦ ઉપર કરેલી છે.

તેઓ સાંભળીને માત્ર તેની સામે હસી રહ્યા. બીજે દિવસે એકાએક એક ભયંકર વંટોળીયો થયો જેના લીધે જમીનપરની બધી ગંદી ધૂળ આકાશમાં ઉડી ગઈ અને બદલામાં આકાશમાંથી અનેક પ્રકારના મૂલ્યવાન્ પદાર્થો નીચે પડયા. આથી લોકો, તે માણસની ઉલટી ખૂબ નિંદા કરવા લાગ્યા.

પરંતુ તે માણસને તો ભવિષ્યના બનાવની ચોક્કસ ખાત્રી હોવાથી તેણે શહેર બહાર નિકળી જવા માટે જમીનમાં એક માર્ગ બનાવ્યો અને તેમાં જઈ તે છુપાઈ રહ્યો. સાતમે દિવસે સંધ્યા કાળ થતાં ત્યાં રેતી અને ધૂળની ભયંકર વૃષ્ટિ થઈ જેથી તે આખું નગર દટાઈ ગયું. પછી તે માણસ જમીનમાં ખોદેલી સુરંગમાંથી બહાર નીકળી પૂર્વ દિશા તરફ ચાલવા લાગ્યો અને આ પિમા શહેરમાં આવીને મુકામ કર્યો. એ માણસ અહીં આવ્યો કે તરત જ તે મૂર્તિ પણ અહીં આવીને પ્રકટ થઇ. માણસે તેની અહીં પણ પૂજા કરી અને ત્યારબાદ તે અહીં જ રહી ગયો. જૂના ગ્રંથોમાં એમ કહેલું કે " જ્યારે શાક્યધર્મનો અંત આવશે ત્યારે આ પ્રતિમા પાછી નાગલોકમાં ચાલી જશે. હો–લો–લો–કિઅ શહેરની જગ્યાએ આજે એક મોટો રેતીનો ટેકરો થઇ રહેલો છે. " (બીલનું ઉપરોક્ત પુસ્તક, ભાગ ૨, પાન ૩૨૪.)

યવનચંગ અને દિવ્યાવદાન.

યવનચંગે આપેલી ઉપરોક્ત હકીકતનું મૂળ શું હશે તે કાંઇ હજી જાણવામાં આવ્યું નથી, પણ એને મળતી કેટલીક હકીકત દિવ્યાવદાનમાં મારા જોવામાં આવી છે. દિવ્યાવદાનમાંની હકીકતનો કેટલોક ભાગ યવનચંગની હકીકત સાથે મળતો જોઇને તો મને આશ્ચર્ય થયું જ, પણ એ કરતાંયે વધારે આશ્ચર્ય એ જાણીને થયું કે યવનચંગ અને દિવ્યાવદાનમાંની–બંને હકીકતો ભેગી મળીને ઉપરોકત ઉદાયનવાળી જૈન હકીકત સાથે પણ કેટલેક અંશે, એક થઇ જાય છે. દિવ્યાવદાનમાં રુદ્રાયણાવદાન નામનું એક પ્રકરણ છે જેનો ટુંક સાર આ પ્રમાણે છેઃ–

જે વખતે ભગવાન્ બુદ્ધ રાજગૃહમાં રાજા બિંબિસારના વખતમાં રહેતા હતા તે વખતે, બે મહા નગરો કહેવાતાં હતાં એક પાટલીપુત્ર અને બીજું રોરુક. રોરુક નગરમાં રુદ્રાયણ નામે રાજા રાજ્ય કરતો હતો. તેને ચંદ્રપ્રભા નામે દેવી (રાણી), શિખંડી નામે કુમાર, તથા હિરુ અને ભિરુ નામના બે મુખ્ય મંત્રિઓ હતા. રાજગૃહમાં રાજા બિંબિસાર રાજ્ય કરતો હતો અને તેને વૈદેહી મહાદેવી, અજાશત્રુ કુમાર અને વર્ષાકાર નામે બ્રાહ્મણ મુખ્ય મંત્રી હતો. એક વખતે રાજગૃહના કેટલાક વ્યાપારિઓ રોરૂક નગરમાં ગયા અને તેઓ ત્યાંના રાજા રુદ્રાયણને મળ્યા. રુદ્રાયણે રાજગૃહના બિંબિસારની હકીકત સાંભળી તેની સાથે મિત્રતા બાંધવાના ઇરાદાથી પોતાના રાજ્યમાં જે રત્ન વિગેરે બહુમૂલ્ય પદાર્થો થતા હતા તે કેટલાક ભેટ રૂપે ત્યાં મોકલી આપ્યા. બિંબિસારે પણ તે ભેટના જવાબમાં પોતાના દેશમાં જે મૂલ્યવાન્ વસ્ત્રો તૈયાર થતાં હતાં તે કેટલાક મોકલી

Aho ! Shrutgyanam

આપ્યાં. આ રીતે દિવસે દિવસે એ બંને રાજાઓની મિત્રાચારી વધારે દૃઢ થતી ગઇ. એક વખતે રાજા બિંબિસારે રોરુકના એ રાજાને ધર્મમાર્ગનો પરિચય કરાવવા માટે ભગવાન્ બુદ્ધની એક ભવ્ય છબી તૈયાર કરાવી, તેના તરફ ઘણા માન પૂર્વક મોકલી આપી. તે છબી જોઇ રુદ્રાયણ રાજા બહુ આશ્ચર્ય પામ્યો અને છબી લાવનાર મનુષ્યોને, તે છબી કોની છે એ વિગેરે પ્રશ્નો પૂછી ભગવાન્ બુદ્ધના કલ્યાણકર જીવન અને ધર્મમાર્ગથી પરિચિત થયો. પછી તેની ઇચ્છા પણ એ ધર્મના અનુયાયી થઈ જવાની થઈ. ત્યાર પછી રાજા બિંબિસારે એ રાજાને વિશેષ ધર્મબોધ આપવા માટે ભગવાન્ બુદ્ધને વિજ્ઞપ્તિ કરીને મહાકાત્યાયન નામના એક ભિક્ષુ અને શૈલા નામની એક ભિક્ષુણીને એ દેશમાં મોકલાવ્યાં. ભિક્ષુએ રાજાને અને ભિક્ષુણીએ રાજાના અંતઃપુરમાં રહીને રાણીને ભગવાન્ બુદ્ધના ધર્મનો બોધ આપવા માંડયો. એ બંનેના ઉપદેશથી રાજા અને રાણીની ધર્મ પ્રતિ ઘણી પ્રીતિ થઈ.

એ રાજા વીણા વગાડવામાં બહુ પ્રવીણ હતો અને રાણી નૃત્ય કરવામાં કુશલ હતી. એક દિવસે જ્યારે રાજા વીણા વગાડતો હતો અને રાણી નૃત્ય કરતી હતી, ત્યારે રાજાએ રાણીના મરણકાલ નજીક આવ્યાનાં લક્ષણો જોયાં, તેથી તેના હૃદયમાં ધ્રાસકો પડયો અને તેના હાથમાંથી વીણા જમીન પર પડી ગઈ. આ જોઇ રાણી ચમકી અને રાજાને કહેવા લાગી કે 'દેવ ! શું મ્હેં ખરાબ નાચ કર્યો ?' રાજા કહે 'ના, એમ નથી.' પછી તેણે એ જોએલી બધી વાત કહી અને આજથી સાતમે દિવસે તારૂં મૃત્યુ થશે એમ કહ્યું. તે સાંભળીને રાણીએ કહ્યું 'દેવ ! જ્યારે એમ છે તો પછી, જો તમે મને અનુમતિ આપો તો મારૂં કલ્યાણ કરવા માટે હું પ્રવ્રજ્યા લઈ ભિક્ષુણી થઈ જાઉં. રાજાએ એવી શરતે અનુમતિ આપી કે–જો તું મરીને દેવ થાય તો અહીં આવીને પછી મને તારે દર્શન આપવું. રાણીએ તે વાત કબૂલ કરી અને શૈલા નામા ભિક્ષુણીની પાસે પ્રવ્રજ્યા લીધી. સાતમે દિવસે તે રાણી મરણસંજ્ઞાની ભાવના કરતી થકી મરીને ચાતુર્મહારાજિક દેવલોકમાં દેવતાપણે ઉત્પન્ન થઈ. કરેલી પ્રતિજ્ઞા પ્રમાણે તે પછી રાત્રે આવીને રાજાને પ્રત્યક્ષ થઈ ત્યારે રાજાએ શય્યામાં સૂતા સૂતા બંને હાથો લાંબા કરી તેને આલિંગન કરવા માટે પાસે બોલાવી. દેવી કહે 'મહારાજ ! હું તો અહીંથી મરીને સ્વર્ગમાં દેવકન્યા થઈ છું. જો તમારે મારો સમાગમ જોઇતો હોય તો તમે પણ ભગવાન્ બુદ્ધ પાસે પ્રવ્રજ્યા લો જેથી કાળ કર્યા પછી તમે સ્વર્ગમાં ઉત્પન્ન થઇ શકશો અને મારી સાથે સમાગમ કરી શકશો.' એમ કહી દેવી અંતર્ધાન થઇ. રાજાએ આખી રાત સંકલ્પ વિકલ્પમાં વીતાડી, આખરે પ્રવ્રજ્યા લેવાનો નિશ્ચય કીધો, અને તે પ્રમાણે પોતાના પુત્રને શિખંડીને રાજ્ય ઉપર બેસાડી પોતે ત્યાંથી રાજગૃહ નગરમાં જ્યાં ભગવાન્ બુદ્ધ રહેતા હતા ત્યાં ગયો. જતી વખતે પુત્રને ધર્મનીતિપૂર્વક રાજ્યનું રક્ષણ અને પ્રજાનું પાલન કરવા માટે બે શબ્દો કહેતો ગયો અને પોતાના જે બે મુખ્ય મંત્રિઓ હતા તેમને બધી વ્યવસ્થા સાંભળવાનું સૂચન કરતો ગયો. તેણે પછી ભગવાન્ બુદ્ધ પાસે પ્રવ્રજ્યા લીધી અને તે તેમનો શિષ્ય બન્યો.

Aho ! Shrutgyanam

આ તરફ તેનો પુત્ર શિખંડી બીજા બે દુષ્ટ મંત્રિઓની સંગતિથી અનીતિના માર્ગે ચઢયો અને પ્રજાને પીડા આપવા લાગ્યો. જૂના જે બે સારા મંત્રી હતા તેમને રાજ્યકારભારથી દૂર કર્યા. આ હકીકતની ખબર જ્યારે કેટલાક વ્યાપારિઓ મારફત પ્રવ્રજિત થએલા એ વૃદ્ધ રાજાની જાણમાં આવી ત્યારે તે વ્યાપારિઓ સાથે પ્રજાજન જોગો આશ્વાસનનો સંદેશો મોકલ્યો અને જણાવ્યું કે શિખંડીને એ અન્યાયાચરણમાંથી દૂર રાખવા માટે હું જાતે જ ત્યાં આવીશ. વ્યાપારિઓ સાથે આવેલો એ સંદેશો એક બીજાની કર્ણપરંપરાએ એ દુષ્ટ મંત્રીઓની જાણમાં આવતાં તેઓ મનમાં ગભરાયા અને એ વૃદ્ધ રાજા રોરુક નગરમાં ન આવી શકે તેનો ઉપાય વિચારવા લાગ્યા. પછી તે બંને શિખંડી રાજા પાસે જઇને તેને કહેવા લાગ્યા કે-' દેવ, સંભળાય છે કે વૃદ્ધ રાજા અહીં આવે છે.' રાજા કહે-' તે તો પ્રવ્રજિત થએલો છે, તેને હવે અહીં આવવાનું શું પ્રયોજન હોય?' મંત્રીઓ કહે-' દેવ, જેણે એક દિવસ પણ રાજ્ય કર્યું હોય છે તેનું મન પછી રાજ્ય વિના કયાંએ રમી શકતું નથી. એટલે ફરી એ રાજ્ય મેળવવા પાછો અહીં આવે છે.' રાજા કહે-' જો રાજા થશે તો હું પાછો કુમાર થઈ જઇશ એમાં શો વિરોધ છે!' મંત્રીઓ કહે-' દેવ, એ અયુક્ત છે. જેણે કુમારો, મંત્રીઓ અને પ્રજાજનોના નમસ્કારો ઝીલ્યા હોય તે કેમ પાછો યુવરાજ પદમાં દાખલ થઈ શકે?' ઈત્યાદિ ઘણી રીતે તે રાજાને તેમણે ખોટી રીતે ભરમાવ્યો અને આખરે તેની અનુમતિ મેળવી કેટલાક ઘાતક મનુષ્યોને એ આવતા વૃદ્ધ રાજાની સામે મોકલ્યા જેમણે તેનો શિરઃછેદ કરી તેના જીવનનો અંત આણ્યો. પછી ક્રમે ક્રમે તે શિખંડી રાજા વધારે દુષ્ટ થતો ગયો. એક દિવસે તે શહેર બહાર સઘળા લવાજમા સાથે ફરવા નિકળ્યો તે વખતે રસ્તામાં એક ઠેકાણે એકાંતમાં ઉભા રહેલા આગળના તે મહાકાત્યાયન ભિક્ષુને જોયો. રાજા તેને જોઇને ક્રોધિત થયો અને પોતાનાં માણસોને તેના ઉપર મૂઠી ધૂળ, નાંખવાનો હુકમ કર્યો. લોકોએ તેના ઉપર એટલી બધી ધૂળ નાંખી કે જેથી તેનું આખું શરીર તેમાં દટાઈ ગયું.

આ બાબતની ખબર જ્યારે પેલા બે જૂના મંત્રીઓને થઇ ત્યારે તેઓ ત્યાં આવ્યા અને તે ભિક્ષુને ધૂળના ઢગલામાંથી બહાર કાઢયો. ભિક્ષુએ કહ્યું આ નગરનો વિનાશકાળ આવી ગયો છે અને આજથી સાતમે દિવસે ધૂળની વૃષ્ટિના લીધે આ આ આખું નગર જમીનદોસ્ત થઈ જશે. તેથી તમારે અહીંથી બચી જવું હોય તો ઘરથી માંડી નદી સુધી જમીનમાં એક સુરંગ ખોદાવી રાખો અને એક નાવ તૈયાર કરી મુકો. પહેલે દિવસે એક મોટો વંટોળિયો થશે જેના લીધે શહેરની બધી ખરાબ ધૂળ આકાશમાં ઉડી જશે. પછી બીજે દિવસે કુલોની વૃષ્ટિ થશે. ત્રીજે દિવસે વસ્ત્રોની વર્ષા થશે. એમ અનુક્રમે રત્નોની વર્ષા થશે અને પછી છેવટે ધૂળની વર્ષા થઇ બધું શહેર તેમાં દટાઇ જશે. તમે પુણ્ય કાર્ય કરનાર હોવાથી એ આફતમાંથી ઉગરી શકશો. એટલે તૈયાર કરી રાખેલી નાવ રત્નોથી ભરીને નદી માર્ગે તમે અન્ય દેશમાં ચાલ્યા જજો. છેવટે બધું તેમ થયું અને તે મંત્રીઓ જે પ્રદેશમાં જઇને રહ્યા ત્યાં તેમના નામથી ક્રમથી હિરુક અને ભિરુકચ્છ નામનાં નગરો વસ્યાં.

Aho ! Shrutgyanam

મહાકાત્યાયન ભિક્ષુ પણ ત્યાંથી નીકળી લમ્પાક, સ્યામાકરાજ્ય, વોક્કાણ વગેરેના મુલ્કમાં થતો સિંધુ નદી ઉતરી મધ્યદેશમાં આવેલી શ્રાવસ્તી નગરીમાં જ્યાં આગળ ભગવાન્ બુદ્ધ રહેતા હતા ત્યાં સંઘ ભેગો જઇ મળ્યો.

રુદ્રાયણ રાજાની આ હકીકત, જ્યાં સુધી હું જાણું છું, દક્ષિણના હીનયાન સંપ્રદાયના પાલી સાહિત્યમાં કયાંએ આવેલી નથી. ઉત્તરના મહાયાન સંપ્રદાયના સંસ્કૃત અને ટીબેટીયન સાહિત્યમાંજ આ હકીકત મળી આવે છે. દિવ્યાવદાન સિવાય, ક્ષેમેન્દ્રના અવદાન કલ્પલતા[1] નામક ગ્રંથમાં પણ રુદ્રાયણાવદાન આવેલું છે. અવદાનશતક હાલમાં મારી પાસે નહિ હોવાથી તેમાં એ વૃત્તાંત છે કે નહીં તે હું કહી શકતો નથી. ખેર. એ બીજા ગ્રંથોમાં હોય કે ન હોય તેની ચર્ચા કાંઈ અહીં પ્રસ્તુત નથી. આપણે એ જોવાનું છે કે, યવનચંગ અને રુદ્રાણાયવદાનની હકીકતમાં કેટલી બધી સમાનતા મળી આવે છે. યવનચંગ અને હો-લો-લો-કિય નગરના નાશની અને આ અવદાનમાં જણાવેલી રો-રુ-ક નગરના નાશની હકીકતમાં જરાએ તફાવત નથી. તેથી હું ધારૂં છું કે આ બંને હકીકતોનું મૂળ એક જ હોવું જોઈએ, એટલું જ નહિ પણ મને તો યવનચંગનું હો-લો-લો-કિય એ અવદાનમાંના રો-રુ-ક નામનું જ ચીની ઉચ્ચારણ હોય એમ સ્પષ્ટ જણાય છે. થોમસ્ વૉટર્સ, એ નામની જોડણી o-lao-lo-ka (Rallaka ?) આ પ્રમાણે કરે છે;[2] અને મિ. બીલ Ho-lo-lo-kia આ પ્રમાણે કરે છે. બીલ આનું બીજું ઉચ્ચારણ (ફુટનોટમાં) Ragha or Raghan, or perhaps Ourgha આ પ્રમાણે આપે છે[3] અને વૉટર્સ સંસ્કૃત ઉચ્ચારણ **रल्लक** આપે છે. પણ આ બંને ઉચ્ચારણો કરતાં મને અવદાનમાંનું રો-રુ-ક એ ઉચ્ચારણ વધારે સંગત અને ભાષાશાસ્ત્રને મળતું લાગે છે. તેથી આ બંને સ્થાનો એક જ હોવાનું મારૂં અનુમાન મને સપ્રમાણ જણાય છે.

પણ, અહીં એક બીજો ભૌગોલિક પ્રશ્ન ઉપસ્થિત થઈ શકે તેમ છે. દીઘનિકાય નામના પ્રાચીન પાલી આગમના મહાગોવિંદ નામના સુત્તંતમાં[4] તથા જાતકટ્ઠકથામાં[5]

---

૧. બિબ્લીઓથેકા ઇન્ડિકામાં પ્રકાશિત થએલ **अवदानकल्पलता** ભાગ ૧, પાન ૯૭૦ થી ૧૦૨૭.

૨. જુઓ, થોમસ્ વૉટર્સનું On Yavan Chwang's "Travels in India," પુસ્તક ૨ જું, પાન ૨૯૮.

૩. બીલનું, Buddhist Records of the western World, પુસ્તક ૨ જું, પાન ૩૨૨.

૪. **दंतपुरं कलिंगानं अस्सकानं च पोतनं।**
माहीस्सती अवंतीनं सोवीरानं च रोरुकं॥
मिथिला च विदेहानं चंपा अंगेसु मापिता।
वाराणसी च कासीनं, एते गोविंदमापिता ति॥

પાલી ટેક્સ્ટ સોસાયટીએ છપાવેલ, **દીઘનિકાય**, ભાગ ૨, પૃ૦ ૨૩૫, **મહાવસ્તુ** ભાગ ૩, પાન ૨૦૮-૨૦૯, માં પણ આ એ ગાથાઓ સંસ્કૃતમાં આપેલી છે.

૫. **જાતકટ્ઠકથા** ભાગ ૩, પા. ૪૭૦-' **अतीते सोवीररट्ठे रोरुवनगरे** '।

Aho ! Shrutgyanam

રોરૂકને સૌવીર દેશનું એક પાટનગર જણાવ્યું છે; અને સૌવીરદેશનું સ્થાન, હિન્દુસ્થાનના નકશામાં, પ્રસિદ્ધ બૌદ્ધ વિદ્વાન્ હ્રીસ ડેવિડસ્ ઘણા ભાગે કચ્છના અખાતના નાકા ઉપર મુકે છે.[૧] ત્યારે બીજી બાજૂ યવનચંગે વર્ણવેલું Ho-lo-lo-kia અગર o-lao-lo-ka એ ખોતાનના પ્રદેશમાં (મધ્ય એશિયામાં) આવેલું હતું. તેથી એ બંને સ્થાનોના ઐક્યના અનુમાનમાં આ પ્રમાણ બાધક રૂપે ઉભું રહે છે. એના સમાધાનમાં ઘણાં સાધક બાધક પ્રમાણો ઉપસ્થિત થાય છે. પ્રથમ તો એ કે દીઘનિકાય આદિમાં જણાવેલો સૌવીર દેશ કયાં આવેલો હતો તેનો હજી કાંઈ ચોક્કસ પત્તો લાગ્યો નથી. વૈદિક પુરાણો અને જૈન સાહિત્યમાં પણ સૌવીર દેશનું નામ આવે છે અને ઘણી વખતે સિન્ધુ-સૌવીરના ભેગા સામાસિક નામ વડે પણ તેનો ઉલ્લેખ થએલો મળી આવે છે. એ સૌવીર દેશ એ જ બૌદ્ધોનો સૌવીર હોય તો તે સિન્ધુ નદીની આસપાસ આવેલો હોવો જોઈએ. પણ જૈન અને બૌદ્ધ બંનેના સૌવીર એક હોય તેમ જણાતું નથી. કારણ કે બૌદ્ધ જેટલા જ જૂના જૈન ગ્રંથોમાં સૌવીરના પાટનગર તરીકે, જેમ આપણે ઉપર જોયું, તથા વળી આગળ જોઈશું તેમ, વીતિભય કે વીતભય નામે પત્તન જણાવ્યું છે, ત્યારે બૌધ્ધો તેના ઠેકાણે રોરુવ અગર રોરુક નામ લખે છે. વળી એ નામના પાઠમાં પણ જૂદા જૂદા દેશના બૌદ્ધ હસ્તલેખો જૂદા જૂદા પાઠ ભેદો આપે છે. ઉદાહરણાર્થ જાતકટ્ઠકથામાં **रोरुवनगर** અને **रोरुवमनगर** એવા બે પાઠો મળે છે, ત્યારે દીઘનિકાયમાં સિંહલીવાચનામાં **रोरुक**, અને બરમીવાચનામાં **रोरुण** પાઠ છે. એટલું જ નહીં પણ દેશના નામમાં પણ પાઠફેર છે. દીઘનિકાયમાં **सोवीर** ના બદલે એક પાઠાન્તર **सोचिर** છે અને જાતકટ્ઠકથામાં તો તેના બદલે સ્પષ્ટરૂપે '**शिबिरठे**' પાઠાન્તર છે જે ખાસ વિચારણીય છે. લેખકોના પ્રમાદ અને અજ્ઞાનથી આવા પાઠભેદો થવા સુલભ છે.[૨] પણ એ પાઠભેદોથી ઐતિહાસિકોને પરંપરા ગોઠવવી કેટલી દુર્લભ થઈ પડે છે એ કયો પુરાતત્ત્વજ્ઞ નથી જાણતો? ટીબેટિયન સાધનો ઉપરથી વળી રોરુક એ, પાલીસાહિત્યપ્રસિદ્ધ કોલિય ક્ષત્રિયોનું રામગ્રામ હોય એવી શંકા

૧. જુઓ 'Buddhist India' પાન ૩૮; તથા છેવટે આપેલો નકશો.

૨. આવી જાતના પાઠભેદો અને પાઠફેરો જૈન ગ્રંથોમાં પણ ઘણા થાય છે અને તેથી કેટલીક વખતે તે બહુ ગુંચવાડો ઉભો કરે છે. એક ઉદાહરણ આપું. ઉપરની નોટમાં જેમ દીઘનિકાયની ગાથામાં અમુક દેશોની અમુક રાજધાની જણાવેલી છે, એવી જ કેટલીક ગાથાઓ જૈનસૂત્રોમાં પણ મળે છે. હાલમાં જે આગમો આગમોદયસમિતિ નામે સંસ્થા તરફથી છપાયા છે તેમાંથી **प्रज्ञापनासूत्र** (પાન ૫૫) માં કૌશાંબી જેની રાજધાની છે એ દેશ માટે પણ 'વચ્છ' (વત્સ) એ શબ્દ લખ્યો છે અને વૈરાટ જેની રાજધાની છે એ દેશ માટે પણ 'વચ્છ' એ જ શબ્દ આપ્યો છે. એની એ જ ગાથાઓ **सूत्रकृतांगसूत्र** ની ટીકામાં (પાન ૧૨૩) આપેલી છે જ્યાં '**वच्छ कोसंबी**' અને '**वइराड मच्छ**' એવા શબ્દો છે જેનો તાત્પર્ય ક્રમથી '**વત્સદેશમાં કૌશાંબી**' અને '**મત્સ્યદેશમાં વૈરાટ**' નગર મુખ્ય શહેર છે, એવો થાય છે. ખરો પાઠ આ પાછળના ગ્રંથનો છે જ્યારે પહેલાનો ખોટો છે. લેખક અને શોધકના પ્રમાદ અગર અજ્ઞાનથી આવા ઘણા પાઠોમાં ગરબડ થઇ જાય છે અને પછી શોધકોને યથાસ્થિત પાઠો જોઇ તેના ઉપરથી અનેક તર્ક-વિતર્કો કરવા પડે છે.

Aho ! Shrutgyanam

રૉકહીલને થાય છે.[1] આ ઉપરથી એમ ફલિત થાય છે કે પ્રથમ તો રોરૂક અને સોવીરનો સંબંધ અને સ્થાનાદિ નિશ્ચિત નથી અને જો તેમ નિશ્ચિત થાય તો પણ, દિવ્યાવદાનવાળું રોરુક અને દીઘનિકાયાદિવાળું રોરુક–બંને જૂદાં જૂદાં માની લેવામાં પણ કાંઈ વધારે બાધ હું જોતો નથી. એક નામનાં અનેક સ્થાનો હતાં અને હોય છે. બીજું દિવ્યાવદાનવાળું રોરુક એ હિંદુસ્થાનની હદની બ્હાર હતું એ બાબતના તેમાં કેટલાક ચોક્કસ પુરાવાઓ પણ મળે છે. રોરુક નગરનો નાશ થયા પછી કાત્યાયન ભિક્ષુ જ્યારે પાછો મધ્ય દેશમાં આવવા નિકળ્યો ત્યારે તે લંપાક, સ્યામાક અને વોક્કાણાદિ દેશોમાં થઇ સિંધુ નદીના કાંઠે આવ્યો હતો અને પછી એ નદીને પાર કરી ફરતો ફરતો કેટલાક દિવસે શ્રાવસ્તિએ પહોંચ્યો હતો. બીજાં બીજાં પ્રમાણો ઉપરથી આપણને જણાય છે કે લંપાક, સ્યામાક અને વોક્કાણ વિગેરે દેશો હિંદુસ્થાનની બ્હાર હોઈ તે અનાર્ય મુલ્કો ગણાતા હતા. સિંધુનદીની પેલીપાર હોવાની બાબત પણ એ વિચારને વધારે સબળ બનાવે છે. તેમ જ અવદાનના વર્ણન ઉપરથી આપણે એ પણ જોઇએ છીએ કે રોરુકમાં જ્યારે રત્ન વિગેરેની ખૂબ પેદાશ થતી ત્યારે વસ્ત્રાદિ ચીજો ત્યાં નહોતી થતી.[2] હવે, હિંદુસ્થાનના બધા ભાગો તરફ જ્યારે આપણે નજર કરીએ છીએ ત્યારે એમાં એકે ભાગ એવો નથી જણાતો કે જ્યાં આગળ રત્નો વિગેરે તો ખૂબ નિપજતાં હોય અને વસ્ત્રાદિ ચીજો ન થતી હોય. એનાથી ઉલટું મધ્યએશિયાના પ્રાંતોમાં આવી સ્થિતિ પ્રાચીનકાળથી ચાલી આવતી હતી એ હકીકત પ્રસિદ્ધ જ છે. આ બધાં કારણો અને પ્રમાણોથી આપણે માનવું જોઇએ કે અવદાનવાળું રોરુક નગર હિંદુસ્થાનની બ્હાર હતું; અને, તેમાં આપેલી હકીકત સાથે યવનચંગે આપેલી હો–લો–લો–કની હકીકત મળતી આવતી હોવાથી તે બંને સ્થાનો એક જ હતાં.

બૌદ્ધ અને જૈનકથામાં સમાનતા.

યવનચંગની અને અવદાનમાંની હકીકતનું સામ્ય તો આપણે ઉપર જોયું છે પણ એ કરતાંયે વધારે સામ્ય બૌદ્ધ અને જૈનકથામાં જણાઇ આવે છે જે એક ખરેખર વિસ્મય ઉપજાવે તેવી બાબત છે. યવનચંગ અને અવદાનમાંની હકીકતમાં તો ફક્ત રોરુક નગરના નાશવાળી હકીકત સાથે જ સામ્ય રહેલું છે પણ જૈનકથામાં વળી અવદાનમાંની બીજી પણ કેટલીક બાબતો સાથે સામ્ય રહેલું છે; જેનો વિચાર ક્રમથી કરવાની આવશ્યકતા છે.

રોરુક નગરના નાશની અને જૈનકથાવાળા વીતિભય નગરના નાશની હકીકત યવનચંગ, અવદાન અને જૈનકથામાં સમાન છે. ત્રણેમાં ધૂળની વૃષ્ટિ થવાને લીધે નગ-

---

૧ જુઓ–'Rockhill's Life of the Buddha', પાન ૧૪૫.

૨ રાજગૃહના વ્યાપારિઓ રોરુકના રાજા રુદ્રાયણને કહે છે કે **देवो रत्नाधिपतिः, स राजा वस्त्राधिपतिः, तस्य रत्नानि दुर्लभानि ।** રાજગૃહના રાજા બિંબિસાર આગળ વ્યાપારિઓ કહે છે કે–**देवो वस्त्राधिपतिः, स राजा रत्नाधिपतिः, तस्य वस्त्राणि दुर्लभानि ।** (**દિવ્યાવદાન** પાન ૫૪૫.)

Aho ! Shrutgyanam

રનો નાશ થએલો જણાવ્યો છે. જૈનકથામાં ઉદાયન અને અવદાનમાં રુદ્રાયણ રાજા ભિક્ષુ થાય છે. તેનું મૃત્યુ તેના ઉત્તરાધિકારીની અનુમતિથી, દુષ્ટ અમાત્યો કરાવે છે. એકમાં વિષપ્રયોગથી તે કરવામાં આવે છે અને બીજામાં શસ્ત્રાઘાતથી. ઉત્તરાધિકારીના સંબંધમાં ફરક છે. જૈનો તેને વૃદ્ધ રાજાનો ભાણેજ કહે છે, ત્યારે બૌદ્ધ પુત્ર કહે છે. એક ઓરસ પુત્ર દ્વારા પોતાના જન્મદાતા પિતાનું આવું જઘન્ય કૃત્ય કરાય તેના કરતાં ભાણેજ દ્વારા તે કૃત્ય થાય તેમાં મનુષ્ય જાતિના રોજના વ્યવહારને વધારે બંધબેસતું લાગે ખરૂં. (આ માત્ર એક સામાન્ય કથન છે, બાકી આવા દાખલાઓ જગત્‌ના ઇતિહાસમાં ઘણાએ મળી આવે છે તેથી એ કથન ઉપર ભાર મુકવાની આવશ્યકતા નથી.) આ હકીકતને લગતો જે ઉલ્લેખ બંને પંથવાળાઓ કરે છે તેનું ભાવસામ્ય ખાસ જોવા જેવું છે. રુદ્રાયણ રાજાને આવતો સાંભળીને શિખંડીના દુષ્ટ અમાત્યો તેને કહે છે કે—

देव श्रूयते वृद्धराजा आगच्छतीति। स कथयति प्रव्रजितोऽसौ किमर्थं तस्यागमनप्रयोजनमिति। तौ कथयतः-देव येनैकदिवसमपि राज्यं कारितं स विना राज्येनाभिरंस्यत इति कुत एतत्। पुनरप्यसौ राज्यं कारयितुकाम इति।

शिखण्डी कथयति—यद्यसौ राजा भविष्यत्यहं स एव कुमारः को नु विरोध इति। तौ कथयतः-देव अप्रतिरूपमेतत्, कथं नाम कुमारामात्यपौरजनपदैरञ्जलिसहस्रैर्नमस्यमानेन राज्यं कारयित्वा पुनरपि कुमारवासेन वस्तव्यम्। ...स ताभ्यां विप्रलब्धः कथयति–किमत्र युक्तं कथं प्रतिपत्तव्यमिति। तौ कथयतः-देव प्रघातयितव्योऽसौ, यदि न प्रघातयते नियतं दुष्टामात्यविग्राहितो देवं प्रघातयतीति।...न देवेन श्रुतं—

पिता वा यदि वा भ्राता पुत्रो वा स्वांगनिसृतः।
प्रत्यनीकेसु वर्तेत कर्तव्या भूमिवर्धना॥[1]

એ જ ભાવને આચાર્ય હેમચંદ્ર પોતાના મહાવીરચરિત્રમાં આ પ્રકારના શબ્દોમાં પ્રકટ કરે છે—

ज्ञात्वोदायनमायातं केशयमात्यैर्भणिष्यते।
निर्विण्णस्तपसामेष नियतं तव मातुलः॥
ऋद्धं राज्यं ह्यैन्द्रपदं तत्त्यक्त्वानुशयं दधत्।
नूनं राज्यार्थमेवागाद्विश्वसीर्मा स्म सर्वथा॥[2]

---

૧ **દિવ્યાવદાન,** પાન ૫૬૪.

૨ આ બે શ્લોકો સાથે ક્ષેમેન્દ્રની **અવદાનકલ્પલતા**માંના આ નીચેના શ્લોકો સરખાવા જેવા છેઃ–

प्रवादे प्रसृते तस्मिन्नमात्यौ दण्डमुद्गरौ।
अतीतभूपागमनत्रस्तौ भूपतिमूचतुः॥ ८३॥
सर्वत्र श्रूयते देव प्रवादः साधुनिन्दितः।
वृद्धप्रव्रजितो राजा राज्यार्थी यत्नवानिति॥ ८४॥

(**અવદાનકલ્પલતા,** ભાગ ૧, પાન ૯૯૫.)

Aho ! Shrutgyanam

केशी वक्ष्यत्यसौ राज्यं गृहणात्वद्यापि कोऽस्म्यहम् ।
गोपालस्य हि कः कोपो धनं गृह्णाति चेद्धनी ॥
वक्ष्यन्ति मन्त्रिणः पुण्यैस्तव राज्यमुपस्थितम् ।
प्रदत्तं न हि केनापि राजधर्मोऽपि नेदृशः ॥
पितुर्भ्रातुर्मातुलाद्वा सुहृदो वापरादपि ।
प्रसह्याप्याहरेद्राज्यं तद्दत्तं को हि मुञ्चति ॥[१]

રુદ્રાયણની સ્ત્રીનું નામ ચંદ્રપ્રભા છે ત્યારે ઉદાયનની સ્ત્રીનું નામ પ્રભાવતી છે. 'પ્રભા' શબ્દ બંનેમાં જે અનુગત છે તે ધ્યાન ખેંચે તેવો છે, પણ તે કરતાંયે વિશેષ ધ્યાન ખેંચવા લાયક બાબત તો એ છે કે-બંને કથાઓમાં રાણીના નામની અને રાજાની વીણા વગાડવાની હકીકત તથા રાજાને દુશ્ચિન્હ જોઈ રાણીના આસન્ન મરણની વાત જાણી લેવાની, રાણીએ પછી પ્રવ્રજ્યા લઈ લેવાની અને મરી ગયા પછી સ્વર્ગમાંથી આવીને, કરેલી પ્રતિજ્ઞા પ્રમાણે, રાજાને દર્શન દેવાની એ વિગેરે હકીકત અક્ષરેઅક્ષર મળતી આવે છે. સરખાવવા માટે બંનેનાં સંસ્કૃત અવતરણો આપું છું—

रुद्रायणो राजा वीणायां कृतावी चन्द्रप्रभा देवी नृत्ये । यावदपरेण समयेन रुद्रायणो राजा वीणां वादयति चन्द्रप्रभा देवो नृत्यति । तेन तस्या नृत्यन्त्या विनाशलक्षणं दृष्टं, स तामितश्चामुतश्च निरीक्ष्य संलक्षयति । सप्ताहस्यात्ययात् कालं करिष्यति । तस्य हस्ताद् वीणा भ्रस्ता भूमौ निपतिता । चन्द्रप्रभा देवी कथयति—देव मा मया दुर्नृत्यम् । देवि न त्वया दुर्नृत्यं, अपि तु मया तव नृत्यन्त्या विनाशलक्षणं दृष्टं सप्तमे दिवसे तव कालक्रिया भवतीति । चन्द्रप्रभा देवी पादयोर्निपत्य कथयति-देव यद्येवं कृतोपस्थानाऽहं देवस्य, यदि देवोऽनुजानीयाद् अहं प्रव्रज्येयमिति । स कथयति-चन्द्रप्रभे समयतोऽनुजानामि यदि तावत् प्रव्रज्य सर्वक्लेशप्रहाणाद् अर्हत्वं साक्षात्करोषि एष एव ते दुःखान्तः । अथ सावशेषसंयोजना कालं कृत्वा देवेसूपपद्यसे देवभूतया ते ममोपदर्शयितव्यमिति ।[२]

આ જ હકીકત ઉદાયન અને પ્રભાવતીના સંબંધમાં થએલી જેનું વર્ણન હેમચંદ્રના શબ્દોમાં જોઈએ.

तामन्यदार्चामर्चित्वा प्रमोदेन प्रभावती । पत्या समेता संगीतमविगीतं प्रचक्रमे ॥
तानौघानगतश्रव्यं व्यक्तव्यञ्जनधातुकम् । व्यक्तस्वरं व्यक्तरागं राजा वीणामवादयत् ॥
तीव्रव्रतपरिक्लिष्टः संभोगाभिमुखादरः । लज्जां प्रव्रज्यया सार्द्धं त्यक्त्वा स पुनरेष्यति ॥
व्यक्तांगहारकरणं सर्वांगाभिनयोज्ज्वलम् । ननर्त देव्यपि प्रीता लास्यं तांडवपूर्वकम् ॥
राजाऽन्यदा प्रभावत्या न ददर्श शिरः क्षणात् । नृत्यन्तं तत्कबन्धं तु ददर्शाजिकबन्धवत् ॥
अरिष्टदर्शनेन द्राक् क्षुभितस्य महीपतेः । तदोपसर्पन्निद्रस्येवागलत् कंबिका करात् ॥
अकांडतांडवच्छेदकुपिता राज्ञ्यथावदत् । तालच्युतास्मि किमहं वादनाद्विरतोऽसि यत् ॥
इत्थं पुनः पुनः पृष्टः कंबिकापातकारणम् । स तथाख्यत् महीपालो बलीयान् स्त्रीग्रहः खलु ॥

१ **મહાવીરચરિત્ર,** પાન ૧૫૮. २ **દિવ્યાદાન,** પાન ૫૫૩.

राज्ञ्यूचे दुर्निमित्तेनाल्पायुरहं प्रिय । * * *

* * * तज्ज्ञापनाय भवति यत्सर्वविरतौ मम ॥

एवमुक्तः सनिर्बन्धमभ्यधाद्वसुधाधवः । अनुतिष्ठ महादेवि यत्तुभ्यमभिरोचते ॥

देवत्वमाप्तथा देवि बोधनीयस्त्वयान्वहम् ।[1]

આ બંને અવતરણો ઉપરથી બૌદ્ધ અને જૈન બંને લેખોમાં કેટલી બધી અભિન્નતા છે તે સ્પષ્ટ જણાઇ આવે છે. અને હું તો આથી પણ આગળ વધી એમ કહી શકું છું કે દિવ્યાવદાનમાંનું ઉદ્રાયણ નામ એ જૈન નામ ઉદાયનના બદલે, અગર જૈનનામ ઉદાયન એ બૌદ્ધનામ ઉદ્રાયણના બદલે ભ્રાંતિથી કે લિપિભેદથી જ ઉત્પન્ન થયું છે. કારણ કે બંનેના ગ્રંથોમાં બંને પ્રકારના પાઠભેદો ચોખ્ખા મળી આવે છે. દિવ્યાવદાનમાં જો કે સર્વત્ર રુદ્રાયણ પાઠ આપેલો છે તો પણ બે ચાર ઠેકાણે ઉદ્રાયણ એવું પાઠાંતર પણ મળી આવે છે.[2] અને એમાં વળી એક ઠેકાણે તો ખાસ શ્લોકમાં જ એ પાઠ આવેલો છે, જેમકેઃ—

मुक्तो ग्रन्थैश्च योगैश्च शल्यैर्निर्वरणैस्तथा ।
अद्याप्युद्रायणो भिक्षू राजधर्मैर्न मुच्यते ॥ (પાન ૪૬૭).

ક્ષેમેન્દ્રે તો અવદાનકલ્પલતામાં સર્વત્ર ઉદ્રાયણ એ જ પાઠ આપેલો છે અને તે પદ્યમાં હોવાથી બીજા પાઠાન્તરને તેમાં અવકાશ પણ નથી. ઉદાહરણાર્થ—

—बभूव समये तस्मिन् रौरुकाख्ये पुरे नृपः ।
श्रीमानुद्रायणो नाम यशश्चन्द्रमहोदधिः ॥४॥
—कदाचिद्दिव्यरत्नांकं कवचं काञ्चनोज्ज्वलम् ।
प्राहिणोद् विम्बिसाराय सारमुद्रायणो नृपः ॥११॥
—विम्बिसारस्य हस्ताङ्कलेखामुद्रायणो नृपः ॥
—उद्रायणस्य नृपतेरार्य्यः कात्यायनोऽथ सः ॥

આ અવતરણો ઉપરથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે બૌદ્ધગ્રંથોમાં અસલ નામ રુદ્રાયણ નહિ પણ ઉદ્રાયણ હોવું જોઇએ અને એ જ નામ જૈન ગ્રંથકારોને પણ સંમત હોય તેમ લાગે છે. હેમચંદ્ર વગેરેના ગ્રંથોમાં તેમ જ આવશ્યકસૂત્રની સંસ્કૃત ટીકા આદિમાં પ્રાયઃ સર્વત્ર **उदायन** એવો પાઠ ઉપલબ્ધ થાય છે પણ ભગવતીસૂત્ર તથા આવશ્યકચૂર્ણિના જૂના હસ્તલેખોમાં ઘણી જગાએ ' **उद्दायण** ' એવો પાઠ સ્પષ્ટ મળી આવે છે.[3] આ ઉપરથી હું માનું છું કે જૈનોને પણ બૌદ્ધોની માફક અસલ નામ **उद्रायण** જ સંમત હતું જેનું પ્રાકૃતરૂપ **उद्दायण** થાય છે. ખરી રીતે '**उद्रायण**' શબ્દ પણ ખાસ સંસ્કૃત

૧ **મહાવીરચરિત્ર** પાન ૧૫૦.

૨ **દિવ્યાવદાન** પાન ૫૬૬. ઉપર બે વાર આ નામ આવેલું છે.

૩ આ લેખની શરૂઆતમાં, ઉપર જે મેં, ચેટકની ૭ પુત્રીઓ સંબંધી કથનવાળું **આવશ્યકચૂર્ણિનું** અવતરણ આપ્યું છે તેમાં '**उद्दायण** પાઠ જ આપેલો જોવાશે. હાલમાં મારી પાસે જે **આવશ્યકચૂ-**

Aho ! Shrutgyanam

હોય એમ લાગતું નથી. મૂળ એ શબ્દ પ્રાકૃત હોઇ **उद्दायण** જ હશે જેનું સંસ્કૃત રૂપ બૌદ્ધોએ **उद्रायण** કલ્પ્યું અને જૈનોએ તેને વધારે સંસ્કૃત કરી તેની જગ્યાએ **उदायन** મુકયું

આ રીતે આપણે બૌદ્ધ અને જૈન કથામાં કેટલું બધું સામ્ય છે તે જોયું છે. આ વિલક્ષણ સામ્યનું મૂળ ખોળી કાઢવું કઠિણ છે. જૈનોની હકીકત ઉપરથી બૌદ્ધોએ પોતાના કથા ઘડી કહાડી છે કે બૌદ્ધોની હકીકત ને જૈનોએ બંધબેસ્તી કરી લીધી છે કે વળી આ બંને સંપ્રદાયોએ કોઇ ત્રીજી જ હકીકતના મૂળ ઉપરથી પોતાની કથા–કલ્પના ઉપજાવી કાઢી છે, એનો નિર્ણય થઇ શકે તેમ નથી. (પુરાતત્ત્વ, પુસ્તક ૧ લું અંક ૩ માંથી ઉધૃત.)

ર્ણિની હસ્તલિખિત પ્રતિ છે તેમાં એ જ પાઠ છે. એ પ્રતિ અમદાવાદના ડહેલાના ઉપાશ્રયના ભંડારમાંની છે અને સંવત્ ૧૫૧૮ ની સાલમાં લખાએલી છે. એ પ્રતિ લખાવનારની પ્રશસ્તિ પણ છેવટે આપેલી છે જેમાં કેટલીક ઐતિહાસિક હકીકત નોંધેલી હોવાથી હું તેને અહીં પુરી ઉતારી લઉછું.

॥ सो० माणिक । सो० मांडव । सो० बीजा लेखितग्रंत (थ) प्रशस्तिर्लिख्यते । यथा ।

श्रीओसवंशांबरपूर्णचन्द्रः सद्वृत्तशोभागुणदीप्यमानः ।
श्रीसांगणो मंत्रिवरो बभूव ढीलीपतेर्ग्यासधराधिपस्य ॥

सो० सांगणसुतः सो० पद्मः (?) श्रीशत्रुंजयादितीर्थे संघपतिकार्यकर्ता । सो० पद्म (?) सुत सो० धर्ण (?) महानुभावो बभूव तदन्वये सो० धर्णसुत सो० भोजा सो० भोजाभार्या बाई राजलदेइ तस स (सु)त सो० श्रीमाणिक सुतः सो० मांडण सो० भीमाभिधैः । सो० माणिकभार्या श्रा०......सो० मांडवभार्या श्राव(वि)का सहज । सो० भीमा भार्या श्रा० अहवदे सो० भीमासुत सो०......प्रमुख कुटुंबपरिवारयुक्तैः सरस्वतीकोशे लेषि(खि)त संगृहीतानेकग्रंथैः संघपतीभूय श्रीशत्रुंजयगिरिनारश्रीसोपारकश्रीजीरपल्लीशपार्श्वनाथश्रीअर्बुदाचलवडवाणीश्रीअभिनंदनप्रमुखतीर्थयात्रादिदानपुण्यकारकैः संवत् १५१८ वर्षे वडातपागच्छनायक भट्टा० श्री० रत्नसिंहसूरि । भट्टा० श्री उदयवल्लभसूरि । भट्टा० श्री० ज्ञानसागरसूरि । भट्टा० श्री चारित्रसुंदरसूरि । भट्टा० उदयसागर उपाध्याय उदयमंडनगणीनामुपदेशेन स्वश्रेयसे श्रीआवश्यकचूर्णि समाप्तमिति ॥ छ ॥ छ ॥ ब्राह्मणजीबालिखितं करकृतमपराधं क्षंतिमर्हतः सन्तु ॥ (આમાં જેટલા ગૃહસ્થોનાં નામો આવેલાં છે તે બધા ઉપર કોણ જાણે કોઇએ શાહી ફેરવી તેમને ભુંસી નાંખવાનો પ્રયત્ન શા હેતુથી કર્યો હશે?) પ્રશસ્તિ પછી બીજા અક્ષરોમાં એક શેરો મારેલો છે જેમાં જણાવ્યું છે–**यह प्रति संवत् १७४३ वर्षे चैत्रशुदि ७ दिने श्री ६ आचार्यजी ऋषि श्री ६ तेजसिंघजीये वृद्धिमंडारी मुकी छे ॥**

Aho ! Shrutgyanam

॥ अर्हम् ॥

नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय ।

श्रीमेरुतुङ्गाचार्यविरचिता

विचारश्रेणिः-अपरनाम-स्थविरावलिः

'जं रयणिं कालगओ' इति गाथाकदम्बके ।
श्रीमेरुतुङ्गसूरीन्द्रैर्व्याख्यालेशो विधीयते ॥

इहागमे

चंदे चंदे अभिवड्ढियम्मि चंदेऽभिड्ढिए चेव ।
पंचवरिसेहिं[1] जुगमिणं पन्नत्तं वीयरागेहिं ॥

इति गाथोक्तयुक्त्या पञ्चवर्षैर्युगमुच्यते । तत्रादौ द्वादशमासैः प्रथम[2]श्चन्द्रसंवत्सरः । पुनर्द्वादश[3] मासैर्द्वितीय[4]श्चन्द्रसंवत्सरः । तृतीयवर्षे पोषमासस्य वृद्धिः, अतस्त्रयोदश[5] मासैस्तृतीयोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः । ततो द्वादश[6]मासैः पुनश्चतुर्थश्चन्द्रसंवत्सरः । पञ्चमे वर्षे आषाढमासस्य वृद्धिः, अतस्त्रयोदश[7]मासैः पुनः पञ्चमोऽभिवर्द्धितसंवत्सरः । एवं च व्यवहारनयेन त्रिंशता मासैरधिकमासो लभ्यते । यतः—

सावणबहुलपडिवए बालवकरणे अभीइनक्खत्ते ।
सव्वत्थ पढमसमए जुगस्स आइं वियाणाहि ॥

इत्यागम[8]वचनाज्जैने श्रावणादिः संवत्सरः । ततः प्रथमे चन्द्रवर्षे १२ मासाः, द्वितीयेऽपि १२, एवं २४ । ततोऽभिवर्द्धितवर्षस्य श्रावणदयः षट् । एवं ३० मासैः पोषवृद्धिः । ततोऽभिवर्द्धितस्यैव शेषा मासा[9] माघादयः षट् । ततश्चतुर्थे चन्द्रवर्षे १२, पञ्चमेऽपि वर्षे १२, एवं ३० । अत्राषाढवृद्धिः, अतोऽसौ पञ्चमोऽभिवर्द्धित इति । उक्तं च—

---

1 पंच सहियं । 2 १चंद्र० । 3 १२ मासैः । 4 २ चंद्र० । 5 १३ मासैः; 6 १२ मासैः । 7 त्रिंशत् मासैः । 8 इत्याद्यगम० । 9 नास्ति ।

Aho ! Shrutgyanam

जइ जुगमज्झे तो दो पोसा, जइ जुगअंते दो आसाढा ।

एवं रूपस्य च [1]युगस्य द्वितीये चन्द्रसंवत्सरे कार्तिकवदि आमावास्यां[2] श्रीवीरनिर्वाणम् । उक्तं च—श्रीकल्पे—' चंदे नामं से दुच्चं संवच्छरे[3] ।' अत आह—

जं रयणिं कालगओ अरिहा तित्थंकरो महावीरो ।
तं रयणिमवंतिवई अहिसित्तो पालगो राया ॥

यस्यां रजन्यां श्रीअर्हन् तीर्थंकरो महावीरः कालगतः मुक्तिं प्राप्तः, तस्यां रजन्यामुज्जयिन्यां[4] चण्डप्रद्योते मृते तस्यैव पुत्रः पालको राजा अवन्तिपतिस्तस्य पट्टेऽभिषिक्तः ।

(' वीरनिव्वाणरयणीओ चंडपज्जोयरायपट्टम्मि ।
उज्जेणीए जाओ पालयनामा महाराया ॥ ')[5]
' सट्ठी पालगरन्नो पणवन्नसयं तु होइ नन्दाणं ।
अट्ठसयं मुरियाणं तीसच्चिय पूसमित्तस्स ॥
बलमित्त–भाणुमित्ताण सट्ठि वरिसाणि चत्त नहवहणे ।
तह गद्दभिल्लरज्जं तेरस वासे सगस्स चऊ ॥[6]

पालकस्य राज्ञः षष्ठि (६०) वर्षाणि[7] राज्यमभूत् । तावता पाटलीपुत्रेऽपुत्रे कूणिक[8]पुत्रे उदायिनृपे उदायिनृपमारकेण हते पञ्चदिव्यान्तरिताधिवा[9]सितगजेन्द्रेण नापितो गणिकाङ्गजो नन्दो[10] राज्येऽभिषिक्तः । उक्तं च पारिशिष्टपर्वणि—

अनन्तरं वर्द्धमानस्वामिनिर्वाणवासरात् ।
गतायां षष्ठिवत्सर्यामेष नन्दोऽभवन्नृपः ॥

नन्दाश्च नव पाटलीपुरे क्रमादभुवन् । तेषां च राज्यं पञ्चपञ्चाशदधिकं शतं (१५५) वर्षाणि बभूव । एवं द्वे शते पञ्चदशाधिके (२१५) । यच्च परिशिष्टपर्वण्युक्तम्—

' एवं च श्रीमहावीरमुक्तेर्वर्षशते गते ।
पञ्चपञ्चाशदधिके चन्द्रगुप्तोऽभवन्नृपः ॥ '

तच्चिन्त्यम् । यतः—एवं ६० वर्षाणि त्रुट्यन्ति, अन्यग्रन्थैः सह विरोधश्च । तदनु, अष्टोत्तरशतं (१०८) वर्षाणि[11] मौर्याणां राज्यम् । मौर्यास्तु नवमं नन्दमुत्थाप्य चाणाक्येन[12] पाटलीपुत्रे स्थापिताचन्द्रगुप्तादयः । एवं ३२३ । ततो मौर्यराज्यादनुपुष्यमित्रराज्ञास्त्रिंशत्[13] (३०) वर्षाणि । ततो बलमित्र—

---

1 नास्ति । 2 अमावास्यायां । 3 संवत्सरे । 4 नास्ति । 5इयं गाथा प्रत्यन्तरे नास्ति । 6 सगद्द । 7 ६० वर्षाणि । 8 कौणिक० । 9 ०न्तराधिवासित० । 10 नापितो गणिकाङ्गजो नन्दो राजा राज्ये । 11 १०८ वर्षाणि । 12 चाणिक्येन । 13 ३० वर्षाणि ।

Aho ! Shrutgyanam

भानुमित्रौ राजानौ षष्ठि (६०) वर्षाणि[1] राज्यमकार्ष्टाम् । यौ तु कल्पचूर्णौ चतुर्थीपर्वकर्तृकालका[2]चार्यनिर्वासकौ उज्जयिन्यां बलमित्र[3]भानुमित्रौ तावन्यावेव । ततश्चत्वारिंशत् [4] (४०) वर्षाणि नभोवाहने राज्यं जातम् । एषः क्वापि नरवाहनो राजेत्युच्यते । एवं वीरनिर्वाणाद् वर्ष ४५३ । अस्मिंश्च वर्षे गर्दभिल्लकोच्छेदकस्य श्रीकालकाचार्यस्य सूरिपद[5] प्रतिष्ठाऽभूत् । तथा नभोवाहनराजानन्तरं गर्दभिल्लराज्यं द्विपञ्चाशदधिकं शतं (१५२) वर्षाणि [6] ज्ञातव्यम् । अयं भावः—गर्दभिल्लप्रभृतीनां राज्यं गर्दभिल्लराज्यम् । इह यदा यो राजा ख्यातिमानभूत्, तदा तस्य राज्यं गण्यते, न तु पट्टानुक्रमः । ततो नभोवाहनादनु गर्दभिल्लेनोज्जयिन्यां १३ वर्षाणि राज्यं कृतम् । तावता श्रीकालकाचार्येण स्वसुः सरस्वत्याः प्रवृत्के गर्दभिल्लमुच्छेद्य उज्जयिन्यां शकराजाः स्थापिताः। तैः ४ वर्षाणि[7] तत्र राज्यं चक्रे । एवं वर्ष १७ । तदनु गर्दभिल्लस्यैव सुतेन विक्रमादित्येन राज्ञोज्जयिन्या राज्यं प्राप्य सुवर्ण[8]पुरुषसिद्धिबलात् पृथिवीमनृणां कुर्वता विक्रमसंवत्सरः प्रवर्तितः । स च वार्षिकदानवर्षोज्जातश्रीवीरसंवत्सराद् द्वादशाधिकपञ्चशतवर्षेभ्योऽनु ज्ञेयः । विक्रमस्य राज्यं ६० वर्षाणि ततस्तत्पुत्रस्य विक्रमचरित्रापरनाम्नो धर्मादित्यराजस्य राज्यं ४० वर्षाणि । ततो भाइल्लराजराज्यं वर्ष ११ । ततः श्रीनाइल[9] राज्यं वर्ष १४ । ततः श्रीनाहडराज्यं १० वर्षाणि जातम् । यस्य वारके नवनवति-लक्षधनपतिभिरप्राप्तनिवासे जालउरपुरसमीपस्थे सुवर्णगिरिशृंगे श्रीमहावीरसनाथः श्रीयक्षवसत्याख्यो[10] महाप्रासादो निष्पन्नः । उक्तं च—

नवनवइलक्खधणवइ-अलद्धवासे सुवन्नगिरिसिहरे ।
नाहडनिवकालीणं थुणि वीरं जक्खवसहीए ।।[11]

विक्रमादित्यादनुवर्ष १३५; तन्मध्ये १७ वर्षेषु क्षिप्तेषु सर्ववर्ष १५२ । एतदेवाह—

विक्कमरज्जाणंतरसतरसवासेहिं वच्छरपवित्ती ।
सेसं पुण[12] पणतीससयविक्कमकालम्मि य पविट्ठं ।।

सप्तदशवर्षैर्विक्रमराज्यानन्तरं वत्सरप्रवृत्तिः । कोऽर्थः ? । नभोवाहनराज्यात् १७ वर्षैर्विक्रमादित्यस्य राज्यम् । राज्यानन्तरं च तदैव वत्सरप्रवृत्तिः । ततो द्विपञ्चाशदधिकशतः(१५२) मध्यात् १७ वर्षेषु गतेषु शेषं पञ्चत्रिंशदधिकशतं (१३५) [13] विक्रमकाले प्रविष्टम् । विक्रमादित्याङ्कितसंवत्सरात् शाकसंवत्सरं यावद् यः कालः स विक्रमकालः । स च पूर्वोक्तयुक्त्या १३५ वर्षमान इति । तत्र प्रविष्टं तत्र स्थितमिति । एवं च सति किं जातमित्याह—

विक्कमरज्जारंभा परओ सिरिवीरनिव्वुई भणिया ।
सुन्न-मुणि-वेय-जुत्तो विक्कमकालाउ जिणकालो ।

---

1 ६० वर्षाणि । 2 ०कालिका० । 3 बालभी० । 4 ४० वर्षाणि । 5 सूरपद० । 6 गर्दभिल्लराज्यं १५२ वर्षाणि । 7 शकराजा स्थापितः ततः ४ वर्षाणि । 8 स्वर्णपु० । 9 नाइल्ल० । 10 ०वसत्यारेकमहा० ।
11 नवनवति क्खधणवइ अलद्धवासे सुवन्नचेइहरे । नाहडनिवकारवियं वीरं जक्खवइवसहीए ।।
12 नास्ति । 13 'शेषं १३५' इत्येव ।

Aho ! Shrutgyanam

विक्रमकालाज्जिनस्य वीरस्य कालो जिनकालः—शून्य (०) मुनि (७) वेद (४) युक्तः । चत्वारिंशतानि सप्तत्यधिकवर्षाणि[1] श्रीमहावीरविक्रमादित्ययोरन्तरमित्यर्थः । नन्वयं कालः श्रीवीर—विक्रमयोः कथं गण्यते ; इत्याह— विक्रमराज्यारम्भात्परतः पश्चात् श्रीवीरनिर्वृतिरत्र भणिता । को भावः ; —श्रीवीरनिर्वाणदिनादनु ४७० वर्षैर्विक्रमादित्यस्य राज्यारम्भदिनमिति । तथा हि—

पालकः	६०	तदनु विक्रमादित्यः	६०
नन्दाः	१५५	धर्मादित्यः	४०
मौर्याः	१०८	भाइल्लः	११
पुष्यमित्रः	३०	नाइल्लः	१४
बलमित्र-भानुमित्रौ	६०	नाहडः	१०
नभोवाहनः	४०		
गर्द्दभिल्लः	१३	एवं	१३५
शकाः	४		
एवं....	४७०	उभयं	६०५

तदनु शाकसंवत्सरप्रवृत्तिः । उक्तं च—

श्रीवीरनिर्वृतेर्वर्षैः षड्भिः पञ्चोत्तरैः शतैः ।
शाकसंवत्सरस्यैषा प्रवृत्तिर्भरतेऽभवत् ॥

अत्राधिकारात् स्थाविराणां पट्टप्रातिष्ठाकालो भण्यते ।

सिरिवीराउ सुहम्मो वीसं, चउ चत्तवास जंबुस्स ।
पभवेगारस, सिज्जंभवस्स तेवीस वासाणि ॥
पन्नास जसोभद्दे, संभूइस्सट्ठ, भद्दबाहुस्स ।
चउदस, य थूलभद्दे पणयालेवं दुपन्नरस्स ॥

श्रीवीरनिर्वाणात् सुधर्मस्वामिपट्टवर्ष २० । तदनु जम्बुस्वामिनः पट्टवर्ष ४४ । एवं ६४ । उक्तं च पारीशिष्टपर्वणि—

श्रीवीरमोक्षदिवसादपि हायनानि चत्वारिषष्टिमपि च व्यतिगम्य जम्बूः ।
कात्यायिनं प्रभवमाप्तपदे निवेश्य कर्मक्षयेण पदमव्ययमाससाद ॥

ततः प्रभवः ११, शय्यंभवस्य २३, यशोभद्रे ५०, सम्भूतिविजयस्य ८, भद्रबाहोः १४; एवं श्रीवीरनिर्वाणात् १७० । उक्तं च पारिशिपष्टर्वणि—

श्रीवीरमोक्षाद्वर्षशते सप्तत्यग्रे गते सति ।
भद्रबाहुरपि स्वामी ययौ स्वर्गं समाधिना ॥

---

1 '४७० वर्षाणि' इत्येव ।

Aho ! Shrutgyanam

स्थूलभद्रे ४९; एवं 'दुपन्नरस त्ति' द्वे शते पञ्चदशाधिके (२१९)। श्रीवीरनिर्वाणात् पालक-नृप-सर्वनन्दराज्यकालोऽप्येतावानेव।

अज्जमहागिरी तीसं, अज्जसुहत्थीण वरिस छायाला।
गुणसुंदर चउआला, एवं तिसया पणत्तीसा॥

आर्यमहागिरिः ३०, आर्यसुहस्तिनां ४६, गुणसुन्दरः ४४, एवं त्रीणि शतानि पञ्चत्रिंशदधिकानि (३३९)।

तत्तो इगचालीसं निगोय वक्खाय[1] कालिगायरिओ[2]।
अट्ठत्तीसं खंदिल, एवं चउसय चउद्दस य॥

ततः ३३९ अनुनिगोदव्याख्याता [3]कालकाचार्यः। 'किलास्मद्वत् संप्रति भरते कालकाचार्यो निगोदव्याख्यातेति' श्रीसीमंधरवाचं श्रुत्वा वृद्धविप्ररूपेणेन्द्रः कालकाचार्यपार्श्वे तथैव निगोदव्याख्याश्रवणादनु निजमायुरपृच्छत्। तैश्च श्रुतोपयोगादिन्द्रोऽसाविति ज्ञातः। भिक्षागतयतीनां स्वागमनज्ञप्त्यै वसतिद्वारं परावृत्त्य स्वस्थानमगमदिति। अयं च प्रज्ञापनोपाङ्गकृत् सिद्धान्ते श्रीवीरादन्वेकादशगणभृद्भिः सह त्रयोविंशतितमः पुरुषः श्यामार्य इति व्याख्यातः।

[उक्तं चोत्तराध्ययने, परीषहाध्ययननिर्युक्तौ........परीषहाधिकारे

उज्जेणि कालखमणा सागरखमणा सुवन्नभूमीसु।
पुच्छा आउ य सेसं इंदो सा दिव्वकरणं च॥

इति गाथाचूर्णौ—' उज्जेणीए कालगायरिया जाव सक्को निगोयजीवे पुच्छइ सा दिव्वं ति शालमुखपरावर्तः। ' ततोऽसौ श्यामार्योऽन्यो वेति चिन्त्यम्। [4]]

असौ वर्ष ४१, स्कंदिलसूरिः ३८; एवं चत्वारि शतानि चतुर्दश च (४१४)[5]। अत्र चायं वृद्धसंप्रदायः—स्थूलभद्रस्य शिष्यद्वयम्—१ आर्यमहागिरिः, २ आर्यसुहस्ती च। तत्र, आर्यमहागिरेर्या शाखा सा मुख्या। सा चैवं स्थविरावल्यामुक्ता—

सूरिबलिस्सह साई सामज्जो संडिलो य जीयधरो।
अज्जसमुद्दो मंगू नंदिल्लो नागहत्थी य॥
रेवइ-सिंहो खंदिल[6] हिमवं नागज्जुणा य गोविंदा।
सिरिभूइदिन्न-लोहिच्च-दूसगणिणो य देवड्ढी॥

असौ च श्रीवीरादनुसप्तविंशतितमः पुरुषो देवर्द्धिगणिः सिद्धान्तान् अव्यवच्छेदाय पुस्तकाधिरूढानकार्षीत्। द्वितीयशाखा तु श्रीकल्पसूत्रोक्ता एवम्—

1 विक्खाय। 2 कालिगा०। 3 कालिगा०। 4 कोष्ठकान्तर्गतपाठः प्रति पुस्तके नास्ति। 5 ' एवं ४१४ ' इत्येव पाठः। 6 रेवइ सिंह खंदल।

Aho ! Shrutgyanam

अज्जसुहत्थी य सुट्ठिय तहिंदादिन्ने य अज्जदिन्ने य ।
सीहगिरि वइरसामी सोपारग वइरसेणे य ।

एवं चात्र शाखाद्वयेऽप्यार्यसुहस्तिनोऽनु गुणसुन्दरः, श्यामार्यादनु स्कन्दिलाचार्यश्च न दृश्यते, तथाप्यत्र संप्रदाये दृष्टावतस्तावेव प्रोक्तौ[1]। एवमग्रेऽपि रेवतिमित्रादौ ज्ञेयम् ।

रेवइमित्ते छत्तीस[2] अज्जमंगू अ वीस एवं तु ।
चउसय सत्तरि चउसय तिपन्ने कालगो जाओ ॥
चउवीस अज्जधम्मे, एगुणचालीस भद्दगुत्ते य ।
सिरिगुत्ति पनर, वइरे छत्तीसं एव पण[3] चुलसी ॥
तेरस वासा सिरिअज्जरक्खिए, वीस पूसमित्तस्स[4] ।
इत्थ य पणहिय छसएसु सागसंवच्छरुप्पत्ती ॥

स्कंदिलादनुरेवतिमित्रे ३६, आर्यमङ्गुः २०; एवं श्रीवीरमोक्षात् चत्वारि शतानि सप्ततिश्च (४७०)। अत्र ४९३ वर्षेषु गर्द्दभिल्लोच्छेत्ता कालकसूरि[5]र्जातः । आर्यधर्मे २४ । इह केऽपि मङ्गुधर्मयोर्नाम्नैव भेदमाहुः । तन्मते आर्यधर्मस्य वर्ष ४४, भद्रगुप्ते ३९, श्रीगुप्ते १५, श्रीवज्र[6]स्वामिनि ३६; एवं वीरमोक्षात् पञ्च शतानि चतुरशीतिः (५८४)। तदनु श्रीआर्यरक्षिते १३ । पुष्यमित्रस्य २०, येन सूत्रार्थो प्रतिवल्लचटतुल्य आर्यरक्षितो[7]ऽकारि । एवं वीराद्वर्षे ६१७ । अत्र च ६०५ वर्षेषु शाकसंवत्सरोत्पत्तिः । इह चायं संप्रदायः—पूर्वं चन्द्रगुप्तवारके द्वादशवार्षिकदुर्भिक्ष उत्कृष्टलब्धीनां प्रकीर्णकसहस्राणां च विच्छेदः । बहुलस्स सरिव्वयेति, बलिस्सहेति चैकस्यैव नाम । स्थविरावल्यां तु, आर्यमङ्गोः परोऽनु आर्यधर्म-भद्रगुप्त—वज्रस्वामि--आर्यरक्षिता भिन्नशाखोद्भवा अपि तस्मिन् समये प्रधानपुरुषा इत्युपात्ताः। रेवइसिंहेति—रेवतिसूरिः, ब्रह्मद्वीपकसिंहश्च । तथा वज्रस्वाम्यवसाने १२ वार्षिके दुर्भिक्षे सिद्धान्तानुयोगः प्रणष्टः । ततः पुनः सुभिक्षे जाते मथुरायां स्कन्दिलाचार्येण श्रमणसंघमेलयित्वा प्रवर्त्तितः । उक्तं च—

'जेसि इमो अणुओगो' इत्यादि ।

द्वितीयशाखायां तु—सुट्ठिय त्ति आर्यसुहस्तिनो द्वादशशिष्यान्तरवर्ती पञ्चमः, कल्पे— 'सुट्ठियसुप्पडिबद्धि त्ति' ख्यातः सुस्थितसूरिः । यस्मात् 'कोडियगणो गणो मे' इति पठ्यमानः कौटिकगणो निर्गतः । तथा कल्पसूत्रे इत्युक्तम्—"थेरस्स णं अज्जमहागिरिस्स एलावच्चसगुत्तस्स इमे अट्ठ थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया होत्था । तंजहा—थेरे उत्तरे, इत्यादि जाव, थेरे छलुए रोहगुत्ते कोसियगुत्तेणं । थेरेहिंतो णं छलुएहिंतो णं रोहगुत्तेहिंतो तेरासिया साहा निग्गया' इत्युक्तम् । आवश्यके तु

चउदस सोलस वासा चउदस विसुत्तराय दुन्निसया ।
अट्ठावीसा य दुवे पंच सया चेव चउयाला ॥
पंचसया चुलसीया छ चेव सया नवुत्तरा हुंति ।

1 न दृश्यते तथाऽप्यत्र संप्रदाये दृष्टः, अतस्तथैव प्रोक्तः । 2 छत्तीय । 3 पुण । 4 पुव्वमित्तस्स । 5 कालिकाचार्यो । 6 श्रीवज्रे । 7 आर्यरक्षितेना०

Aho ! Shrutgyanam

इत्यत्र—

पंचसया चोयाला तइया सिद्धिंगयस्स वीरस्स ।
पुरिमंतरंजियाए तेरासिया दिट्ठि उप्पन्ना ॥

इत्युक्तम् । ततो यदि षडुलूको रोहगुप्त आर्यमहागिरिशिष्यः, ततः श्रीवीरात् ५४४ वर्षाणि कथं स्युः ? । यतः—आर्यमहागिरिः स्थूलभद्रशिष्यः, स चोक्तयुक्त्या वीरमोक्षात् २४५ वर्षान्तर्जातः । तच्छिष्यश्चेत् षडुलूकः ततः ५४४ वर्षे कथमिति सन्देहः । ततोऽत्र बहुश्रुताः प्रमाणम् । तथा १२ वार्षिके दुर्भिक्षे श्रीवज्रेण वज्रसेनशिष्यो ' यदा लक्ष्यमूल्यां रसवतीं लभसे तदनु सुभिक्षं जानीयाः ' इत्युक्त्वा विहारितः । सोपारके जिनदत्तेभ्यभार्ययेश्वरीति नाम्न्या विषक्षेपाददीयमानां[1] तादृशीं[2] रसवतीं ज्ञात्वा प्रातः सुभिक्षं भावीति तौ संबोध्य तत्र सुखं तस्थौ । तस्य च क्रमेण इन्द्र—चन्द्र—निर्वृति—विद्याधराख्याः ४ शिष्या जाताः । तेषु चन्द्रकुलं वटवृक्षवच्छतशाखमद्य यावत् प्रसरद्विजयते । तदन्वये तेषां शिष्य[3] उपस्थाप्यः ' कोडीगणो गणो मे, वइरसाहा साहा मे, चंदकुलं कुलं मे ' इति दिग्बन्धं कार्यते इति ।

तथा, भृगुक्षेत्रे आर्यखपुटाचार्यो वृद्धवादी च; आर्यधर्मस्य शिष्यः सिद्धसेनः प्रभावकः । तथा, वज्रस्वामिनोऽनु वज्रसेनो वर्ष ३३, नागहस्तिः ६९, रेवतिमित्रः ५९, ब्रह्मद्वीपकसिंहः ७८; एवं २३९। तदनु, स्कन्दिल-हिमवत्सूरि-नागार्जुनाः ७८[4] । एषां मध्ये २२ वर्षातिक्रमे वलभीभङ्गः । उक्तं च—

पणसयरी वासाइं तिन्निसयसमन्नियाइं अक्कमिउं ।
विक्कमकालाओ तओ वलभीभंगो समुप्पन्नो ॥

यतः श्रीविक्रमात् ११४ वर्षैर्वज्रस्वामी, तदनु २३९ वर्षैः स्कान्दिलः, २२[5] वर्षैर्वलभीभङ्गः। एवं ३७५ । तथा विक्रमादनु ५१०—श्रीवीरमोक्षादनु ९८० वर्षैर्देवर्द्धिगणिभिर्ग्रन्थानुध्दृत्य[6] पुस्तकेषु लिखितः । तदा च तैः श्रीकल्पान्तर्लिखितम्—' समणस्स भगवओ महावीरस्स कालगयस्स० नववाससयाइं वइक्कंताइं दसमस्स वाससयस्स अयं असीइमे गच्छइ त्ति ।' ततः १३ वर्षैश्चतुर्थ्यां पर्युषणा पर्व । तदुक्तम्;

नवसय तेणउएहिं समइक्कंतेहिं वद्धमाणाओ ।
पज्जोसवणचउत्थी कालगसूरिहिं संठविया ॥

श्रीवीरमोक्षात् दशभिः शतैः पञ्चपञ्चाशदधिकैः (१०५५) श्रीहरिभद्रसूरेः स्वर्गः । उक्तं च—

पंचसए पणसीए विक्कमकालाओ झत्ति अत्थमिओ ।
हरिभद्दसूरिसूरो भवियाणं दिसउ कल्लाणं ॥

ततो जिनभद्रक्षमाश्रमणः ६५, पुण्यमित्रः ६० । स्वातिसूरिभिः ७५ वर्षैः पाक्षिकं चतुर्दश्यामानीतम्[7] । उक्तं च—

बारसवाससएसुं पन्नासहिएसु वद्धमाणाओ ।
चउदासि पढमपवेसो पकप्पिओ साइसूरीहिं ॥

---

1 विषक्षेपात्पूर्वे दीयमानां । 2 तादृग् । 3 ' अतः शिष्य ' इत्येवं पाठः । 4 २८ । 5 ३५३
6 देवर्द्धिगणिभिः पुस्तगेषु । 7 पाक्षिकं १४ आनीतं ।

Aho ! Shrutgyanam

पुष्यमित्रः क्वापि स्वातिसूरेः पश्चादुक्तोऽस्ति तच्चिन्त्यम्, गाथयासहामेलत्वात् ।[1]

तेरसवास सएसु वीराउ समइक्कन्तएसु सट्ठीय ।
सिरिबप्पभट्टीसूरी वीउमाण सिरोमणी जाओ ॥

मुख्यप्रतौ तु श्रीवीरात् १३०० वर्षैरित्यस्ति । एतदपि शोध्यं बहुश्रुतैः, यतस्तत्रैव स्वातेरनु सम्भूतयतिः ९०, माढरसम्भूतिगुप्तं ६०, ततो बप्पभाट्टिसूरिरित्युक्तमस्ति । अतो बहुश्रुताः प्रमाणम् ।

अथ, सुधर्म्मादीनां[2] पुष्यमित्रान्तानां क्रमेण गृहस्थपर्याय—सामान्ययतिपर्याय—युगप्रधानत्वपर्याय-सर्वायूंषि प्राह—

पंचास सोल तीसा वीसय पणवीस तह य [3]बायाला ।
पणयाल तीस तीसा तीसा चउवीस वीसा य ॥
बावीस चउद चउदासि-गवास पणतीस अह य बावीसा[4] ।
सतरस गिहि परियाओ, सामन्नजईण अह एवं ॥
तीसा वीसा चउ चत्ति गार चउवीस चत्त सत्तरसा[5] ।
चउवीस चत्त चउवीस दुतीस पणतीस अडवन्ना ॥
अड चत्ता चउ चत्ता पण चत्ता पन्न तह य चउ चत्ता ।
चालीस तीस, अह जुगपहाणवरिसे भणिस्सामि ॥
वीस चउ चत्तिगारस तेवीस वीस अट्ठ चउदस य[6] ।
पणयाल तीस छत्तालीसा चउ चत्त इगयाला ॥
अडतीसा छत्तीसा चउ चत्तिगयाल पनर छत्तीसा ।
तेरस वीसं, सव्वाउयं च एगं सयमसीई ॥
पणसीई बासट्ठी छासी नवई छहुत्तरी चेव ।
नवनवइ तओ तिण्हं एगसयं छन्नवइ चेव ॥
अट्ठारसुत्तरं सयमट्ठनवइ[7] दुगहिय सयं च नायव्वं ।
पणहिय सय सयमडसी पणहत्तरि तह य[8] सगसट्ठी ॥
तिन्नि पुण दुन्नि चउरो पंच य सग पण छ एग तह तिन्नि ।
दो पंच चउ ति सग सत्त सत्त य मासा कमेणुवरिं ॥*

तथा श्रीवीरमोक्षात् १६३९ विक्रमात् १२६९ वर्षैः श्रीविधिपक्षमुख्याभिधानं श्रीमदंचलगच्छं श्रीआर्यरक्षितसूरयः स्थापयामासुः ।

---

1 पश्चादुक्तः सचेति गाथायाः सह मेलत्वात । 2 सुमित्रादीनां । 3 तीसट्ठ वीसं बावीस तहय० । 4 पणतीस अट्ठ बावीसा । 5 चउदस य सत्त सत्तरसा । 6 तेवीसा पन्न अट्ठ चउदस य ।

7 अट्ठनवइ 8 तय० । * प्रत्यन्तरे एतादृशः पाठः—ति पण दुन्नि चउर पंच य सग पण पण छ इग तिन्नि दो पंच । चउ ति सग सत्त सत्त य सत्त मासा कमेणुवरिं ॥

Aho ! Shrutgyanam

श्रीवीरोपासकश्रेणिकपुत्र[1]कूणिकपुत्रोदायिनोऽ[2]नन्तरं[3] पाटलीपुत्रे नवनन्दै राज्यं कृतम् । तानुत्थाप्य[4] चाणिक्यश्चन्द्रगुप्त[5]भूपमस्थापयत् । तत्पुत्रो बिन्दुसारः, तत्पुत्रोऽशोकश्रीः; तत्पु०[6] कुणालः—अन्धः, तत्पुत्रः संप्रतिराज [7]उज्जयिन्यां जातः । तद्वंशे एव गर्दभिल्लो राजा; तदुच्छेदे शको राजा । तावता गर्दभिल्लस्यैव पुत्रो विक्रमादित्यः शकमुच्छेद्य तत्रैवोपविष्टः । तेन श्रीवीरमोक्षात् ४७० वर्षे[8] संवत्सरोऽङ्कितः ।

तदनु संवत् ८२१ वर्षे वैशाख सुदि[9] २ सोमे चाउडावंशोत्पन्नः श्रीवनराजः श्रीअणहिल्लपुरमस्थापयत्, तत्र वर्ष ६० वर्षाणि राज्यमभुक्त । तत्पुत्रेण योगराजेन वर्ष ९ राज्यं कृतम् । ततः संवत् ८९१ वर्षोपविष्टश्रीरत्नादित्येन वर्ष ३ राज्यं कृतम् । ततो वैरिसिंहस्य[10] राज्यं व० ११ । ततः सं० ९०५ उप० तत्सुतक्षेमराजस्य राज्यं वर्ष ३९ । ततः ९४४ वर्षोप० सुतचामुंडराजराज्यं[11] व० २७ । ततः सं० ९७१ वर्षोप० सुतघाघडस्य राज्यं व० २७ । ९९८ वर्षोप० सुतपूअडराज्यं[12] व० १९ । इत्थमेवं १०१७ । इत्थं चाउडावंशे अष्टभिः १९६ वर्ष राज्यं कृतम् ।

तदनु सं० १०१७ वर्षे चौलुक्यवंशोपविष्टस्य दौहित्र श्रीमूलराजस्य राज्यं व० ३५ । ततः सं० १०५२ वर्षोप० सुतवल्लभराजराज्यं व० १४ । ततः सं० १०६६ वर्षोप० भ्रातृदुर्लभराजराज्यं व० १२ । सं० १०७८ वर्षोप० भ्रातृनागिलसुतभीमदेवराज्यं ४२ । सं० ११२० वर्षोप० सुतश्रीकर्णदेवराज्यं व० ३० । सं० ११५० वर्षोप० सुतश्रीजयसिंहदेवराज्यं व० ४९ । सं० ११९९ वर्षे कार्तिकशुदि ३ निरुद्धं दिन ३ पादुकाराज्यम् । तत्रैव वर्षे मार्गशुदि ४ उपविष्ट भीमदेवसुत—खेमराजसुत—देवराजसुत—त्रिभुवनपालसुत—श्रीकुमारपालस्य सं० १२२९ पौष शुदि १२ निरुद्धं राज्यं व० ३, मास १, दिन ७ । ततः तस्यामेव तिथौ उपवि० भ्रातृमहिपालदेवसुत—अजयपालदेवस्य सं० १२३२ वर्षे फा० सु० १२ निरुद्धं राज्यं व० ३, मास २ । ततस्तदैव उपविष्टलघुमूलराजस्य सं० १२३४ चैत्र शुदि १४ निरुद्धं राज्यं वर्ष २, मास १ दिन २। ततस्तदैव उपविष्टश्रीभीमदेवराज्यम् ।

। इति राजावली ।

ततो गज्जनकराज्यम् । उक्तं च—

[1]हउं थप्पिय [2]वणराइ पढम कन्नउजि [3]चलंतीय । जासि[4] वाडिय जोगडिण रयणि [5]वइर वरकित्तीय । मन्निय [6]षीमडि अगाडि तह य भूयडि [7]जयवंतीय । मूलराइ चाउंमि(डि) वल्ल दुल्लहि णस इत्तिय ।
[8]भुय भीमि करणि जयसिंह पहु कुंअरि अजइ मूलु रमिय । सत्तंगलच्छि इणि भीमदेवि गज्जणवइ घरि [9]नीगामिय ॥

ततः श्रीवीरिधवलबन्धु श्रीवीसलदेव सं० १३०० वर्षे । ततः १३१८ श्रीअर्जुनदेवः । १३३१ सारंगदेवः । १३५३ लघुकर्णः । १३६० यवना माधवनागरविप्रेण [10]आनीताः ।

श्रीकुमारपालामात्यबाहडेन १२११ वर्षे २ [11]कोडि ९७ लक्ष कुमारपालप्रियव्ययेन कीरमयः प्रासादः पाषाणमयः कारितः । ततः १३११ यवनोपद्रवाज्जावडिबिम्बे गते सा० समराकेन नव्यबिम्बं स्थापितम् ।

[इति श्रीमेरुतुङ्गाचार्यविरचिता विचारश्रेणिः समाप्ता]

---

1 कोणिक- । 2 दायनो । 3 नवरं । 4 चाणाक्यं चन्द्र० । 5 गुप्तं । 6 तत्पुत्रोऽन्धः कूणालो । 7--राजा । 8 वर्षैः । 9 शुदि । 10 वैरसिंह- । 11 चामुंडराज्यम् । 12 सुतपूराज्यं । 1 हुं । 2 वणरायकन्नउजि । 3 चलंतीअ । 4 जसि वाय जोगडिण । 5 वइरडि वर । 6 वीमडि । 7 जयवंती । 8 भूय । 9 नीगमीअ । 10 नीताः । 11 वर्षे कोडि ।

Aho ! Shrutgyanam

॥ परिशिष्टम् ॥

[एकस्मिन् लिखितादर्शे विचारश्रेणिसमाप्त्यनन्तरं तत्सदृशाः केचन ग्रन्थान्तर्गता उल्लेखाः समुल्लिखिताः संप्राप्ता अस्माभिः । ते च सोपयोगित्वात् परिशिष्टरूपेण अधस्तात् समवतार्यते—**संपादकः** ।]

महागिरि–सुहस्ती च सूरिः श्रीगुणसुन्दरः । श्यामार्यः स्कन्दिलाचार्यो रेवतीमित्रसूरिराट् ॥
श्रीधर्मो भद्रगुप्तश्च श्रीगुप्तो वज्रसूरिराट् । युगप्रधानप्रवरा दशैते दशपूर्विणः ॥

वज्रस्वामिनो गृहवासे वर्ष ८; व्रतपर्याये वर्ष ४४; युगप्रधानत्वं व० ३६, सर्वायु व० ८८, मास७ दिन ७।

दस पुव्वा संपुण्णा वोच्छिण्णा सुरभवम्मि संपत्ते । वयरम्मि महासत्ते संघयणं अद्धनारायं ॥
पंच सएसुं वरिसाण अइगएसुं जिणाओ वीराओ । वयरो सोहग्गनिही सुनंदगब्भे समुप्पण्णो॥
दसपुव्वविच्छेओ वयरे संघयणमद्धनारायं । पंचहिं वाससएहिं चउरासीए समहिएहिं ॥

पंचसए पणसीए सूरी सिरिअज्जरक्खिआ जाया । वयरसामी वि आसी दसपुव्वधरो तइयकाले॥
तह अज्जरक्खियम्मि वोच्छिण्णा एत्थ सड्ढनवपुव्वा ।
कालक्कमेण हाणी दूसमसमयाणुसारेण ॥

पाठान्तरेण—**पुव्वगयं वोच्छिण्णं वाससहस्सेहिं वीराओ ॥**

थेरे अज्जवयरसेणिएत्ति

वज्रसेनस्य सौपारं नाम पत्तनमभ्यगात् । जिनदत्तप्रिया तत्रेश्वरीत्याख्या चतुस्सुताः ॥
दुर्भिक्षे जाते विषं वर्तयन्ती निषिद्धा ।

सुभिक्षं तत्क्षणं जज्ञे ततः सा सपरिच्छदा । अचिन्तयदहो मृत्युरभविष्यदरी ततः ॥
जीवितव्यफलं किं न गृह्यते संयमग्रहात् । वज्रसेनमुनेः पार्श्वे जैनबीजस्य सद्गुरोः ॥
ध्यात्वेति सा सपुत्राऽपि व्रतं जग्राह साग्रहम् । नागेन्द्रो निर्वृतिश्चन्द्रः श्रीमान् विद्याधरस्तथा ॥
अभूवंस्ते किञ्चिदूनदशपूर्वविदस्ततः । चत्वारोऽपि जिनाधीशमतोद्धारधुरंधराः ॥
अद्यापि गच्छास्तन्नाम्ना जयिनोऽवनिमण्डले । वर्तन्ते तत्र तीर्थे तन्मूर्तयोऽद्यापि साहणाः ॥

आदौ चत्वारो गणाः, एकस्मिन् एकस्मिन् गच्छे एकविंशतिः आचार्याः स्थापिताः, एवं क्रमेण श्रीवीरात् ६११ वर्षे ८४ गच्छाः संजाताः । श्रीवीरानिर्वाणात् ३३५ वर्षे कालकाचार्यः प्रथमः—उमास्वातिवाचकशिष्यः श्यामाचार्याऽपरनाम्ना प्रज्ञापनोपाङ्गकारकः । १ । श्रीवीरात् ४५३ वर्षे कालकाचार्यः सरस्वतीभ्राता गर्दभिल्लोच्छेदकारी । २ । वीरात् ३२० वर्षे कालकाचार्यः निगोदविचारकर्ता । ३ । वीरात् ९९३ वर्षे कालकाचार्यः श्रीपर्वकर्ता चातुर्थ्याम् । ४ । यतः—

सिरिवीरजिणिंदाओ वरिससया तिन्नि वीस (३२०) अहियाओ ।
कालयसूरी जाओ सक्को पडिबोहिओ जेण ॥ १ ॥
तह गद्दभिल्लरज्जस्स छेअगो कालगारिओ होही ।
तेवन्नचउसएहिं (४५३) गुणसयकलिओ पहाजुत्तो ॥ २ ॥

Aho ! Shrutgyanam

तेणऊयनवसएहिं (९९३) समइक्कंतेहिं वद्धमाणाओ ।
पज्जोसवण चउत्थी कालगसूरीहिं तो ठविआ ॥ ३ ॥

—दशाश्रुतस्कन्धचूर्णौ ।

निव्वाणरयणीओ चंडपज्जोअपट्टम्मि ।
उज्जेणीए जाओ पालयनामो महाराया ॥ १ ॥
सट्ठी ६० पालगरन्नो, पणवन्नसयं च १५५ होइ नंदाणं ।
अट्ठसयं मुरियाणं १०८, तसिञ्चिय पूसकमित्तस्स ॥ २ ॥
बलमित्त–भाणुमित्ता सट्ठी वासाण ६० चत्त नहवहणे ४० ।
तह गद्दभिल्लरज्जं तेरसवासे सगस्स चऊ ॥ ३ ॥
विक्कमरज्जारंभा परओ सिरिवीरनिव्वुई भणिया ।
सुन्न–मुणि–वेद (४१०) जुत्तो विक्कमकालाउ जिणकालो ॥ ४ ॥
विक्कमरज्जाणंतर तेरसवासेसु वच्छरपवित्ती ।
सिरिवीरमुक्खओ वा चउसयतेवीसवासाओ ॥

—तित्थुग्गालीप्रकीर्णके ॥

“ मह मोक्खगमणाओ पालय-नन्द-चंदगुत्ताइराईसु वोलीणेसु चउसयसत्तरिहिं वासेहिं विक्कमाइच्चो राया होही । तत्थ सट्ठी वरिसाणं पालयस्स रज्जं । पणपन्नसयं नंदाणं । अट्ठुत्तरसयं मोरियाणं । तीसं पूसमित्तस्स । सट्ठी बलमित्त–भाणुमित्ताणं । चालीसं नरवाहणस्स । तेरस गद्दभिल्लस्स । चत्तारि सगस्स । तओ विक्कमाइच्चो सो साहिअसुवण्णपुरिसो पुहविं अरिणं काउं नियसंवच्छरं पवत्तेही ॥ ”

—जिनप्रभकृत तीर्थकल्पग्रन्थे ।

तहा गद्दभिल्लस्स रज्जच्छेयगो कालगायरिओ ।
होही तेवण्णचउसएहिं गुणसयकलिओ सुओवउत्तो ॥

‘दिनतो मम मोक्षस्य गते वर्षशतत्रये । उज्जयिन्यां महापुर्यां भावी संप्रतिभूपतिः ॥ १०७ ॥
श्रीमदार्यसुहस्त्याह्व–सूरीणामुपदेशतः । जातिस्मरणमासाद्य जैनधर्मं विधास्यति’ ॥ १०८ ॥

—जिनसुन्दरसूरिकृते दीपालिकाकल्पे ।

अथ सप्तानिन्हवस्वरूपं व्यक्त्या लिख्यते—

श्रीवीरकेवलात् १४ वर्षैर्जमालिः “ कयमाणे कडे ” एतद्वचनोत्थापकः । १ ।
श्रीवीरकेव० १६ वर्षैः तिष्यगुप्तः—अन्त्यप्रदेशे जीवस्थापकः । २ ।
श्रीवीरनिर्वाणात् १२ वर्षैः श्रीगौतमनिर्वाणम् ।
वीरनि०२० व० सुधर्मगणधरनिर्वाणम् ।
श्रीवीरनि० ६४ व० जम्बूस्वामिनिर्वाणम् ।
श्रीवीरनि० ९८ वर्षैः श्रीप्रभवस्वामिस्वर्गः ।
श्रीवीरनि० ९८ व० शय्यंभवसूरि जिनप्रातिमा देखी प्रतिबोध पाम्या—दशवै० कर्ता ।
वीरनि० १०० व० श्रीयशोभद्रसूरिः ।

Aho ! Shrutgyanam

श्रीवीरनि० १७० व० भद्रबाहुस्वामी १० निर्युक्तिकर्ता ।
वीरनि० २१४ व० अव्यक्तवादी निह्नवः । ३ ।
वीरनि० २१५ व० स्थूलभद्रः १० पूर्वधरः श्रुतकेवली ।
वीरनि० २२० व० शून्यवादी निह्नवः । ४ ।
वीरनि० २२८ व० एकस्मिन् समये द्विक्रियावेदकः । ५ ।
वीरनि० ३३५ व० प्रथमः कालकाचार्यः निगोदविचारकर्ता—अविनीतशिष्यपरिहारकः ।
वीरनि० ४५३ व० द्वितीयः कालकाचार्यः सरस्वतीवालकः—गर्दभिल्लोच्छेदी ।
वीरनि० ४७० व० विक्रमादित्यः संवत्सरप्रवर्तकः ।
वीरनि० ५४४ वर्षैर्नोजीवस्थापकः राहेगुप्तः । ६ ।
वीरनि० ५८४ व० वज्रस्वामिस्वर्गमनम् ।
वीरनि० ५८४ व० गोष्टामाहिलनिह्निवः । ७ ।
वीरनि० ६०९ व० दिगम्बराः ।
वीरनि० ६२० व० नागेन्द्र—चन्द्र—निर्वृति—विद्याधर—शाखाचतुष्कं जातम् ।
वीरनि० ८८२ व० चैत्यवासी थया ।
वीरनि० ९८० व० सिद्धांत पुस्तकि चडिओ ।
वीरनि० ९९३ व० पञ्चमीतश्चतुर्थ्यां पर्युषणापर्व आनीतम् ।
श्रीगुणधरशिष्येण कालकाचार्येण चतुर्दश्यां चतुर्मासकं भावडरायगच्छे ।
वीरनि० १ सहस्रवर्षैः पूर्वश्रुतविच्छितिः सर्वथा ।
वीरनि० १००८ व० पौषधशालास्थितिः ।
वीरनि० १४६४ व० वृद्धगच्छात् ८४ गच्छाः ।
वीरनि० १६१४ वर्षैः खरतराः संजाताः ।
वीरनि० १६२९ व० पूर्णिमापक्षः ।
वीरनि० १६८४ आंचलीआ ।
वीरनि० १७५५ व० तपागच्छः ।
वीरनि० २०३२ व०लुंका जाताः ।
वीरनि० २०४० व० कटुकमतिनः ।
वीरनि० २०८० व० पार्श्वचन्द्रीयाः ।
वीरनि० २१२० व० ब्रह्मामतीयाः ।

॥ इति संवत्सराः मतोत्पत्तीनाम् ॥

Aho ! Shrutgyanam

|| ॐ अर्हम् ||

|| नमोऽस्तु श्रमणाय भगवते श्रीमहावीराय ||

यापनीय-यतिग्रामाग्रणिभदन्त-शाकटायनाचार्य-विरचितं

स्त्रीमुक्ति-केवलिभुक्ति-प्रकरणयुग्मम्

|| स्त्रीमुक्तिप्रकरणं ||

प्रणिपत्य भुक्तिमुक्तिप्रदममलं धर्ममर्हतो दिशतः ।
वक्ष्ये स्त्रीनिर्वाणं केवलिभुक्तिं च संक्षेपात् ॥ १ ॥

अस्ति स्त्रीनिर्वाणं पुंवत्, यदविकलहेतुकं स्त्रीषु ।
न विरुध्यति हि रत्नत्रयसंपद् निर्वृतेर्हेतुः ॥ २ ॥

रत्नत्रयं विरुद्धं स्त्रीत्वेन यथाऽमरादिभावेन ।
इति वाङ्मात्रं नात्र प्रमाणमाप्ताऽऽगमो ऽन्यद् वा ॥ ३ ॥

जानीते जिनवचनं, श्रद्धत्ते, चरति चाऽऽर्यिका शबलम् ।
नाऽस्याऽस्त्यसंभवोऽस्यां नाऽदृष्टविरोधगतिरस्ति ॥ ४ ॥

सप्तमपृथिवीगमनाद्यभावमन्यासमेव मन्यन्ते ।
निर्वाणाऽभावेनाऽपश्चिमतनवो न तां यान्ति ॥ ५ ॥

विषमगतयोऽप्यधस्ताद् उपरिष्टात् तुल्यमासहस्रारम् ।
गच्छन्ति च तिर्यञ्चस्तदधोगत्यूनताऽहेतुः ॥ ६ ॥

वाद-विकुर्वणत्वादिलब्धिविरहे श्रुते कनीयसि च ।
जिनकल्प-मनःपर्ययविरहेऽपि न सिद्धिविरहोऽस्ति ॥ ७ ॥

प्रतिगतपाठाः—१ विकुर्वाण

Aho ! Shrutgyanam

वादादिलब्ध्यभाववद् अभविष्यद यदि च सिद्ध्यभावोऽपि ।
तासामवारयिष्यद् यथैव जम्बूयुगादारात् ॥ ८ ॥
'स्त्री'ति च धर्मविरोधे प्रव्रज्यादोषविंशतौ 'स्त्री'ति ।
बालादिवद् वदेयुर्न 'गर्भिणी बालवत्से' ति ॥ ९ ॥
यदि वस्त्राद् अविमुक्तिः, त्यजेत तद्, अथ न कल्पते हातुम् ।
उत्सङ्गप्रतिलेखनवद्, अन्यथा देशको दूष्येत ॥ १० ॥
त्यागे सर्वत्यागो ग्रहणेऽल्पो दोष इत्युपादेशि ।
वस्त्रं गुरुणाऽऽर्याणां परिग्रहोऽपीति चुत्यादौ ॥ ११ ॥
यत् संयमोपकाराय वर्तते प्रोक्तमेतदुपकरणम् ।
धर्मस्य हि तत् साधनमतोऽन्यद् अधिकरणमाहाऽर्हन् ॥ १२ ॥
अस्तैन्यबाहिर(*अस्त्यैर्यैव्याहार) व्युत्सर्गविवेकैषणादिसमितीनाम् ।
उपदेशनमुपदेशो ह्युपधेरपरिग्रहत्वस्य ॥ १३ ॥
निर्ग्रन्था............शास्त्रे सर्वत्र नैव युज्येत ।
उपधेर्ग्रन्थत्वेऽस्याः पुमानपि तथा न निर्ग्रन्थः ॥ १४ ॥
संसक्तौ सत्यामपि चोदितयत्नेन परिहरन्त्यार्या ।
हिंसावती पुमानिव न जन्तुमालाकुले लोके ॥ १५ ॥
वस्त्रं विना न चरणं स्त्रीणामित्यर्हतोच्यत, विनाऽपि ।
पुंसामिति न्यवार्यत (नाऽवार्यत), तत्र स्थविरादिवद् मुक्तिम् (मुक्तिः) ॥१६॥
अर्शो-भगंदरादिषु गृहीतचीरो यतिर्न मुच्येत ।
उपसर्गे वा चीरे ग्दादिः संन्यस्यते चात्ते ॥ १७ ॥
उत्सङ्गमचेलत्वं नोच्येत तदन्यथा नरस्याऽपि ।
आचेलक्या(क्यं)योग्यायोग्याऽसिद्धेरदीक्ष्य इव ॥ १८ ॥
इति जिनकल्पादीनां युक्त्यङ्गानामयोग्य इति सिद्धेः ।
स्याद् अष्टवर्षजातादिरयोग्यो ऽदीक्षणीय इव ॥ १९ ॥
संवर-निर्झररूपो बहुप्रकारस्तपोविधिः शास्त्रे ।
योगचिकित्साविधिरिव कस्याऽपि कथंचिदुपकारी ॥२० ॥

१ उत्संगं । २ देसको । ३ ल्यो । ४ थेग्र । मुत्षंग ।
* ( ) एतच्चिह्नान्तर्गताः पाठाः संपादककल्पिताः ।

Aho ! Shrutgyanam

वस्त्राद् न मुक्तिविरहो भवतीत्युक्तं, समग्रमन्यच्च ।
रत्नत्रयाद् न वाऽन्यद् युक्त्यङ्गं शिष्यैते सद्भिः ॥ २१ ॥
प्रव्राजना निषिद्धा क्वचित्तु रत्नत्रयस्य योगेऽपि ।
धर्मस्य हानि-वृद्धी निरूपयद्भिर्विवृद्ध्यर्थम् ॥ २२ ॥
अप्रतिवन्ध्यत्वात् चेत् संयतवर्गेण नाऽऽर्यिकासिद्धिः ।
वन्द्यतां (वदन्तां) ता यदि ते, नोनत्वं कल्प्यते तासाम् ॥ २४ ॥
सन्त्यू[2]नापुरुषेभ्यस्ताः स्मारण-चारणादिकारिभ्यः ।
तीर्थकराऽऽकारिभ्यो न च जिनकल्पादेरिति गणधरादीनाम् ॥ २५ ॥
अर्हन् न वन्दते न तावताऽसिद्धिरङ्गगतेः ।
प्राप्ताऽन्यथा विमुक्तिः, स्थानं स्त्री-पुंसयोस्तुल्यम् ॥२६ ॥
आकृष्यते श्रिया स्त्री पुंसः सर्वत्र किं न तन्मुक्तौ ।
इत्यमुना क्षेप्यस्त्री-पुंसां सिद्धिः (सिद्धं) समप्ररुक्त्वम् ॥ २७ ॥
मायादिः पुरुषाणामपि देशाधि (द्वेषादि) प्रासिद्धै[3]भावश्च ।
षण्णां संस्थानानां तुल्यो वर्णत्रयस्यापि ॥ २८ ॥
' स्त्री 'नाम मन्दसत्त्वा [4]उत्सङ्गसमग्रता न तेनाऽत्र ।
तत् कथमनल्पवृत्तयः सन्ति हि शीलाम्बुधेर्वेला[5]ः ॥ २९ ॥
ब्राह्मी सुन्दर्याऽऽर्या राजीमती चन्दना गणधराऽन्या ।
अपि देव-मनुज-मो[6]हिताः विख्याताः शील-सत्त्वाभ्याम् ॥ ३० ॥
गार्हस्थ्येऽपि सुसत्त्वा विख्याता शीलवतितमा जगति ।
सीतादयै[7]ः कथं तास्तपसि विसत्त्वा विशीलाश्च ॥ ३१ ॥
संत्यज्य राज्यलक्ष्मीं पति-पुत्र-भ्रातृ-बन्धुसम्बन्धम् ।
पारिव्राज्यवहायाः किमसत्त्वं सत्यभामादेः ? ॥ ३२॥
महता पापेन स्त्री-मिथ्यात्वसहायकेन न सुदृष्टिम् ।
स्त्रीत्वं चिनोति, तद् न, तदङ्गे क्षपणेऽपि निर्मानम् ॥ ३३ ॥
अन्तःकोटीकोटीस्थितिकानि भवन्ति सर्व-कर्माणि ।
सम्यक्त्वलाभ एवाऽशे[8]षोऽप्यक्षयकरो मार्गः ॥३४ ॥

१ सिध्यते । २ सन्न्यूनाः । ३ द्वा । ४ मुत्संग । ५ वेलाः । ६ स्य हिताः । ७ शीता । ८ शेषा.

Aho ! Shrutgyanam

अष्टशतमेकसमये पुरुषाणामादिरागमः (माहुरागमे) सिद्धिः (सिद्धम्) ।
स्त्रीणां न मनुष्ययोगे गौणार्थो मुख्यहानिर्वा ॥३५ ॥
शब्दनिवेशनमर्थः प्रत्यासत्त्या क्वचित् कयाचिदतः ।
तदयोगे योगे सति शब्दस्याऽन्यः कथं कल्प्येः[१] ॥ ३६ ॥
स्तन-जघनादिव्यङ्ग्ये[३] 'स्त्री'शब्दोऽर्थे[४], न तं विहायैषः ।
दृष्टः क्वचिदन्यत्र त्वग्निर्माणवकवद् गौणः ॥ ३७ ॥
'आ षष्ठ्या स्त्री' त्यादौ स्तनादिभिस्त्री स्त्रिया इति च वेदः ।
स्त्रीवेद स्त्र्यनुबन्धास्तुल्यानां (बन्धः पल्यानां) शतपृथक्त्वोक्तिः ॥ ३८ ॥
न च पुंदेहे स्त्रीवेदोदयभावे प्रमाणमङ्गं च ।
भावः सिद्धौ पुंवत् पुंमां आपि (पुंसोऽपि) न सिध्यतो वेदः ॥ ३९ ॥
क्षपकश्रेण्यारोहे वेदेनोच्येत भूतपूर्वेण ।
'स्त्री'ति नितराममुख्ये मुख्येऽर्थे युज्यते नेतराम् ॥४० ॥
मनुषीषु मनुष्येषु च चतुर्दशगुणोक्तिरार्जि (र्यि)कासिद्धौ ।
भावस्तवोपरिक्षप्य··············नवस्थो नियत उपचारः ॥ ४१ ॥
पुंसि स्त्रियां, स्त्रियां पुंसि--अतश्च[६] तथा भवेद् विवाहादिः ।
यतिषु न संवासादिः स्यादगतौ निष्प्रमाणेष्टिः ॥ ४२ ॥
अनडुह्याऽनड्वाहीं[७] दृष्ट्वाऽनड्वाहमनडुहाऽऽरूढम्[८] ।
स्त्रीपुंसेतरवेदो वेद्यो नाऽनियमतो वृत्तेः ॥ ४३ ॥
नाम-तदिन्द्रियलब्धेरिन्द्रियनिवृत्तिमिक प्रमाद्यङ्गम् ।
वेदोदयाद् विरचयेद् इत्यतदङ्गेन तद्भेदः ॥ ४४ ॥
या पुंसि च प्रवृत्तिः, पुंसि स्त्रीवत्, स्त्रिया स्त्रियां च स्यात् ।
सा स्वकवेदात् तिर्यग्[९]वदलाभे मत्तकामिन्याः ॥ ४५
विगतानुवादनीतौ सुरकोपादिषु चतुर्दश गुणाः स्युः ।
नव मार्गणान्तर इति प्रोक्तं वेदे ऽन्यथा नीतिः ॥ ४५ ॥
न च बाधकं विमुक्तेः स्त्रीणा[१०]मनुशासकं प्रवचनं च ।
संभवति च मुख्येऽर्थे न गौण इत्यार्यिका सिद्धिः ॥४६ ॥

॥ इति स्त्रीनिर्वाणप्रकरणं समाप्तम् ॥

---

१ अमृ- । २ कल्प्याः । ३ व्यंगे । ४ ब्दा । ५ वह्नौणः । ६ त्तश्च । ७ अनदुगुह्याऽनद्वाहीं । ८ नद्वाहमनदूगुहा
९ तिर्यक् । १० अनुशोसकम् ।

Aho ! Shrutgyanam

॥ केवलिभुक्तिप्रकरणम् ॥

अस्ति च केवलिभुक्तिः समग्रहेतुर्यथा पुरा भुक्तेः ।
पर्याप्ति-वेद्य-तैजस-दीर्घायुष्कोदयो हेतुः ॥ १ ॥

नष्टानि न कर्माणि क्षुधो निमित्तं विरोधिनो न गुणाः ।
ज्ञानादयो जिने किं सा संसारस्थितिर्नास्ति ॥ २ ॥

तम इव भासो वृद्धौ ज्ञानादीनां न तारतम्येन ।
क्षुध् हीयतेऽत्र न च तद् ज्ञानादीनां विरोधगतिः ॥ ३ ॥

अविकलकारणभावे तदन्यभावे भवेदभावेन ।
इदमस्य विरोधीति ज्ञाने न तदस्ति केवलिनि ॥ ४ ॥

क्षुद् दुःखमनन्तसुखं विरोधे तस्येति चेत् कुतस्त्यं तत् ।
ज्ञानादिवन्न तज्जं विरोधि न परं ततो दृष्टम् ॥ ५ ॥

आहारविषयकाङ्क्षारूपा क्षुद् भवति भगवति विमोहे ।
कथमन्यरूपताऽस्या न लक्ष्यते येन जायेत ॥ ६ ॥

न क्षुद् विमोहपाको यत् प्रतिसंख्यानभावननिवर्त्या ।
न भवति विमोहपाकः सर्वोऽपि हि तेन विनिवर्त्यः ॥ ७ ॥

शीतोष्णवाततुल्या क्षुत् तत् तत्प्रतिविधानकाङ्क्षा तु ।
मूढस्य भवति मोहात् तथा भृशं बाध्यमानस्य ॥ ८ ॥

तैजससमूहकृतस्य द्रव्यस्याऽभ्यवहृतस्य पर्याप्त्या ।
अनुत्तरपरिणामे क्षुत् क्रमेण भगवति च तत् सर्वम् ॥ ९ ॥

ज्ञानावरणीयादेर्ज्ञानावरणादि कर्मणः कार्यम् ।
क्षुत् तद्विलक्षणाऽस्यां न तस्य सहकारिभावोऽपि ॥ १० ॥

प्रतिगतपाठाः—१ विरोधेनो । २ केचालिनि । ३ ·वाच । ४ वाध्यमानस्थ्य । ५ तैजसमूह ।

क्षुद्बाधिते 'न जाने, न चेक्ष' इत्यस्ति न तु विपर्यासः ।
तद् वेद्यं सहकारि तु, तस्य न तद् वेद्यसहकारि ॥ ११ ॥

ज्ञानावरणादीनामशेषविगमे[1] क्षुधि प्रजातायाम् ।
अपि तद् ज्ञानादीनां हानिः स्यादितरवत् तत्र ॥ १२ ॥

नष्टविपाका[2] क्षुदिति प्रतिपत्तौ भवति चागमाविरोधः ।
शीतोष्ण-क्षुद्-उदन्याऽऽदयो हि ननु वेदनीय इति ॥ १३ ॥

उदये[3] फलं न तस्मिन् उदीरणेत्यफलता न वेद्यस्य ।
नोदीरणा फलात्मा तथा भवेदायुरप्यफलम् ॥ १४ ॥

अनुदीर्णवेद्य इति चेद् न क्षुद् वीर्यं किमत्र नहि वीर्यम् ।
क्षुदभावे क्षुदभावेन स्थित्यै क्षुधि तनोर्विलयः ॥ १५ ॥

अपवर्तते कृतार्थं नायुर्ज्ञानादयो न हीयन्ते[4] ।
जगदुपकृतावनन्तं[5] वीर्यं किं गततृषो भुक्तिः ॥ १६ ॥

ज्ञानाद्यलयेऽपि जिने मोहेऽपि स्याद् क्षुद् उद्भवेद् भुक्तिः ।
वचन-गमनादिवच्च प्रयोजनं स्व-परसिद्धिः[6] स्यात् ॥ १७ ॥

ध्यानस्य समुच्छिन्नक्रियस्य चरमक्षणे गते सिद्धिः ।
सा नेदानीमस्ति स्वस्य परेषां च कर्तव्या ॥ १८ ॥

रत्नत्रयेण मुक्तिर्न विना तेनाऽस्ति चरमदेहस्य[7] ।
भुक्त्या तथा तनोः स्थितिरायुषि न त्वनपवर्त्येऽपि ॥ १९ ॥

आयुरिवाऽभ्यवहारो[8] जीवनहेतुर्विनाऽभ्यवहृतेः ।
चेत् तिष्ठत्वनन्तवीर्ये विनाऽयुषा कालमपि तिष्ठेत् ॥ २० ॥

न ज्ञानवदुपयोगो वीर्ये कर्मक्षयेण लब्धिस्तु ।
तत्राऽऽयुरिवाऽऽहारोऽपेक्ष्येत[9] न तत्र बाधोऽस्ति[10] ॥ २१ ॥

---

१ विगमा । २ नष्टविपाकः । ३ उदयं । ४ हीयन्ते । ५ न्तं । ६ द्धि । ७ स्या ८ । अत्यव्यवहारो । ९ -पेक्षेत्त । १० बाधा ।

मासं वर्षं वाऽपि च तानि शरीराणि तेन भुक्तेन ।
तिष्ठन्ति[1] न चाऽऽकालं नान्यथा[2] पूर्वमपि भुक्तिः ॥ २२ ॥
असति क्षुद्बाधे[3]ऽङ्गे लये न शक्तिक्षयो न संक्लेशः ।
आयुश्चानपवर्त्यं[4] बाध-लयौ प्रागवदधुनाऽपि ॥ २३ ॥
देशोनपूर्वकोटीविहरणमेवं सतीह केवलिनः ।
सूत्रोक्तमुपापादि न, मुक्तिश्च न नियतकाला स्यात् ॥ २४ ॥
अपवर्तहेत्वभावे[5]ऽनपवर्तनिमित्तसंपदायुष्कः[6] ।
स्याद् अनपवर्त इति तत् केवलिभुक्तिं समर्थयते ॥ २५ ॥
कायस्तथाविधोऽसौ जिनस्य यद्भोजनस्थितिरितीदम् ।
वाङ्मात्रं[7] नाऽत्रार्थे प्रमाणमाप्तागमोऽन्यद् वा ॥ २६ ॥
अस्वेदादि[8] प्रागपि सर्वाभिमुखादि तीर्थकरपुण्यात् ।
स्थितनखतादि सुरेभ्यो[9] न क्षुद् देहान्यता वाऽस्ति ॥ २७ ॥
भुक्तिर्दोषो[10] यदुपोष्यते, न दोषश्च भवति निर्दोषैः ।
इति निगदतो निषद्याऽर्हति न स्थान-योगादेः ॥२८ ॥
रोगादिवत् क्षुधो[11] न व्यभिचारो वेदनीयजन्मायाः ।
प्राणिनि "एकादश जिन" इति जिनसामान्यविषयं च ॥ २९ ॥
तद्हेतुकर्मभावात् परीषहोक्तिर्न जिन उपस्कार्यः ।
नश्वाऽभावासिद्धेरित्यादेर्न क्षुदादिगतिः ॥ ३० ॥
तैलक्षये न दीपो न जलागममन्तरेण[12] जलधारा ।
तिष्ठति[13] तथा तनोः स्थितिरपि न विनाऽऽहारयोगेन[14] ॥ ३१॥
परमावधेर्युक्तेस्य[15] छद्मस्थस्येव नान्तरायोऽपि ।
सर्वार्थदर्शनेऽपि स्याद् न चान्यथा पूर्वमपि भुक्तिः ॥ ३२ ॥
इन्द्रियविषयप्राप्तौ यदभिनिबोधप्रसञ्जनं[16] भुक्तौ ।
तच्छब्द-गन्ध-रूप-स्पर्शप्राप्त्या प्रतिव्यूढम् ॥ ३३ ॥

१ तिष्ठति । २ चान्यथा । ३ क्षुद्बाधेगे । ४ श्चातपवन्यं त्वाध- । ५ -वो । ६ ष्को । ७ मात्रां । ८ दिः.
९ सुरेत्यो । १० दोषो । ११ क्षु । १२ मत्तरेण । १३ -ष्ठ- । १४ विता । १५ यु- १६ -वो- ।

Aho ! Shrutgyanam

छद्मस्थे तीर्थकरे विष्वणनानन्तरं च केवलिनि ।
चित्तामलप्रवृत्तौ व्यासैवाऽत्रापि भुक्तवति ॥ ३४ ॥

विग्रहगतिमापन्नाद्यागमवचनं च सर्वमेतास्मिन् ।
भुक्तिं ब्रवीति तस्माद् द्रष्टव्या केवलिनि भुक्तिः ॥ ३५ ॥

नाऽनाभोगाहारः सोऽपि[१] विशेषितो नाऽभूत् ।
युक्त्याऽभेदे नाङ्गास्थिति-पुष्टि-क्षुच्छमास्तेन ॥ ३६ ॥

तस्य विशिष्टस्य स्थितिरभविष्यत् तेन सा विशिष्टेन ।
यद्यभविष्यदिहैषां [२]शाली-तरभोजनेनेव ॥ ३७ ॥

॥ इति केवलीभुक्तिप्रकरणं ॥

॥ इति स्त्रीनिर्वाण[३]-केवलीयँ[४]भुक्ति-प्रकरणम् ॥
॥ कृतिरियं भगवदाचार्य-शाकटायनभदन्तँ[५]पादानामिति ॥

---

१ सो । २ साली- । ३ श्रीनिर्वाण । ४ केवलीर्य । ५ कृदन्त-

Aho ! Shrutgyanam

॥ णमो समणस्स भगवओ महावीरस्स ॥

सिरि-जिणभद्द-खमासमण-विरइओ

जी य क प्पो

कय-पवयण-प्पणामो वोच्छं पच्छित्तदाण-संखेवं ।
जीयव्ववहार-गयं जीवस्स विसोहणं परमं ॥ १ ॥
संवर-विणिज्जराओ मोक्खस्स पहो, तवो पहो तासिं ।
तवसो य पहाणंगं पच्छित्तं, जं च नाणस्स ॥ २ ॥
सारो चरणं, तस्स वि नेव्वाणं, चरण-सोहणत्थं च ।
पच्छित्तं, तेण तयं नेयं मोक्खत्थिणा'वस्सं ॥ ३ ॥
तं दसविहः—मालोयण १ पडिकमणोभय २-३ विवेग ४ वोस्सग्गे ५ ।
तव ६ छेय ७ मूल ८ अणवट्ठया ९ य पारञ्चिए १० चेव ॥ ४ ॥
१ करणिज्जा जे जोगा तेसु'वउत्तस्स निरइयारस्स ।
छउमत्थस्स विसोही जइणो आलोयणा भणिया ॥ ५ ॥
आहाराई-गहणे तह बहिया निग्गमेसु'णेगेसु ।
उच्चार-विहारावणि-चेइय-जइ-वन्दणा'ईसु ॥ ६ ॥
जं च'न्नं करणिज्जं जइणो हत्थ-सय-बाहिरायरियं ।
अवियडियम्मि असुद्धो, आलोएन्तो तयं सुद्धो ॥ ७ ॥
कारण-विणिग्गयस्स य स-गणाओ पर-गणा'गयस्स वि य ।
उवसंपया-विहारे आलोयणं अणइयारस्स ॥ ८ ॥
२ गुत्ती-समिइ-पमाए गुरुणो आसायणा विणय-भंगे ।
इच्छाईणमकरणे लहुस मुसा'दिन्न-मुच्छासु ॥ ९ ॥
अविहीय कासि-जंभिय-खुय-वायासंकिलिट्ठ-कम्मेसु ।
कन्दप्प-हास-विकहा-कसाय-विसयाणुसंगे य ॥१०॥
खलियस्स य सव्वत्थ वि हिंसमणावज्जओ जयन्तस्स ।
सहसा'णाभोगेण व मिच्छक्कारो पडिक्कमणं ॥ ११ ॥
आभोगेण वि तणुएसु नेह-भय-सोग-बाउसाईसु ।
कन्दप्प-हास-विकहा'इए य नेयं पडिक्कमणं ॥ १२ ॥
३ संभम-भया'उरा'वइ सहस अणाभोग'णप्प-वसओ वा ।
सव्व-व्वयाइयारे तदुभयमासंकिए चेव ॥ १३ ॥
दुच्चिन्तिय दुब्भासिय दुच्चेट्ठिय एवमाइयं बहुसो ।

Aho ! Shrutgyanam

उवउत्तो वि न जाणइ जं देवसियाइ-अइयारं ॥ १४ ॥
सव्वेसु वि बीय-पए दंसण-नाण-चरणावराहेसु ।
आउत्तस्स तदुभयं सहसक्कारा'इणा चेव ॥ १५ ॥
४ पिण्डोवहि-सेज्जाई गहियं कडजोगिणोवउत्तेणं ।
पच्छा नायमसुद्धं, सुद्धो विहिणा विगिञ्चन्तो ॥ १६ ॥
काल'द्धाणाइच्छियं अणुग्गयत्थमिय-गहियमसढो उ ।
कारण-गहि'उव्वरियं भत्ताइ विगिञ्चियं सुद्धो ॥ १७ ॥
५ गमणागमण-विहारे सुयम्मि सावज्ज-सुविणयाइसु य ।
नावा-नइ-सन्तारे पायच्छित्तं विउस्सग्गो ॥ १८ ॥
भत्ते पाणे सयणासणे अरहन्त-समण-सेज्जासु ।
उच्चारे पासवणे पणुवीसं होन्ति ऊसासा ॥ १९ ॥
हत्थ-सय-बाहिराओ गमणा'गमणा'इएसु पणुवीसं ।
पाणवहाई-सुमिणे सय'मट्ठसयं चउत्थम्मि ॥ २० ॥
देसिय राइय पक्खिय चाउम्मास वरिसेसु परिमाणं ।
सयमद्धं तिन्नि सया पंच-सयट्ठुत्तरसहस्सं ॥ २१ ॥
उद्देस-समुद्देसे सत्तावीसं अणुन्नवणियाए ।
अट्ठेव य ऊसासा पट्ठवण-पडिक्कमण-माई ॥ २२ ॥
६ १ उद्देस'ज्झयण-सुयक्खन्धंगेसु कमसो पमाइस्स ।
कालाइक्कमणाइसु नाणायाराइयारेसु ॥ २३ ॥
निव्विगइय पुरिमड्ढे'गभत्तमायंबिलं चणागाढे ।
पुरिमाई खमणन्तं आगाढे, एवमत्थे वि ॥ २४ ॥
सामन्नं पुण सुत्ते मय'मायामं चउत्थम'त्थम्मि ।
अप्पत्तापत्तावत्त वायणुद्दे'सणा'इसु य ॥ २५ ॥
कालाविसज्जणा'इसु मण्डालि-वसुहा-'पमज्जणा'इसु य ।
निव्विइयं अ-करणे, अक्ख-निसेज्जा य'भत्तट्ठो ॥ २६ ॥
आगाढ-मणागाढे सव्व-भंगे य देस-भंगे य ।
जोगे छट्ठ-चउत्थं चउत्थ'मायम्बिलं कमसो ॥ २७ ॥
२ संका'इएसु देसे खमणं मिच्छोववूहणाए य ।
पुरिमाई खमणन्तं भिक्खु-प्पभिईण व चउण्हं ॥ २८ ॥
एवं चिय पत्तेयं उववूहाईणमकरण जईण ।
आयामन्तं निव्वीयगाइ पासत्थ-सड्ढेसु ॥ २९ ॥
परिवाराइ-निमित्तं ममत्त-परिपालणाएँ वच्छल्ले ।
साहम्मिओ त्ति संजम-हेउं वा सव्वहिं सुद्धो ॥ ३० ॥
३ एगिन्दियाण घट्टण'मगाढ-गाढ-परियावणुद्दवणे ।
निव्वीयं पुरिमड्ढं आसण'मायामगं कमसो ॥ ३१ ॥
पुरिमाई खमणन्तं अणन्त-विगलिन्दियाण पत्तेयं ।
पञ्चिन्दियम्मि एगासणाइ कल्लाणग'मट्ठे'गं ॥ ३२ ॥
मोसाइसु मेहुण-वज्जिएसु दव्वाइ-वत्थु-भिन्नेसु ।

Aho ! Shrutgyanam

हीणे मज्झु'क्कोसे आसण'मायाम-खमणाइं ॥ ३३ ॥
लेवाडग-परिवासे'भत्तट्ठो सुक्क-सन्निहीए य ।
इयरीए छट्ठ-भत्तं, अट्ठमगं सेस निसिभत्ते ॥ ३४ ॥
1 उद्देसिय चरिम-तिगे कम्मे पासण्ड स-घर मीसे य ।
बायर-पाहुडियाए सपच्चवायाहडे लोभे ॥ ३५ ॥
अइरं अणन्त निक्खित्त पिहिय साहरिय मीसियाईसु ।
संजोग स-इंगाले दुविह-निमित्ते य खमणं तु ॥ ३६ ॥
२ कम्मुद्देसिय-मीसे धायाइ-पगासणाइएसुं च ।
पुर-पच्छकम्म कुच्छिय संसत्तालित्त-कर-मत्ते ॥ ३७ ॥
अइरं परित्त निक्खित्त पिहिय साहरिय मीसियाईसु ।
अइमाण-धूम-कारण विवज्जए विहिय'मायामं ॥ ३८ ॥
३ अज्झोयर कड पूइय माया'णन्ते परंपरगए य ।
मीसाणन्ताणन्तरगया'इए चे'गमासणयं ॥ ३९ ॥
४ ओह-विभागुद्देसोवगरण पूईय ठविय पागडिए ।
लो'उत्तर परियट्टिय पमेय परभावकीए य ॥ ४० ॥
सग्गामा'हड दद्दर जहन्न मालोहडे झरे पढमे ।
सुहुम-तिगिच्छा संथव तिग मक्खिय दायगो वहए ॥ ४१ ॥
पत्तेय परंपर ठविय पिहिय मीसे अणन्तराईसु
पुरिमड्ढं, संकाए जं संकइ तं समावज्जे ॥ ४२ ॥
५ इत्तर ठवियग सुहुम ससणिद्ध ससरक्ख मक्खिए चेव ।
मीस परंपर ठवियाइएसु बीएसु निव्विगई ॥ ४३ ॥
सहसा'णाभोगेणं जेसु पडिक्कमण'माहियं तेसु ।
आभोगओ'इबहुसो अइप्पमाणे य निव्विगई ॥ ४४ ॥
धावण डेवण संघरिस-गमण किड्डा कुहावणाईसु ।
उक्कुट्ठि गीय छेलिय जीवरुयाईसु य चउत्थं ॥ ४५ ॥
तिविहोवहिणो विच्चुय-विस्संरियापेहियानिवेयणए ।
निव्विइयं पुरिमे'गासणाइ, सव्वम्मि चा'यामं ॥ ४६ ॥
हारिय-धो'-उग्गमियानिवेयणादिन्न-भोग-दाणेसु ।
आसण'मायाम-चउत्थगाइ, सव्वम्मि छट्ठं तु ॥ ४७ ॥
मुहणन्तय रयहरणे फिडिए निव्वीइयं चउत्थं च ।
नासिय हारविए वा जपिण चउत्थ-छट्ठाई ॥ ४८ ॥
काल'द्धाणाईए निव्विइयं खमणमेव परिभोगे ।
अविहि-विगिञ्चणियाए भत्ताईणं तु पुरिमड्ढं ॥ ४९ ॥
पाणस्सासंवरणे भूमितिगापेहणे य निव्विगई ।
सव्वस्सासंवरणे अगहण भंगे य पुरिमड्ढं ॥ ५० ॥
एयं चिय सामन्नं नवपडिमा'भिग्गहाइयाणं पि ।
निव्वीयगाइ पक्खिय-पुरिसाइ-विभागओ नेयं ॥ ५१ ॥
फिडिए सयमुस्सारिय भग्गे वे'गाइ वन्दणुस्सग्गे ।

Aho ! Shrutgyanam

निव्वीइय-पुरिमे'गासणाइ, सव्वेसु चायामं ॥ ५२ ॥
अकएसुं पुरिमा'सणमायामं, सव्वसो चउत्थं च ।
पुव्वमपेहिय थण्डिल निसि वोसिरणे दिवा सुवणे ॥ ५३ ॥
कोहे बहुदेवसिए आसव-कक्कोलगाइएसुं च ।
लहसुणाइसु पुरिमड्ढं, तन्नाई-वंच-मुयणे य ॥ ५४ ॥
अज्झुसिर-तणेसु निव्वीइयं तु, सेस-पणएसु पुरिमड्ढं ।
अप्पडिलेहिय-पणए आसणयं तस-वहे जं च ॥ ५५ ॥
ठवणमणापुच्छाए निव्विसणे विरिय-गूहणाए य ।
जीएणे'क्कासणयं, सेसिय-मायासु खमणं तु ॥ ५६ ॥
दप्पेणं पञ्चिन्दिय-वोरमणे संकिलिट्ठ-कम्मे य ।
दीह'द्धा'णासेविय गिलाण-कप्पावसाणे य ॥ ५७ ॥
सव्वोवहि-कप्पम्मि य पुरिमत्ता'पेहणे य चरमाए ।
चाउम्मासे वरिसे य सोहणं पञ्च-कल्लाणं ॥ ५८ ॥
छेयाइमसद्दहओ मिउणो परियाय-गव्वियस्स वि य ।
छेयाईए वि तवो जीएण गणाहिवइणो य ॥ ५९ ॥
जं जं न भणियमिहइं तस्सावत्तीय दाण-संखेवं ।
भिन्नाइयाय वोच्छं छम्मासन्ताण जीएणं ॥ ६० ॥
भिन्नो अविसिट्ठो च्चिय मासो चउरो य छच्च लहु-गुरुया ।
निव्वीइगाइ अट्ठमभत्तन्तं दाणमेएसिं ॥ ६१ ॥
इय सव्वावत्तीओ तवसो नाउं जह-क्कमं समए ।
जीएण देज्ज निव्वीइगाइ-दाणं जहाभिहियं ॥ ६२ ॥
एयं पुण सव्वं चिय पायं सामन्नओ विणिद्दिट्ठं ।
दाणं विभागओ पुण दव्वाइ-विसेसियं जाण ॥ ६३ ॥
दव्वं १ खेत्तं २ कालं ३ भावं ४ पुरिस ५ पडिसेवणाओ ६ य ।
नाउमियं चिय देज्जा तम्मत्तं हीणमहियं वा ॥ ६४ ॥
१ आहाराई-दव्वं बलियं सुलभं च नाउमहियं पि ।
देज्जा हि, दुब्बलं दुल्लभं च नाऊण हीणं पि ॥ ६५ ॥
२ लुक्खं सीयल साहारणं च खेत्त'महियं पि सीयम्मि ।
लुक्खम्मि हीणतरयं; ३ एवं काले वि तिविहम्मि ॥ ६६ ॥
गिम्ह-सिसिर-वासासुं देज्ज'ट्ठम-दसम-बारसन्ताई ।
नाउं विहिणा नवविह-सुयववहारोवएसेणं ॥ ६७ ॥
४ हट्ठ-गिलाणा भावम्मि; देज्ज हट्ठस्स, न उ गिलाणस्स ।
जावइयं वा विसहइ तं देज्ज, सहेज्ज वा कालं ॥ ६८ ॥
५ पुरिसा गीया'गीया सहा'सहा तह सढा'सढा केइ ।
परिणामा'परिणामा अइपरिणामा य वत्थूणं ॥ ६९ ॥
तह थिर-संघयणोभय-संपन्ना तदुभएण हीणा य ।
आय-परोभय-नोभयतरगा तह अन्नतरगा य ॥ ७० ॥
कप्पट्ठियादओ वि य चउरो जे सेयरा समक्खाया ।

Aho ! Shrutgyanam

सावेक्खेयर-भेयाद्ओ वि जे ताण पुरिसाणं ॥ ७१ ॥
जो जह-सत्तो बहुतर-गुणो व्व तस्साहियं पि देज्जा हि ।
हीणस्स हीणतरगं, झोसेज्ज व सव्व-हीणस्स ॥ ७२ ॥
एत्थ पुण बहुतरा भिक्खुणो त्ति अकयकरणा'णभिगया य ।
जन्तेण जीय अट्ठमभत्तन्ते निव्वियाईयं ॥ ७३ ॥
६ आउट्टियाय दप्प-प्पमाय-कप्पेहि वा निसेवेज्जा ।
दव्वं खेत्तं कालं भावं वा सेवओ पुरिसो ॥ ७४ ॥
जं जीय-दाणमुत्तं एयं पायं पमायसहियस्स ।
एत्तो च्चिय ठाणन्तरमेगं वड्ढेज्ज दप्पवओ ॥ ७५ ॥
आउट्टियाएँ ठाणन्तरं च, सट्ठाणमेव वा देज्जा ।
कप्पेण पडिक्कमणं तदुभयमहवा विणिद्दिट्ठं ॥ ७६ ॥
आलोयण-कालम्मि वि संकेस-विसोहि-भावओ नाउं ।
हीणं वा अहियं वा तम्मत्तं वा वि देज्जा हि ॥ ७७ ॥
इति दव्वाइ-बहु-गुणे गुरु-सेवाए य बहुत्तरं देज्जा ।
हीणतरे हीणतरं, हीणतरे जाव झोस त्ति ॥ ७८ ॥
झोसिज्जइ सुबहुं पि हु जीएण'न्नं तवारिहं वहओ ।
वेयावच्चकरस्स य दिज्जइ साणुग्गहतरं वा ॥ ७९ ॥
७ तव-गव्विओ तवस्स य असमत्थो तवमसद्दहन्तो य ।
तवसा य जो न दम्मइ अइपरिणामप्पसंगी य ॥ ८० ॥
सुबहु'त्तर-गुण-भंसी छेयावत्तिसु पसज्जमाणो य ।
पासत्थाई जो वि य जईण पडितप्पिओ बहुसो ॥ ८१ ॥
उक्कोसं तव-भूमिं समईओ सावसेस चरणो य ।
छेयं पणगाईयं पावइ जा चरइ परियाओ ॥ ८२ ॥
८ आउट्टियाएँ पञ्चिन्दिय-घाए, मेहुणे य दप्पेण ।
सेसेसु'क्कोसाभिक्ख-सेवणाईसु तीसुं पि ॥ ८३ ॥
तवगव्वियाइएसु य मूलुत्तर-दोस-वइयर-गएसु ।
दंसण-चरित्तवन्ते चियत्त-किच्चे य सेहे य ॥ ८४ ॥
अच्चन्तोसन्नेसु य परलिंग-दुवे य मूलकम्मे य ।
भिक्खुम्मि य विहिय-तवे'णवट्ठ-पारञ्चियं पत्ते ॥ ८५ ॥
छेएणं परियाए'णवट्ठ-पारञ्चियावसाणेसु ।
मूलं मूलावत्तिसु बहुसो य पसज्जणे भणियं ॥ ८६ ॥
९ उक्कोसं बहुसो वा पउट्ठ-चित्तो व्व तेणियं कुणइ ।
पहरइ य जो स-पक्खे निरवेक्खो घोर-परिणामो ॥ ८७ ॥
अभिसेओ सव्वेसु वि बहुसो पारञ्चियावराहेसु ।
अणवट्ठप्पावत्तिसु पसज्जमाणो य'णेगासु ॥ ८८ ॥
कीरइ अणवट्ठप्पो, सो लिंग १. क्खेत्त २. कालओ ३. तवओ ४. ।
१. लिंगेण दव्व भावे भणिओ पव्वावणाणरिहो ॥ ८९ ॥
अप्पडिविरओ'सन्नो न भावलिंगारिहो'णवट्ठप्पो ।
२. जो जेण जत्थ दूसइ पडिसिद्धो तत्थ सो खेत्ते ॥ ९० ॥

Aho ! Shrutgyanam

३. जत्तिय-मेत्तं कालं; ४. तवसा उ जहन्नएण छम्मासा।
संवच्छरमुक्कोसं आसाई जो जिणाईणं ॥ ९१ ॥
वासं बारस वासा पडिसेवी, कारणे य सव्वो वि।
थोवं थोवतरं वा वहेज्ज, मुच्चेज्ज वा सव्वं ॥ ९२ ॥
वन्दइ न य वन्दिज्जइ, परिहार-तवं सुदुच्चरं चरइ।
संवासो से कप्पइ, ना'लवणाईणि सेसाण ॥ ९३ ॥
तित्थगर पवयण सुयं आयरियं गणहरं महिड्ढीयं।
आसायन्तो बहुसो आभिणिवेसेण पारंची ॥ ९४ ॥
जो य स-लिंगे दुट्ठो कसाय-लिंगेहि राय वहओ य।
राय'ग्गमहिसि-पडिसेवओ य बहुसो पगासो य ॥ ९५ ॥
थीणद्धि-महादोसो अन्नो'न्नासेवणापसत्तो य।
चरिमट्ठाणावत्तिसु बहुसो य पसज्जए जो उ ॥ ९६ ॥
सो कीरइ पारञ्ची लिंगओ १. खेत्त २. कालओ ३. तवओ ४.।
१. संपागड-पडिसेवी लिंगाओ थीणगिद्धी य ॥ ९७ ॥
२. वसहि-निवेसण वाडग साहि निओय पुर देस रज्जाओ।
खेत्ताओ पारञ्ची कुल-गण-संघा'लयाओ वा ॥ ९८ ॥
जत्थु'प्पन्नो दोसो उप्पज्जिस्सइ य जत्थ नाऊणं।
तत्तो तत्तो कीरइ खेत्ताओ खेत्त-पारञ्ची ॥ ९९ ॥
३. जत्तिय-मेत्तं कालं; ४. तवसा पारञ्चियस्स उ स एव।
कालो दु-विकप्पस्स वि अणवट्ठप्पस्स जो'भिहिओ ॥ १०० ॥
एगागी खेत्त-बहिं कुणइ तवं सु-विउलं महासत्तो।
अवलोयणमायरिओ पइ-दिणमेगो कुणइ तस्स ॥ १०१ ॥
अणवट्ठप्पो तवसा तव-पारञ्ची य दो वि विच्छिन्ना।
चोद्दस-पुव्वधरम्मी, धरन्ति सेसा सया कालं ॥ १०२ ॥
इय एस जीयकप्पो समासओ सुविहियाणुकम्पाए।
कहिओ, देओ सो पुण पत्तेसु परिच्छिय-गुणेसु ॥ १०३ ॥

॥ इय सिरि-जिणभद्द-खमासमण-विरइओ जीय०ववहार-कप्पो समत्तो ॥

Aho ! Shrutgyanam

पाली, प्राकृत, संस्कृत, गुजराती, हिन्दी भाषानां

केटलांक उत्तम पुस्तको

१ प्राकृत कथासंग्रह. सं० मुनि जिनविजय (पुरातत्त्वमन्दिर ग्रंथावली)		०-१४-०
२ पाली पाठावली	,, ,, ,,	०-१२-०
३. कुमार पाल प्रतिबोध (प्राकृत ऐतिहासिक ग्रंथ, गायकवाड सीरीझ)	,,	७-८-०
४. हरिभद्राचार्यस्य समयनिर्णयः (जै. सा. सं. ग्रंथमाळा)		०-४-०
५. प्राकृत व्याकरण संक्षिप्त परिचय	,, ,,	०-४-०
६, सुपासनाह चरियं (प्राकृत भाषानो महान् चरित्रग्रंथ)		७-८-०
७. सुरसुन्दरी चरियं (प्राकृत भाषामां एक सुंदर कथा)		२-८-०
८. उपकेश गच्छीय पट्टावली (संस्कृत)		०-४-०
९. गुणस्थानक्रमारोह (हिन्दी भाषान्तर-विस्तृत विवेचन)		१-४-०
१०. परिशिष्ट पर्व (हिन्दी भाषामां उत्तम भाषांतर)		१-४-०
११. छेदसूत्राणि (आमां कल्प-व्यवहार-निशीथ नामना त्रण छेदसूत्रो बहु शुद्ध अने उत्तम पद्धतीए छपावेलां छे. जे अत्यंत दुर्लभ छे घणी थोडी नकलो छपावेली छे)		२-८-०
१२. आचारांगसूत्र, मूल, प्रथमश्रुतस्कन्ध (जर्मनीना एक प्रख्यात संशोधक विद्वाने बहु परिश्रमपूर्वक तैयार करेलो अतिशुद्ध मूल पाठ-पाठान्तर अने शब्दकोष सहित.		१-८-०
१३. साधुशिक्षा (सुन्दर हिन्दी भाषांतर)	....	०-८-०
१४ जैन धर्मनुं अहिंसातत्त्व (तात्त्विक विवेचन)		०-४-०
१५. सुखी जीवन (वांचवा लायक शांतिप्रद सुंदर गुजराती पुस्तक)		१-०-०
१६. नयकर्णिका (नयसंबंधी उत्तम गुजराती विवेचन)		०-६-०

प्राप्तिस्थानः—

व्यवस्थापक—भारत जैन विद्यालय,

पूना सिटी (दक्षिण).

Aho ! Shrutgyanam

जैन साहित्य संशोधक कार्यालय

[सहायक-सज्जन]

संरक्षक.

श्रीयुत सेठ हरगोविंददास रामजी, मुलुंद (मुंबई).

पेट्रन

श्रीयुत हीरालाल अमृतलाल शाह. बी. ए. मुंबई.

वाईस-पेट्रन.

श्रीयुत केशवलाल प्रेमचंद मोदी. बी. ए. एल्एल् बी. वकील अमदाबाद.
श्रीयुत अमरचंद घेलाभाई गांधी, मुंबई.
श्रीयुत सेठ चिरंजीलालजी बडजात्या वर्धा (सी. पी.)

सहायकर्ता.

शेठ परमानंददास रतनजी, मुंबई.
सद्गत श्रीयुत मनसुखलाल रवजीभाई मेहता, मुंबई.
शेठ कांतिलाल गगलभाई हाथीभाई, पूना.
शेठ केशवलाल मणीलाल शाह, पूना.
शेठ बाबूलाल नानचंद भगवानदास झवेरी, पूना.

आजीवन-सभासद.

श्रीयुत बाबू राजकुमार सिंहजी बद्रीदासजी, कलकत्ता.
श्रीयुत बाबू पूरणचंद्रजी नाहार. एम्. ए. एल्एल्. बी. कलकत्ता.
शेठ लालभाई कल्याणभाई झवेरी, बडोदरा; मुंबई.
शेठ नरोत्तमदास भाणजी, मुंबई.
शेठ दामोदरदास त्रिभुवनदास भाणजी, मुंबई.
श्री त्रिभुवनदास-भाणजी जैन कन्याशाला, भावनगर.
शेठ केशवजीभाई माणेकचंद, मुंबई.
शेठ देवकरणभाई मूळजीभाई, मुंबई.
शेठ गुलाबचंद देवचंद झवेरी, मुंबई.
श्रीयुत मोतीचंद गिरधरलाल कापडिया, बी. ए. एल्एल् बी. सोलीसीटर, मुंबई.
श्रीयुत केसरी चंदजी भंडारी, इंदोर.
शाह अमृतलाल एण्ड भगवानदास कुं० मुंबई.
शाह चंदुलाल वीरचंद कृष्णाजी, पूना.
शेठ लाधाजी मोतीलाल, पूना
शाह धनजीभाई वखतचंद, साणंदवाळा, (अमदावाद)
शाह बालुभाई शामचंद, तळेगांव (ढमढेरे).
शाह चुनीलाल झवेरचंद, मुंबई.
श्रीयुत जीवराज नरसी मैसरी, मुंबई.
श्रीयुत मोहनलाल दलीचंद देशाई, बी. ए. एल्एल्. बी. मुंबई.

Aho ! Shrutgyanam